Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

साधनाके गृहमें

प्रथम खण्ड

9/60 A

श्री श्रीबाबा नरेन्द्रनाथ ब्रह्मचारीजी
प्रणीत

बंगला-साधनार गृहेका अनुवाद

अनुवादक
पंडित श्रीकाशीनाथझा, विद्यालंकार,
प्रधानाचार्य
रानी चन्द्रावती श्यामा महाविद्यालय,
वाराणसी

मूल्य ३-५०
सजिल्द ४-२५

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

9|60A

इस पुस्तकके लिखनेका उद्देश्य—

"साधनार गृहे" नामकी बंगला पुस्तक पहले पहल १३३४ सालमें प्रकाशित हुई थी। उस समय हमारा वयस २३–२४ वर्षका था। उसका द्वितीय संस्करण परिवर्त्तित और परिवर्द्धित रूपमें ७ वैशाख सन् १३५२ (बंगला) में प्रकाशित हुआ। यह तृतीय संस्करण और भी परिवर्त्तित और परिवार्द्धितकर प्रकाशित किया गया है। पुस्तकका आकार बहुत बड़ा हो जानेकी आशंकासे अभी प्रथम खण्ड ही प्रकाशित हुआ। द्वितीय खण्ड पीछे प्रकाशित होगा। श्री श्री गुरुदेव साधनाकी बाते हमें लिख रखनेके लिये कहे थे इसी साधना एवं अनुभवकी बातें ही इस ग्रन्थमें विशेष हैं। प्रथम और द्वितीय संस्करणमें जो प्रकाशित नहीं हुआ था उस रूपकी घटनाकी बातें इस तृतीय संस्करणमें प्रकाशित हुईं। सरल सत्य कथा लिखने-से, जो लोग अशिष्ट व्यवहार किये हैं, पत्तान्तरमें उनकी निन्दाही समझी जायगी इसीसे अनेक जगहोंमें लेखनी संयतकर ही घटनाएँ लिखी गई हैं। हमारे अनजानमें इस बीचमें किसी किसीने हमारी जीवनी अतिरंजितकर लिखने का उपक्रम किया था। किन्तु इस ग्रन्थके प्रकाशित हो जानेपर किसीको हमारी जीवनी लिखनेका प्रयोजन ही न होगा। दूसरा कोई यदि हमारी जीवनी लिखेगा वो कुछ बढ़ाकर ही लिखेगा एवं दुर्बल अंशको छोड़ देगा इसकी पूरी अशंका है । साधनाकी बातें छिपानेकी को वस्तु नहीं

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

तनिकसा जप करना, किसी मूर्त्तिका ध्यान करना, स्वप्नमें किसी मूर्त्तिको देख पाना अथवा कोई ज्योति देख पाना ये सब साधनाकी बहुत छोटी अवस्थाकी बातें हैं। गीता, उपनिषद् तथा अन्यान्य दर्शन ग्रन्थोंसे हमारे जीवनकी परिपूर्णता किस प्रकार से होती है इसको पूर्वाचार्य गण लिपिवद्ध कर गये हैं। प्रस्थानत्रयका अवलम्बनकर तपस्या जगतमें चलना होगा। जिसके जीवनका सुर गीता के सुरके साथ मिल पाता नहीं, जिसके जीवनकी अनुभूति उपनिषद् के ऋषियोंका अनुवर्तन करती नहीं, जिसका तत्त्ववोध दर्शन शास्त्र के तत्वके साथ संगति रख पाता नहीं उसकी साधनाको अपूर्ण ही समझना होगा। कोई कोई उद्भट साधक अनेक समय गीता उपनिषद् तथा दर्शनोंको अतिक्रमकर अतिरिक्त कुछ और भी विशेष प्राप्त करने चाहता—इस प्रकार असंगत बातें करता, किन्तु अबतक किसी ने कुछ नवीन अविष्कार कर सका नहीं।

"पुरुषान्न परं किञ्चित्
सा काष्ठा सा परागतिः।"

पुरुष अर्थात् ब्रह्मके परे और कुछ ज्ञातव्य विषय नहीं है। अन्नमय कोष है यह स्थूल शरीर, इसके चारों ओर है यह वास्तव जगत्। इस स्थूल शरीर तथा स्थूल जगत्का उत्स (स्त्रोत) को ढूँढ़ते ढूँढ़ते उपनिषद्के ऋषिगणको प्राणमय कोषका अनुसन्धान मिला था। वरुण ऋषि अपने प्रिय पुत्र भृगुको कहे थे कि तुम और भी तपस्या करो तब उसका पता चलेगा। तपस्वी भृगु क्रमशः मनोमय, विज्ञानमय एवं आनन्दमय कोषोंको अतिक्रमणकर उस

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

परम पुरुषके दिव्य चिन्मय जगत्में पहुँचे थे। इसी परमपुरुषमें अपनेको गँवा दिये थे। लवणके पुतले जैसे समुद्रको मापने जानेपर स्वयं विलीन हो गये थे। जो स्वयं विलीन हो गया, जो अपनेको गँवा दिया—खो बैठा तो बोलो वह किस प्रकार परवर्त्ती समाचार का संग्रहकर सकता ?

ब्रह्मर्षि श्री श्री सत्यदेव जी तथा उनके पूर्वाचार्यगण सत्य-प्रतिष्ठा पथसे इस ब्रह्मानुभूति—लाभकी बात कह गये हैं। मैंने दृढ़ प्रयत्नसे उस पथका अनुवर्तन किया है। हमने गीताका आश्रयण किया है, चण्डीका आश्रयण किया है, भागवतका आश्र-यण किया है, योगाशास्त्र पातंजल दर्शनका आश्रयण किया है—वेदान्त और सांख्यका आश्रयण किया है, उपनिषद्के शरणापन्न हुआ हू ; इसीसे हमारा विश्वास बहुत दृढ़ है। मैं जो पा चुका हूँ वह है अमृत वह है अभय—वह है जीवनकी पराकाष्ठा इसमें मुझे कोई भी सन्देह नहीं है। सुख दुःख भला बुरा तथा अनेक प्रकार के विपर्ययके बीच होकर किस प्रकार मैं गन्तव्य स्थान में पहुँचा हूँ वही इस ग्रन्थके पाठसे भक्तगण जान सकेंगे एवं साधना पथमें चलनेका पाथेय संग्रह कर सकेंगे। मैं मनुष्य हूँ, इसीसे मनुष्यके लिये ही यह ग्रन्थ लिखा गया है। संसार तापसे तप्त दिग्भ्रान्त मनुष्य इस ग्रन्थसे पथ तथा पाथेय पा लेनेपर इसकी सार्थकता होगी ऐसा मैं समझता। इति—१३६८ साल (बंगला) आश्विन।

ग्रन्थकार

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

अनुवादकका स्वल्प नैवेद्य।

पूज्य पादपद्म श्रीश्रीयुत बाबाने अपनी 'साधनार गृहं'—बंगला पुस्तकका अनुवाद करनेका आदेश दिया है। मैं पहले भी उनकी कतिपय पुस्तकों का अनुवाद कर चुका हूँ। अतएव इस पुस्तकका भी अनुवाद कर देनेका आदेश प्राप्त हुआ है। श्री श्रीबाबाने अबतक जिन ग्रन्थोंका प्रणयन किया है उनकी भाषा तो सरल है किन्तु भावसे परिपूर्ण हैं। एवं च साधनांगके गंभीर भक्ति-भाव, योग तथा ज्ञानकी उत्कर्षतासे ओत प्रोत हैं।

साहित्यिक दृष्टिसे इस अनुवादमें कुछ त्रुटि-प्रतीतिकी संभावना होनेपर भी केवल साहित्यिक प्रणालीके अनुसरणसे उनके गभीर-भावपूर्ण लेखका अनुवाद ठीक बन पाता नहीं। श्री श्रीबाबा एक उच्चकोटिके साधक-सिद्ध होनेके कारण केवल साहित्यिक आधारसे नहीं प्रत्युत आन्तरिक प्रत्यक्षानुभूतिके आधारपर सहजावस्थामें स्थितप्रज्ञ होते हुए धारा प्रवाह रूपसे उनकी लेखनी चलती। अतएव उनके आनुभूतिक तथ्यको अक्षुण्ण रखकर जहाँ तक साहित्यिक सामंजस्य संभव हो अनुवादमें समावेश कर लेनेपर संगतयुक्त हो पाता है।

मैं न तो कोई उत्कृष्ट साधक हूँ वा न किसी शास्त्र वा साहित्य का विशेषज्ञ होनेका दावा करता हूँ। यह तो श्री श्रीबाबाकी कृपा वा

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

मेरे प्रति वात्सल्यप्रयुक्त मुझ सदृश पल्लवग्राहि अल्पज्ञसे काम चलाया जा रहा है। मेरा अहोभाग्य है।

अबसे दो वर्ष पूर्व जब मैं उनके देवसंघ आश्रममें सामूहिक दुर्गापूजामें सम्मिलित होने गया था उस समय मेरा स्वास्थ्य बिगड़ जानेसे मैं बहुत दुर्बलता बोधकर रहा था। तब मैं कुछ चिन्तितसा होकर उनसे निवेदन किया कि मेरा जीर्ण शीर्ण शरीर अब अधिक दिन नहीं चलनेका। हो सकता कि मैं अग्रिम वर्ष पूजामें सम्मिलित न हो पाऊँ। इस पर उन्होंने मुझे आश्वासन दिया कि मैं इतना शीघ्र जानेवाला नहीं। हमें अभी 'माँ' का बहुत कुछ काम कर देना बाकी है। सो उनके आशीर्वादसे मैं अबतक निभते चला आया हूँ। अतः माँ का काम निभाना मेरा भी कर्त्तव्य है, जो मैं साम्प्रतिक जीर्ण एवं रुग्न अवस्थामें भी करता जा रहा हूँ। आगे 'माँ' की इच्छा।

उपस्थित अनुवाद्य पुस्तकका नाम है 'साधना के गृहमें'। इसी से पुस्तकके लेख का उद्देश्य विषय संक्षेपमें साधनाका रहस्य है। श्री श्रीबाबाने अपने जीवन प्रभातसे जिस प्रकारकी क्लिष्ट साधना की, उस साधनामें कितनी उत्कट कठिनाइयाँ उपस्थित हुई और उनको वे किस तरह झेले एवं दृढ़ निष्ठा तथा कठोर तपस्याके प्रभावसे किस प्रकार उत्तरोत्तर सुचारु उन्नतिके शिखरपर पहुँचे वही बात इस ग्रन्थमें लिखी है। साथ-साथ वे स्वाभिमान गौरव वा बड़ाईका त्यागकर जीवनकी सत्य घटनाओंका उल्लेख करनेमें तनिक भी कुंठित नहीं हुए हैं। उन्होंने अपनी दैनंदिनी साधनाकी क्रमिक

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

अनुभूतिको प्रस्फुटित रूपसे व्याहार किया है। इसके अध्ययन अनुशीलनसे साधक मात्रका असीम उपकार निश्चित है। साधनावस्थामें बहुधा नाना प्रकारके अन्तराय उपस्थित होते रहते हैं जिस हेतुसे कितने साधक अनेक समय हताश हो जाते वा बाध्य होकर साधनाका परित्याग कर बैठते हैं। उनके लिये इस ग्रन्थकी निचोड़ बाते अँधेरे दुर्गम पथमें उजाले मशालका काम देगी। साधनाके रहस्यको उन्होंने तिलभर भी गोपन नहीं किया है। साधकोंके कल्याणार्थ हृदय खोलकर अमूल्य रत्नोंको बिखेर दिया है। उपनिषद् एवं योगवाशिष्ठकी प्रवचन शैलीसे निगूढ़ साधन रहस्यको अति सरल रीतिसे अनेक उपपत्ति वा उदाहरण द्वारा बार-बार समझाया है। काल्पनिक विनियोगोंसे नहीं प्रत्युत उग्रतपस्यासे उपलब्ध प्रत्यक्षानुभूतिके द्वारा साधनाकी जटिल समस्याओंको सुलझाकर स्पष्ट दिखा दिया है। आशा करता हूँ कि तृषित मुमुक्षु साधकोंके लिये यह ग्रन्थ विशेष उपयोगी होगा।

वाराणसी
सं० २०१६

अनुवादक—
काशीनाथ झा

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

सूची-पत्र

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

शुद्धि पत्र

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
२	१०	वश	वंश
११	६	अपस्था	अवस्था
१३	१२	त्याक	त्याग
१४	२	हो गया	नहीं हुआ
२८	२	जाने पप	जानेपर
५२	१६	दुआ	हुआ
५६	७	ममझ	समझ
६६	१७	बधन	बंधन
८५	१३	उपरान्तक	उपरान्त
८५	२२	कुज दरे	कुछ देर
८६	५	उदय होते	उदय होतीं
८६	६	ही थे	ही थीं
६०	१७	अपमे	अपने
६१	६	वप शक्ति	वह शक्ति
६३	५	देख	देखे
६३	१२	यर्थात्	अर्थात्
१०७	२१	सभारांगण	समरांगण
११२	६	हाने लगा	होने लगो
११७	२	सब कोबैई	सब कोई
११६	६	हल लौग	हम लोग
१२१	१	आरंभ कर कर	आरंभ कर
१४४	८	बैतिन	सौतिन

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१४३	१३	द्रष्ट्रा	द्रष्टा
१५३	१	जगन्नामूर्त्ति	जगन्नाथमूर्त्ति
१५५	१३	वर्षणो	वर्षण ही
१५६	१	जिस तीस	जिस तिस
१५६	२	एक एक	एक
१६१	१०	लाला	लीला
१७३	२	अतुभूति	अनुभूति
१७३	५	स्वगत भरे	स्वगत भेद
१६३	११	बोधित	वेधित
१६७	१७	अक्रान्त	आक्रान्त
२०१	३	स्थित भी	स्थित थी
२०४	१६	विरोध करो	निरोध करो

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

9/60

साधनाके गृहमें

प्रथम खण्ड

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS
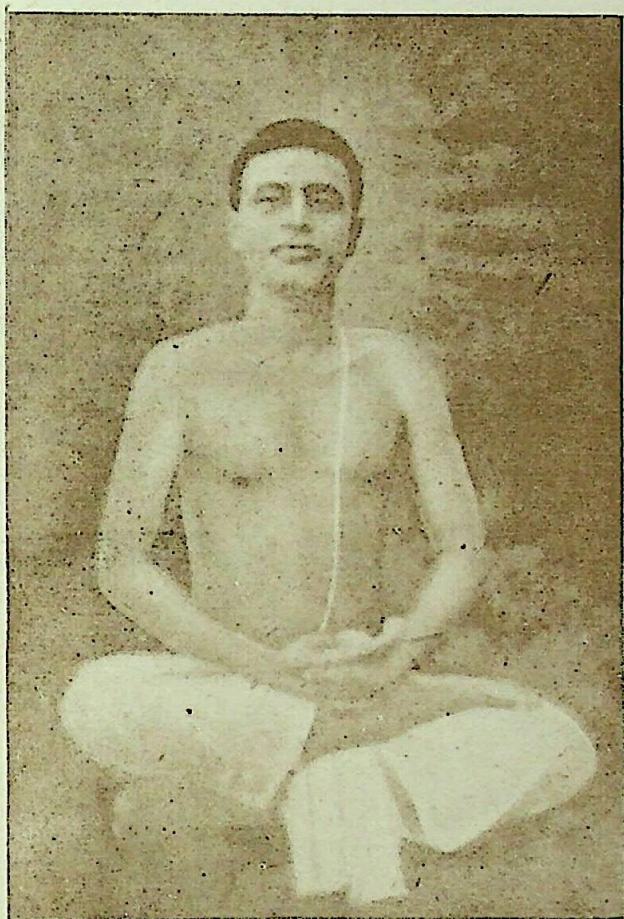
ब्रह्मर्षि श्री श्री सत्यदेव जी महाराज

आविर्भाव—बंगाब्द १२६०
श्रावण—शुक्ला द्वितीया

तिरोभाव—बंगाब्द १३३६
आषाढ़—शुक्ला चतुर्थी

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

साधनाके गृहमें
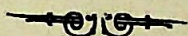
जीवनके प्रभातमें

बाल-सखाने स्कूलसे घर लौटते समय एक महापुरुषके बारेमें कहा—वे साक्षात् भगवान् हैं। जो वृन्दावनमें श्रीकृष्ण तथा नदियामें श्रीगौरांग रूपसे अवतीर्ण हुए थे। वे ही अभी फिर दूसरा रूप धारण कर इस जगत्‌में पधारे हैं। उनके सम्बन्धमें अनेक बातें हुईं—उनकी अलौकिक शक्तिकी बात, उनके प्रियजनके प्रति, भक्तगणके प्रति, प्रगाढ़ स्नेह और प्यारकी बात। मुझे तो अलौकिक व्यापारों की अपेक्षा प्रीतिके व्यापार ही विशेष मर्मस्पर्शी जान पड़े! उनको एक बार देखनेकी इच्छा हुई किन्तु उस समय वे फरिदपुर प्रांगणमें मौन होकर घरके भीतर हीमें रहते थे। मेरा मित्रने कहा उनके घरके भीतर बन्द रहनेसे क्या हुआ, उनको पुकारने से ही वे (दैव भावसे) दर्शन देते हैं। वे एकान्त रात्रिमें बातें करते हैं।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

श्रीयुत्…भैयाके कंधेपर हाथ रखकर टहलते हैं, उनसे बात-चीत होती है।

वास्तवमें वे अवतार हैं या नहीं इन बातोंको सोचने विचारनेकी बुद्धि मुझे उस समय नहीं थी। वे स्नेहमय शक्तिशाली, उनको गोहरानेपर वे आयँगे, बातें करेंगे, हमारे जीवनका लक्ष्य स्थिर कर ठीक रास्तेसे परिचालित कर धीरे एकान्तमें श्रीभगवान्‌के समीप ले जायँगे इसी विश्वाससे उनको मैं गोहराने लगा। उनके उपदेशपूर्ण पुस्तकके पाठसे समझ पाया साध्य (आराध्य) गोविन्द हैं, व्रत ब्रह्मचर्य है। उनके कई एक उपदेश नीचे लिखते हैं।

१. शरीरके रक्तको पानी नहीं करना, उससे आयु एवं वश जाता है। अर्थात् नष्ट होता है।
२. इस धरतीपर दो पातक हैं—स्पर्श दोष और पंक्ति-भोजन।
३. गुरु गोविन्दको छोड़ अन्य कोइ भावना नहीं करना।
४. खाली मत रहो सदा स्मरण करते रहना।
५. लक्षणसे मनुष्यको पहचान लेना उसी प्रकार व्यवहार करना।
६. पेटको पूरा नहीं भरना, कुछ खाली रखना।
७. अहिंसा, सत्य, मौन, अक्रोध, त्याग, निष्ठा, का सर्वदा आचरण करना।

—:❀:—

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

२ गुप्त भावसे

उनका एक चित्र बाजारसे खरीदकर अपनेही बहुत यत्नसे उसमें शीशा जड़ दिया। पीछे किसीको पता चलनेपर कुछ उपहास करे इस भयसे उस चित्रके बगलमें दो एक दूसरा भी चित्र रख दिया। एक कमरेमें मैं अकेलाही पढ़ता और सोता था। उसी कमरेमें उन चित्रोंको रखा। कदाचित् कोई देखले इस भयसे दिनमें एक बार प्रणाम भी नहीं करता था। रातमें सबके सो जाने-पर चित्रको धीरे-धीरे नीचे उतारकर छातीमें लगाता। फिर सामने रखकर अपने सुख-दुःखकी बातें कहता। दिनमें जो-जो काम करता—सभी उनके चरणोंमें निवेदनकर अपराधके लिये क्षमा प्रार्थी होता एवं बार-बार पद चुम्बनकर कहता "प्रभो! यह मेरा हृदय आपका आसन हैं, असत् चिन्तासे इसको कलुषित होने नहीं देना। आपके आसनको आप पवित्र रखें। किस प्रकारसे आपका आवाहन करना होता सो नहीं जानता तब भी हे देव! अभिलाषा यह रहती कि किसी दिन आप अवश्य मिलेंगे। आपसे मिलूँगा—आपके प्रेम तथा गुणमें अपनेको खोदूँगा—मेरा जीवन धन्य हो जायगा। दिनमें आपसे दूर रहता—इस भयसे कि पीछे किसी जटिल-कुटिलसे लांछित न होना पड़े। मेरा चित्त दुर्बल है। आप जो सर्वतोभावसे हमारी रक्षा करते रहते—यह बात अन्तरसे कहाँ मान सकता? हे

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

प्रभो ! आप हमें पूर्ण विश्वास दें। और जब तक पूरा विश्वास न हो तब तक आप गुप्तही हृदयमें विराजें।" इस प्रकार कितनी बातें बोलता। रो रोकर जकड़के पकड़ता, छातीपर छाती रखकर, कन्धेपर कन्धा धरके कानसे कान प्राणसे प्राण लगाकर कितनी बातें होतीं। उन्हें एक-एक बात बोलकर प्रत्युत्तरकी आशासे उत्कर्ण होकर रहा करता। कहा करता—"भैया मेरे ! देवता हमारे ! सखा हमारे ! एक बार बोलिये ! आप प्रह्लादके साथ कितने खेल खेले, ध्रुवको दर्शन देकर कृतार्थ किया—किन्तु मुझे आपकी एक बात सुननेका भी सौभाग्य नहीं देंगे ?" फिर कहता—"अहा ! मेरे प्राण ! मेरे प्राणाधिक ! यदि बात बोलनेमें भी आपको कष्ट होता हो, तो रहने दीजिये, मत बोलिये।" इस प्रकार कितना मचलाता रूठता। उनके चित्रको छाती वा माथेपर रखकर सो जाता और खूब सवेरे उठकर यथास्थानपर रख दिया करता।

क्रमशः उस रूपके साथ हमारे भीतर ही भीतर एक घनिष्ठ सम्बन्ध स्थापित हो गया। वह रूप प्रायः (अकसर) ही आँखोंके सामने भासित होते रहता। रास्तेमें चलते, फिरते उठते बैठते सब समय वही रूप देख पाता। बीच-बीचमें अन्यमनस्कताके कारण भूल जानेपर भी—स्मरण करने मात्र ही देख पाता। हृदयेश्वरको हृदयआसनपर बैठाकर समय समयमें पूजा करता, आँसूके जलसे श्रीचरणको धोकर सुख दुःखकी पुष्पांजलि देता। प्रत्येक रात्रि निर्जनमें इसी प्रकार हृदयकी अनेक बातें उनसे कहता। उनके उत्तर नहीं पानेपर भी हमारा दृढ़ विश्वास था कि वे हमारी बातोंको

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

सुन रहे हैं—यह विश्वास दृढ़तर होता हमारी प्रार्थनाओंकी आश्चर्य रूपसे पूर्त्ति होती देखकर। यदि कभी कोई प्रार्थना अपूर्ण रह जाती तो समझता कि अवश्य ही हमारी प्रार्थना ठीक रूपसे हुई नहीं अथवा उसकी पूर्त्ति होनेसे हमारा कुछ अकल्याण हो जा सकता इसीसे वे उसे पूर्ण किये नहीं। कुछ दिन बाद वास्तव रूपमें देख पाता कि वे हमारे बालकोचित अनेक अनुरोधोंकी पूर्त्ति नहीं कर हमारी भलाई ही किये।

अतः पर एक दिन प्राणनाथ भीतर ही भीतर कह दिये—"केवल इस रूपकी संकीर्ण सीमाके मध्य अपनेको आबद्धकर मत रखो।" सचमुच मानो मैं आबद्ध ही हो चुका था। मैं सोचता था कि वह रूप ही हमारे इष्टदेवका रूप है; दूसरे कोई देव देवी वा महापुरुष हमारे आराध्य नहीं हैं। यहाँ तक कि मैं अन्य किसी देव देवीको प्रणाम भी नहीं करता। विचारता कि एक ही सिर कितने जनोंके निकट झुकाऊँगा, एक ही जीवन कितने जनोंको उत्सर्ग करूँगा। उससे उस समय हमारी कोई क्षति (हानि) हुई ऐसा मालूम नहीं होता था। वरंच (बल्कि) उस प्रकार भाव रहनेसे सहज ही मैं अपने आराध्य रूपमें तन्मय हो सकता था। तथापि अन्य किसी देव देवीके प्रति कोई द्वेष भी नहीं था। यह धँधा (उलझन) निपट जानेपर सब रूपमें ही एक जनको ही देखनेकी चेष्टा करता। यह विचार करता कि एक ही जन एक सच्चिदानन्दमय भगवान ही विभिन्न साजसे लीला करते हैं।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

पहले कालीको प्रणामकर पीछे कृष्णको प्रणाम करनेसे कोई हानि होती ऐसा नहीं मानता। किन्हींको पीछे प्रणाम करनेपर वे कुपित होंगे वा मुझसे अपराध होगा ये भाव अन्तर्हित होने लगे। जब जिस रूपकी चिन्ता करता उसीमें आनन्द पाता। यह समझता कि वे मुझे इस माया मोहमय जगत्से उद्धार करेंगे। वे उस एक ही की लीलाके विभिन्न विकाश हैं।

कुछ दिनके उपरान्त एक व्यक्ति मुझे कईएक योग विषयके ग्रन्थ पढ़नेके लिये दिये। सद्ग्रन्थ पढ़नेमें बहुत मन लगता था। ये ग्रन्थ बहुतायत हमारे अनेक सन्देह संशयको दूर किये, अनेक विषयकी मीमांसा कर दी, तथ्य वहनकर लाये, सर्वापेक्षा उपकृत होता इसलिये कि मुझे नाना प्रलोभनसे प्रति पदमें रक्षाकर एक पूर्व परिचित दिव्य राज्यका शुभ सम्वाद देकर उसी ओर हमारी आकांक्षाको तीव्रतर करता रहा बोलकर।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

उपनयन

नव वर्ष वयसमें एक निष्ठावान साधकके निकट हमारा उप-नयन हुआ। उनको मैं बाल्य अवस्थासे ही श्रद्धा करता था। वे हमारे चाचाके शिक्षा गुरु थे। आहार विहारमें अत्यधिक संयत और पवित्र थे। उनके जीवनकी एक अलौलिक घटना है। उनकी प्रौढ़ अबस्थामें वे एक दिन किसी आत्मीयके घरसे अपने घर लौट रहे थे उसी समय अपने घरसे प्रायः दो मील दूरीपर संध्या समयमें एक वृद्ध ब्राह्मण पथिकसे भेंट हुई। ब्राह्मणकी सौम्य मूर्त्ति देखकर उनके परिचयकी जिज्ञासा की। प्रत्युत्तरमें ब्राह्मण बोले—मैं इसी तरह परिव्राजक रूपमें भ्रमण करता हूँ, कल्ह रातमें बराब ग्राममें एक भद्रलोकके घरमें था। वे स्वयं घरमें उपस्थित नहीं थे तथापि हमारे आतिथ्य वा आहारादिमें किसी प्रकार की त्रुटि नहीं हुई। केवल बैठनेका आसन उतना अच्छा नहीं था और पानमें चूना देना भूल गया था। ब्राह्मणकी बात सुनकर हमारे उपनयनके आचार्यदेव बोले—आप तो हमारे ही घर गये थे? कल त्रुटि हुई है, आज कृपाकर फिर चलें यथासाध्य आपकी सेवा करूँगा। ब्राह्मण बोले—मैं पहले एक जगह आजके लिये निमंत्रण ग्रहण कर चुका हूँ अभी वहाँ ही जा रहा हूँ। और वहाँ ही रातमें भोजन करूँगा। जिस जगह जिसके घर जायँगे उसका नाम भी कह दिये। ब्राह्मण

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

उलटे रास्तेसे चले गये। मेरे आचार्यदेव फिर अपने घरकी ओर चल पड़े। अपने गाँवके समीप पहुँचनेपर उन्हें ज्ञात हो गया कि विगत रात्रिमें ब्रह्माने उनके घरको स्वाहा कर दिया। केवल एक चूनेकी डब्बी और दो एक अच्छे काठके पीढ़े बच गये थे। मनमें सन्देह हुआ—यह ब्राह्मण कौन है ? दूसरे दिन खबर मिली की ब्राह्मणने जिसके घरमें गतरात्रिमें निमंत्रणकी बात बोले थे उसका घर भी भस्मीभूत हो गया है। यह भगवानकी—ब्रह्माकी ही छलना है इसको समझनेमें कुछ भी देर न लगी। उन्होंने कुछ खर और सूखी लकड़ी संग्रह कर उस पीढ़े तथा चूनेकी डब्बीमें आग लगा दी एवं विविध मंत्रोंसे ब्रह्माकी तृप्तिके लिये आहुति प्रदान की।

रातमें वे स्वप्नमें देखे कि ब्रह्माने उसी वृद्ध ब्राह्मणका वेष (भेस) धारण कर उनके सिरहानेके पास एक थैली रख दिया और कहा—"मैं तुम्हारी अर्चासे सन्तुष्ट हो गया हूँ। यह थैली जबतक, तुम्हारे पास रहेगी तबतक तुम्हें कोई अभाव नहीं रहेगा।" वास्तवमें उन्हें जीवनभर किसी प्रकारका आर्थिक अभाव नहीं हुआ।

ऐसे तपस्वी पुरुषसे उपनयन समयमें गायत्री मंत्र प्राप्त कर मैं अतिशय आनन्दित हुआ। विधि विधान यथाशक्ति प्रतिपालन करता रहा। गायत्री जप गंभीरनिष्ठासे करता था। स्मरण होता है कि दो तीन वर्ष तक उस निष्ठामें कोई शिथिलता नहीं आयी। अर्थबोध नहीं होनेसे संध्याके मंत्र सब नीरस मालूम होते थे। गायत्रीका अर्थ भी नहीं जानता था। किन्तु गायत्री जप बन्द करनेसे दूसरे जन्ममें ब्रह्मराक्षस होना पड़ेगा ऐसी बात किसी किसीके

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

मुँहसे सुना था, इसीसे गायत्री जपका त्याग नहीं किया। संध्याका मंत्रके त्याग करनेपर भी सबेरे और साँझमें विशेषकर शेष रात्रिमें शान्त चित्तसे मूर्त्तिका ध्यान करता था। ठीक उसी समय हमारे स्कूलके मित्रके साथ परिचय हुआ एवं उसके मुँहसे पूर्वोक्त महापुरुषकी चर्चा सुनी।

उपनयन ग्रहणका प्रधान उद्देश्य हुआ—भगवान्के समीप जाना। भगवान्के पास नेत्रको—दृष्टिको ले जाना. मनको भी ले जाना। जो नेत्र हम जन्मग्रहणके समय प्राप्त करते उसके द्वारा जगत्को ही देख पाता भगवान्को देख पाता नहीं। उपनयन कालमें गुरु भगवानको पानेका उपाय बोल देते हैं—दिव्य चक्षु दान करते हैं।

भगवान् ही जीवनके आश्रय स्थान हैं। भगवान् ही परम बान्धव। भगवान्के पाससे ही हमलोग जगत्में आये हैं, पुनः उन्हीं भगवान्के पास लौटकर जायँगे। संसारमें आसक्त नहीं होकर भगवान्में आसक्त होना होगा। पद पदमें भगवान्में आत्मनिवेदन कर चलना पड़ेगा। उपनयन ग्रहणका यही प्रधान उद्देश्य है। "अनृतात् सत्यमुपैमि स्वाहा"—यह मंत्र पढ़के उपनयन ग्रहण किया था। जगत् अनृत, अनित्य। भगवान् नित्य और सत्य। वही सत्यस्वरूप भगवान्को लाभ करना होगा। गायत्री मंत्र द्वारा वह सत्य लाभका पथ सुगम हो जाता है यहाँ तक कि गायत्री द्वारा सत्यका लाभ भी हो सकता है। गायत्री सिद्ध मंत्र है। वैदिक

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

युगसे अनेकानेक ऋषि इस मंत्रके जपसे सिद्धि प्राप्तकर चुके हैं, सिद्धकाम हो गये हैं।

भगवान कितने बड़े हैं, वे कहाँ रहते हैं, वे साकार वा निराकार हैं इन वातोंको उस समय नहीं समझ सकता था। किन्तु भगवान स्नेहमय-प्रेममय हैं, उनको पुकारनेसे वे उत्तर देते, विपद्से रक्षा करते हैं, दुःख दूरकर देते हैं, इन बातोंमें विश्वास रखता। वे युग-युगमें अवतार होकर हम लोगोंको उद्धार करनेके लिये आते हैं— इस बातको भी विश्वास करता। अवतारवादमें विश्वास था। वैष्णवोंके मुखसे सुना था – वे ४०० वर्ष पहले एक बार नवद्वीप धाममें श्री गौरांग रूपसे अवतीर्ण हुए थे।

गायत्री मंत्रका अर्थ नहीं जाननेपर भी उस मंत्रका जप करना अच्छा ही लगता था। संध्या मंत्रका जप नहीं कर महा पुरुषके रूपका ध्यान करने ही की चेष्टा करने लगा एवं उनसे प्रार्थना करने लगा—"मुझे धी दो, बुद्धि दो, अन्धकारसे प्रकाश-उजालेमें ले चलो। अपवित्रतासे बचाओ, संसारमें मुग्ध नहीं करो।

हमारे ११ वर्ष वयसमें हमारे पिताकी मृत्यु हो जानेपर पंडित लोग अशौच अवस्थामें संध्यामंत्र जपका निषेध किये थे। तब ही से संध्या करना प्राय बन्द हो गया। हमें याद आती है कि मेरे पिताकी आत्माके कल्याण निमित्त उनके श्राद्धके पूर्व दिनकी रात्रिमें बहुत करुण भावसे, मैं अपने उक्त आराध्य देवसे प्रार्थना की थी। स्नेहमय पिताके अभावका पद-पदमें पूरा अनुभव करता रहा। उनकी मृत्युसे यह जगत अनित्य है यह मुझे और भी स्पष्ट हो गया।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

एक दिन सुरथ-उद्धार अभिनय देखने जाने पर यह गान सुना था—

"मैं एक तृण छोड़ अन्य तृण धर,
अनन्त सागरमें मिलूँगा।
....
पथिक पथिकसे पथका आलापन।"

ऐसा मालूम होता कि मेरे पिताकी (४२ वर्ष की अपस्थामें) अकाल मृत्यु मेरी दृष्टिको निर्मल कर दी थी। वे जगत्से विदाई लेकर जगत्की अनित्यता हमें समझा गये। जिनके शरीर का आश्रय ग्रहणकर मैं इस जगत् में आया हूँ, वे अपना शरीरका त्यागकर मुझे एक दिव्य पथका निर्देश दे गये। पथिक पथिकसे पथका आलापन। संसार पान्थशाला (सराय) है। हमलोग अनन्त पथके यात्री हैं। हमारे चित्तमें इस तरह भावके ही खेल चल रहे थे।

———

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

विपद् एवं आश्वासनकी वाणी

जिन्होंने हमें योगशास्त्र पढ़नेको दिये थे उनसे कई आसन, प्राणायाम तथा महामुद्रा प्रभृति योगकी प्रणाली सिख ली थी। राजयोग (स्वामी विवेकानन्द प्रणीत) पुनः पुनः पढ़कर और भी कई योगके कौशल सिखकर अभ्यास करने लगा। बिना गुरुके योगाभ्यास करनेसे विपरीत फल भी हो सकता है। यह जानकर भी योगशास्त्रके निर्देशानुसार राजयोगका अभ्यास करने लगा। योगी गुरु मिलना यथार्थमें कठिन है। किन्ही किन्ही योगीके नाम सुनकर पत्राचार करने लगा। किन्तु उससे कोई लाभ नहीं हुआ। दो एक जन योगीको देखकर प्रत्युत हताश ही होना पड़ा। उनके आहारमें कोई संयम नहीं, चरित्रमें पवित्रता नहीं इस प्रकारके व्यक्ति राजयोगी होनेके अनुपयुक्त ही मैं समझता था। जो कुछ हो मैं राजयोग ग्रन्थके अनुसार चलने लगा चित्तको—मनको संयत करनेका प्रयासी हुआ। मनके ही शान्त होनेपर भगवानका साक्षात्कार लाभ होगा।

ब्रह्मचर्य पालन करना होगा—यही थी जीवनकी और एक मुख्य बात। शरीरका सार अंश शुक्र है। उस शुक्रके नष्ट हो जानेसे मस्तिष्क दुर्बल होगा, नानाप्रकारकी व्याधि आक्रमण करेगी, दैहिक तथा मानसिक दोनोंही बल नष्ट हो जायँगे। बलहीन मनुष्यको

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

भगवानकी प्राप्ति नहीं हो सकती। श्रीरमेशचन्द्र चक्रवर्त्ती (श्रीप्रभु-जगद्बन्धुके शिष्य) के निकटसे ब्रह्मचर्य रक्षा सम्बन्धी अनेक उपदेश पूर्ण पत्र पाने लगा। प्रसिद्ध देश नेता बरिसालके श्रीअश्वनीकुमार दत्तके निकटसे भी चिट्ठी द्वारा उपदेश प्राप्त होता। उनका भक्ति-योग पढ़कर उपकृत हुआ। हमारे पास योगशास्त्र थे, श्री श्रीराम कृष्ण कथामृत था, स्वामी विवेकानन्दकी पुस्तकें थीं, श्रीविजयकृष्ण (गोस्वामी जी) के ग्रन्थादि थे, यहाँ तक कि गीता तथा वैष्णवादि ग्रन्थ भी थे यह हमारे मित्रोंकी दृष्टिसे आड़ पायी नहीं। वे यह समाचार हमारे अभिभावकोंके कानमें भी डार दिये। मेरे पिता तब इस लोकमें नहीं थे। हमारे चाचा ही मेरे अभिभावक रहे। वे पंडित थे किन्तु वैषयिक लोग थे। अपने वंशका मैं ही ज्येष्ठ पुत्र था। इस कारण यदि मैं योगी होकर संसारका त्याक करता तो उससे जागतिक अनर्थ की संभावना थी इस चिन्तासे वे तथा उनके बन्धुवर्ग विचलित थे।

मेरे जन्मस्थानमें उस समय हाईस्कूल नहीं था, इसीसे मैं अपनी एक बहनके मकानमें रहकर स्कूलमें पढ़ता था। जिस घरमें औरतें रहतीं उस घरमें मैं नहीं रहना चाहता। इस बातको सुनकर वे बहुत विचलित हुईं। औरत माने जो हमारी मातृस्थानीया थीं उन्हींकी बात मैं कह रहा हूँ। उनके साथ भी मैं एक घर में रहना नहीं चाहता था इससे एक नयी समस्या उपस्थित हो गई; क्योंकि उनके पास अलग कोई कमरा नहीं था। मेरी बहन मुझे उस परिस्थितिको समझानेकी बहुत चेष्टा की। वे अपनी कोठरीमें अथवा

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

उनकी वृद्धा विधवा सासकी कोठरीमें दूसरी चारपाईपर मुझे स्वतन्त्र बिस्तरेपर सोनेकी सम्मति दी। मैं सम्मत हो गया। निर्वाक हो रहा। रात दश बजेके समय अध्ययन समाप्त हो जानेपर उनके मकानसे कम ही दूरीपर जिस बट वृक्षपर किसी उपदेवताके रहनेकी लोकमें ख्याति थी उसी बट वृक्षके नीचे जाकर आश्रय लिया। मकानमें शोरगुल मच गया। वह लड़का कहाँ चला गया, अन्धेरी रात, सर्पका भय, भूतका भय इत्यादि अनेक हैं। हमारे बहनोई विशेष चिन्तित थे इस कारण कि वे बहुत स्नेहशील थे। उन लोगोंने इधर-उधर तन्न-तन्नकर ढूँढ़े किन्तु उस उपदेवतावाले वृक्षके निकट जानेका किसीने साहस नहीं किया, क्योंकि उस देवताका सबको भय था। रातमें उन लोगोंके कितने व्यक्तियोंको निद्रा नहीं हो पायी। मैं अपनी धोतीका आँचल बिछाकर उस पेड़के नीचे सुखसे सो गया। उपदेवता वा भूतका भय मुझे बहुत कम था। गाढ़ी रातमें चाँदनीके उजालेमें (संभवतः कृष्णपक्षकी षष्ठी सप्तमी तिथि थी) एक व्यक्ति मुझे उस पेड़के नीचे देख पाकर सबोंको बुला लाये। मेरे घर लौटने पर मानो वे आकाशका चंद्रमा जैसे पा गये। इस भयसे मुझे कोई कुछ जिज्ञासा नहीं की ताकि मैं फिर कहीं भाग न जाऊँ। ऐसा होनेसे आत्मीय जनोंके समक्ष उनको कलंकभाजन होना पड़ता। जो कुछ हो उन्होंने मेरे लिये एक कमरे-के बरामदेपर नये ढंगसे स्वतंत्र रूपसे रहनेकी व्यवस्था कर दी। कोठरी छोटी होनेपर भी मैं स्वाधीन भावसे आनंद चित्तसे वहाँ रहने लगा।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

मुझसे ३।४ वर्ष बड़ा एक पड़ोसी छात्र था। वह मुझसे एक क्लास (वर्ग) ऊपरमें पढ़ता था। और एक छात्र मेरी बहनके मकानमें ही रहता था यह उनका संबंधी था, उमरमें हमसे ६।७ वर्ष बड़ा था और मुझसे ३।४ क्लास ऊपरमें पढ़ता था। इन दोनोंमें पहला युवक निर्लज्ज एवं चरित्रहीन था। अश्लील बात बोलनेमें सर्वदा ही उसकी जिह्वा प्रस्तुत रहती थी। वह अपनी चरित्रहीनताके लिये बिलकुल लज्जित नहीं था। ये दोनों मुझे शरीर नष्ट करनेका कुत्सित अभ्यासकी शिक्षा देनेके लिये अग्रसर हुए थे। मैं किंतु उन व्यापारोंको कुछ समझ नहीं पाता था। यद्यपि मैं वयसमें छोटा था तथापि वे मुझसे डरते थे। पापीका चित्त स्वभावतः दुर्बल रहता है यह मैं जानता था। मैं उनसे बात-चीत बन्द कर दी। किन्तु वे मुझे अनेक तरहसे प्रलुब्ध करनेकी चेष्टा करने लगे। असत् बन्धुओंके संगमें जीवनकी परीक्षा होती है, मेरी भी वह परीक्षा आरम्भ हो गई।

वह पहला युवकने बालविधवा एक शूद्री युवतीको मेरे मनोबल-को नष्ट करनेके लिये नियुक्तकर दिया। वह युवती अच्छी पुस्तक पढ़ने चाहती इसीसे मेरे पाससे पुस्तक लेने आती इस प्रकार अनेक बहानेसे वह मेरे पास जब तब आने लगी। कभी हाथमें दो अच्छे फूल लेकर, कभी गाछके पके आम फल लेकर मेरे पास आती। मैं मना करता, किन्तु वह बहुत कातरभाव दिखाती। वह बालविधवा थी इसलिये वह किस तरहसे प्रलोभनोंसे आत्मरक्षा कर पायगी

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

ऐसाही करुण प्रस्ताव उपस्थितकर मेरे चित्तको आयत्त करनेकी चेष्टा करने लगी। उसके चाल-चलन मुझे बिलकुल पसन्द नहीं थे। मुझे ऐसा मालूम हुआ कि कोई मोहनी शक्ति मेरे जीवनको कुपथमें घसीटनेके लिये उपस्थित हुई हैं। मेरे जीवनकी परीक्षा होने वाली है, इसलिये और भी दृढ़—और भी कठोर हो गया। आखिर उसे स्पष्टशब्द रूपसे कह दिया कि तुम कभी मेरे पास नहीं आना। तुम्हारा चरित्र अच्छा नहीं है ऐसा बहुतोंके मुँहसे सुन चुका हूँ। एक दिन गाढ़ी रातमें वह हमारे जँगलेके पास आकर फुस-फुसाते धीमे स्वरसे मुझे पुकारने लगी। मेरी नींद टूट गई। देखता कि वही पापिनी एक राक्षसी मूर्त्तिसे मानो हमारे विवेकको ग्रसित करनेके लिये मेरे जँगलेके पास खड़ी हो रही है। मैं उसे कड़े स्वरमें सम्मानके साथ लौट जानेको कहा। किन्तु वह करुण स्वरमें एकबार किवाड़ खोल देनेके लिये अनुरोध करने लगी। पापिष्ठा, राक्षसी अच्छी बात नहीं सुनती यह देखकर मेरी अन्तरात्मा विद्रोही हो गई। मैं चोर-चोर कहके चीत्कार करने लगा। राक्षसी भाग गई। घरके सब लोग जाग उठे। वे चोरको ढूँढ़ नहीं पाये, कारण यह कि तब तक वह राक्षसी सरक पड़ी थी। सब लोग ख्याल किये कि मैं लड़का होनेसे कोई सपना देखा था। अब तक भी उनमेंसे जो जीवित हैं वे समझते कि मैं स्वप्नही देखा था। उधर जो पापिष्ठ हमारे जीवनका शत्रु होकर खड़ा था वह एकही क्लासमें दो तीन वर्ष असफल होनेसे उस स्कूलको त्यागकर दिया। उसका पाठ समाप्त हो चुका था किन्तु स्वभावका दोष त्याग नहीं कर सका।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

दरिद्रता तथा रोगके ताड़नसे उसकी अकाल मृत्यु हो गई। दूसरा युवक मेट्रिक पासकर कॉलेजमें पढ़नेके लिये चल दिया।

मेरे समझसे भगवान बुद्धदेवकी स्त्रियों द्वारा जो कठोर परीक्षा हुई थी उससे कम मेरी भी उस दिनकी परीक्षा नहीं थी। उस समय मैं बालकथा जवानीकी प्रथम अवस्था थी। कामवृत्ति तब तक भी प्रबल न होनेपर काम क्या वस्तु है उसको कुछ समझता था। हमारी विवेकबुद्धिके बलसे मैं विपद्से जयी हो गया हूँ यह बात मैं अभी भी बोलूँगा नहीं। जिन्होंने मुझे बचाया था, जिन्होंने मुझे उस विपद्से परित्राण किया था, वे ही हमारे पिता, माता, धाता, विधाता हैं। वे ही 'गतिः प्राणिनां, पावनं पावनानाम्' हैं। उन्होंने ही हमारी बाल्य अवस्थासे मेरे पीछे-पीछे, साथ-साथ रहकर हमारी रक्षाकी है। वेही हमारे भवसागरके कर्णधार हैं।

छोड़ो अभी उस बात को। अभिभावकोंसे भी अपने आध्यात्मिक जीवनका, अपने आनन्दमय जीवनका, अपने उज्ज्वलतर जीवनका कोई पाथेय मिला नहीं वरं च बाधाही पद-पदमें पायी। उनकी प्रधान आशंका यह थी कि कहीं मैं संसार छोड़कर भाग न जाऊँ। धर्मग्रन्थोंको छोड़ साहित्यज्ञान लाभके लिये वे नाटक नॉभेल प्रभृति पढ़नेका प्रत्युत उत्साह देते। केवल भीतरसे आंतरिक देवताकी वाणी बीच-बीचमें सुन पाता—आगे चलो, आगे चलो, ऊपर उठो, और भी ऊपर चढ़ो, दुःख रहेगा नहीं, सब कष्ट दूर हो जायगा।

उन दो अप्रिय युवकोंके हाथसे रक्षा पायी सही किन्तु तब

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

भी हमारा पथ सुगम हुआ नहीं। मेरा स्कूल प्राय तीन मील दूर था। रास्तेमें जाते आते समय अनेक छात्रोंसे भेंट होती थी। दल बांधकर हल्ला मचाते चलना छात्रोंका स्वभाव था। वयस्क छात्र सब अनेक बुरी बातोंका उत्थानकर समालोचना किया करते थे। हमलोगोंके नहीं चाहने पर भी वे हमारे पीछे लगपड़ते। फ्रांसिस, कुंजविहारी तथा महेन्द्र नामके हमारे मित्र थे। हमलोग बुरी बात नहीं बोलेंगे, बुरी बातोंपर कान नहीं देंगे इस प्रकारका संकल्प कर लिये थे। "गुरु गोविन्दको छोड़ दूसरी कोई चिन्ता नहीं करना" प्रभु जगद्बन्धुके इस उपदेशका पालन करूँगा यह निश्चय कर लिया था। बात बोलने जानेपर महापुरुष वा ईश्वरके सम्बन्धमें ही बात बोलूँगा अथवा स्कूलकी पढ़ाईके सम्बन्धमें बोलूँगा। इसके अतिरिक्त समयमें मौन रहकर ईश्वरकी ही चिन्ता करूँगा। बन्धु फ्रांसिसके संसार त्याग करनेपर चित्त और भी उदास हो गया था। कुंजविहारी एवं महेन्द्रके साथ स्कूलसे छुट्टी हो जानेपर घर आनेपर भी निर्जन मन्दिरमें बैठकर सत्संग हुआ करता था। कुचाली छात्रोंको यह पसन्द नहीं होता था। वे अपने दलमें भिड़ानेकी चेष्टा करते। वहुत ही विरक्तिकारी थे उनके व्यवहार। झगड़ा ही कितना किया जाय, घृणा करनेकी भी कुछ सीमा है। जो कुछ हो, हम लोग यथा संभव आत्मरक्षा करते हुए चलने लगे। कुंजविहारीको अनेकोंने साधु बोलकर उपहास किया करता। परोक्ष में हम लोगोंको भी साधु कहता। सत् होना ही मानो अपराध—अनुचित है। विद्वेषीकी दृष्टिसे यह दोष है। बंगाली

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

छात्र समाजका पतन उसीसे प्रारंभ हो गया। अब बंगालीके दुर्दिनोंका शेष नहीं।

और एक दुःखकी कहानी तुम्हें सुनाता हूँ। आशा करता कि इससे कई एक छात्र मनोवल प्राप्त करेगा। जहाँ तक याद आती मैं उस समय क्लास एक्स–ए (वर्ग दशवाँ–क) में पढ़ता था। हम लोग जब पढ़ते थे तब हमलोगोंके जैसे कम उमरके लड़केकी संख्या ग्रामीण हाइ स्कूलमें खूब कम थी। अनेक बडे उमरवाले जवान उस समयमें पढ़ते थे। उनमें कोई-कोई विवाहित भी था। पूर्वोक्त युवकके जैसे चरित्रहीन अनेको थे। इसीसे क्लासमें बैठे रहने पर भी अवसरके समय छात्रोंमें परस्पर बुरीवातोंकी ही समालोचना होती थी। हमलोग उसमें योग-दान करते नहीं बोलकर हम लोग सामनेवाले जिस बेंचपर ४।५ जनें वैठते थे उसके बगलमें एवं हाइबेंचमें किसी किसीने लिख देता—"यह साधुओंका स्थान है दूसरा कोई मत बैठो।" व्यंग करनेपर भी मनही मन वे हमसे डरते थे। एक दिन किसी विशेष कारणसे कई घंटा पहलेही स्कूलकी छुट्टी हो गई। बहुतेरे छात्र हौरा करते हुए बाहर निकल गये। मैं अपनी पोथी-पत्रा संभाल रहा था उसी अवसरमें पीछेसे एक मुसलमान युवक मुझसे डेढ़ फुट लम्बा एवं बहुत बलिष्ठ, मेरी छातीपर हाथ लगाया और एक अश्लील बात कानमें कहा। बिजली-चमककी नाईं एक छलांगमें मैं बेंचके ऊपर चढ़कर उसका कान पकड़ लिया और चटपट उसके गालपर कई थप्पड़ लगा दिया। वह मुझसे इतना लम्बा था कि बेंचपर नहीं चढ़ जानेसे

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

उसके कान और गालको नहीं छू पाता। क्लासमें हलचल मच गया। क्या हुआ, क्या हुआ कहके हल्ला हो गया। वह डरपोक लम्पट चोरके जैसा भाग गया। दश बारह दिन तक वह क्लासमें आया नहीं। और व्यर्थ क्या कहें—किन्तु इस घटनाके पश्चात् क्लासके और यहाँ तक कि स्कूलके अनेक छात्र मुझसे भय खाते और सम्मान करते।

किन्तु मनमें हमारे शान्ति नहीं। रण क्षेत्रमें रहके किसीके मनमें शान्ति होती क्या? हमारे मनमें ऐसा होता मानो चारो औरसे शत्रुकुल सानित अस्त्र लेकर हमें घेर रखा हो। क्षणमें हताश होता, क्षणमें पूर्व जन्मके कर्मफलको धिक्कार देकर और भी विषण्ण (विखिन्न) होता। दिनानुदिन युद्ध करके कैसे शान्ति मिल सकती यह मैं समझ नहीं पा सका। पौराणिक कथकोंके मुखसे सुना था एवं किसी-किसी ग्रन्थमें पढ़ा भी था कि भारतवर्षका अतीत काल अतिगौरवमय था। विद्यार्थियोंका परिवेश अति पवित्र था तपोवन, पुण्यभूमि विद्यार्थियोंकी शिक्षाका आयतन था। अपरा विद्या जो लोग अर्जन करते थे वे भी पवित्र परिवेशमें रह सकते थे। उन विद्यार्थियोंके सौभाग्यकी बात एवं अपने लोगोंके दुर्भाग्यकी बात सोचने पर मन विपण्ण हो जाता था। चित्त भाराक्रान्त होता था, किन्तु कोई उपाय नहीं।

भारत पराधीन, आज प्राय सात सौ वर्षसे पराधीन! इस पराधीनताके निष्पेषणसे वह अपना आदर्श एवं संस्कृतिको भूल गया है। विधर्मियोंके अत्याचारसे आत्मचेतना क्षीण हो गई है।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

विधर्मियोंके अधीन तथा उनके संश्रवमें बहुत दिन तक रहनेसे मनोबल खो दिया है। पाँच सौसे भी अधिक काल मुसलमानोंके अधीन रहकर एवं प्राय दो सौ वर्ष अंग्रेजोंके अधीन रहकर भारतकी जो अपनी संस्कृति और आदर्श है उसे प्राय भूलते जा रहा है। इसीसे कविगुरु रवीन्द्रनाथ दुखी हो इस प्रकार गाये थे—

"पश्चिममें आज खुला है द्वार,
वहाँसे लाते सब उपहार।
....
जायगा नहीं लौट, भारतके महामानव सागरके तीर।

युग युगमें—युग युगमें क्यों प्रत्येक शताब्दीमें भी भारतमें अनेक महापुरुष आ जाते जो आत्मविस्मृत जातिको जगाकर पथ दिखा जाते। भारत आकाशमें नक्षत्रके जैसे उनके उदित नहीं होनेसे अन्यान्य प्राचीन जाति तथा देशके ही जैसे भारतकी आर्य-जाति भी अपनी संस्कृति तथा आदर्शके साथ साथ एक-बारगी विलुप्त हो गई रहती। किन्तु दुःखका विषय यह है कि अनेक समय भारतीयोंमेंसे अनेकोंने विदेशी वा विधर्मीके साथ योगसूत्र रखनेके लिये एक मिश्रित संस्कृतिकी सृष्टि कर दी है। वर्त्तमान कालमें भी भारतीय सभ्यता बोलकर जिसको उच्चपदस्थ एवं तथाकथित शिक्षितगण ग्रहण किये हैं वह भी विमिश्र है, शुद्ध

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

नहीं। प्रत्युत जनसाधारणमें ही असली भारतीय संस्कृति देखनेमें आती है।

सो जो कुछ हो, अंग्रेजोंके आदर्शानुसार स्थापित विद्यालयोंसे किरानी, डाक्टर, वकील, दलाल, हाकिम आदि अनेकों तैयार होने पर भी भारतीय आदर्शानुसार कै आदमी यथार्थ मनुष्य स्वरूप-में गठित हुए यह कहना कठिन है। मुसलमानगण भारतीय सभ्यताके बाहरी अंगको घात किये थे। अंग्रेजोंने धीमा विषका प्रयोग करते करते जातिके भीतरी मनुष्यको बिलकुल मृतवत् कर छोड़ा है। इसीसे क्या शिक्षाक्षेत्रमें क्या समाजमें कहीं भी आत्म-ज्ञान लाभकी कोई बात नहीं। जो कुछ है वह नहींके बराबर अति क्षीण।

सौभाग्यसे मैं जिस स्कूलमें पढ़ता था उसके दो तीन जन शिक्षक भी कुछ आदर्शवादी थे। वे किसी किसी दिन छात्रोंको चरित्रगठन विषयमें सदुपदेश दिया करते। हेडमास्टर महाशय श्री विजयकृष्ण गोस्वामीजीके परमभक्त थे। वे क्लासमें पढ़ाते-पढ़ाते, अच्छी कविताको समझाते समझाते भावके आवेशमें रोने लग जाते थे। किसी किसी दिन भावावेशमें अपने आसनसे उठकर हमलोगोंका गला पकड़कर बालक जैसे रोदन भी करने लग जाते थे। उनका इस प्रकार भाव देखकर हमलोग किसी किसी दिन स्तंभित हो जाते थे। मन ही मन सन्तुष्ट होते। हेडमास्टर महाशय-के विरुद्ध अभियोग स्कूलके अधिकारी वर्गके कानमें पहुँची। वे पागलके जैसे क्लासमें बैठकर छात्रोंका गला धरके रोते और मैं

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

पापिष्ठ, अधम इत्यादि बातें बोलकर विलाप करते हैं। अधिकारी वर्ग उनको सतर्क कर दिये।

जो कुछ हो, अन्धकार एवं प्रकाश सम्मिलित जीवनके इस प्रकार एक पथसे चलने लगा। किसी किसी समय अन्धकार जब अधिक मालूम होता तब हताश भाव बेशी जगता। विषादग्रस्त दोलायमान चित्तसे निर्जन स्थानमें बैठकर अनेकों दिन काँदा था। तब तक भी ईश्वर सम्बन्धमें स्पष्ट धारणा नहीं थी। देवताओं और महापुरुषोंके ऊपर ही तब श्रद्धा थी। एक दिन व्यथित हृदयसे रोते रोते सो गया। कब निद्रा आकर अपनी सुशीतल स्नेहमय गोदीमें उठा ली थी मैं नहीं जान सका।

गाढ़ी रातके समय सपनेमें देखा—मैं घरसे बाहर होकर गृह देवताको प्रणाम कर मन ही मन सबोंसे विदाई लेकर जीवनकी जययात्राके पथमें अग्रसर हो रहा हूँ। घरकी सीमा अतिक्रम कर नहीं पाया था कि सहसा एक ज्योतिर्मय रूपमें ठाकुर श्री श्रीराम-कृष्ण परमहंसदेव हमारे पीछेसे पुकारे—"अरे सुन।" तत्क्षण ही द्रुतगतिसे निकट आकर मेरा दायाँ हाथ पकड़के सामने खड़े हो गये। उनके मुखकी ओर ताकने पर पहचान लिया। आनन्दसे हमारा, मन, प्राण भर गया। याद आई—"मैं तो तुम्हें चाहा नहीं जीवनमें, तुम क्यों इस अभागेको चाहते।" मैं बोला—'अहा, तुम! यह बोलते बोलते ही वे मुझे अपनी छातीमें लगाकर गद्‌गद कंठसे कहने लगे " कहाँ जाते हो! जाने नहीं दूँगा। अरे, इतना डरता क्यो? माँझी जिसका पक्का उसकी नौका कहीं

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

डूबती रे!" ऐसे बोलते बोलते छातीसे लगाकर मुझे ठाकुर (गृत देवता) घरके बरामदेमें ले गये। वहाँ बैठकर अनेक बातें कही। "तेरे साथ इस जन्ममें परिचय नहीं रहनेपर भी मैं तुझे खूब स्नेह करता, तेरे प्रति मेरी दृष्टि और आशीर्वाद सर्वदा ही रहता।" अन्तमें जानेके समय कहे—"जानेका समय होनेपर गुरु बुला लेंगे।" यह बोलते बोलते चले जाने लगे—उनको जाने नहीं दूँगा मनमें विचारकर उनको पकड़ने गया, किन्तु पकड़ सका नहीं। इतनेमें मेरी नींद टूट गयी।

निद्राभंगके बाद मैं नये बलसे बलवान हो उठा। एक अनुभूतपूर्व आनन्दके स्रोतमें भसने लगा, जैसे नया जीवन लाभ किया हो। जो कुछ देखता सभी नया, जो कुछ करता वह जैसे नये ढंगसे हो जाता। प्रति पदक्षेपमें जीवनका नूतनत्व खूब ही स्पष्ट प्रतीत होने लगा। क्रमशः प्रतिकूल व्यापार सब कम होता गया। जो लोग कुक्रियासक्त, आजीवन उसी पथसे चलते आये वे भी अब हमारे सामने कोई असत् प्रसंगका उत्थापन करनेमें साहसी नहीं हो पाते थे। इसके पहले जो सब कुक्रियासक्त व्यक्ति सामने बैठकर बुरी बात बोलने जानेपर अनुनय विनय अथवा कोई बाधाको नहीं मानते थे; आश्चर्य! कि एक ऐन्द्रजालिक शक्ति प्रभावसे क्षणमें ही वे भयभीत और लज्जित होकर दूसरा ही भावको ग्रहण कर लेते। धन्य उनकी लीला!

यद्यपि जाग्रत अवस्थामें किन्हींमहापुरुष (जो देहका त्यागकर चुके थे) साक्षात्कार लाभकर पाया नहीं, स्वप्नावस्थामें किन्तु

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

अनेक महापुरुष दर्शन देते एवं जीवनका पथ दिखा देते थे। अनेक भविष्य अशुभ घटनाओंकी बात कहके उससे रक्षा पानेका भी उपाय बोल देते। इसीसे हताशोन्मुख जीवन पुनः आशासे परिपूर्ण हो जाता। एक दिव्य प्रेरणासे अन्तर जाग उठता। उन महापुरुषोंमें श्री श्रीरामकृष्ण परमहंस, श्री श्रीविजयकृष्ण गोस्वामी श्री श्रीप्रभु-जगद्बन्धु, श्री श्रीलोकनाथ ब्रह्मचारी ही विशेषकर आते थे। बीच-बीचमें श्रीगौरांग देव, श्रीशंकराचार्य तथा श्रीबुद्धदेवको भी देख पाता था।

—:※:—

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

बन्धुकी मृत्यु होनेपर

मैं उस समय क्लास VI वा VIII ए में पढ़ता था। प्रतिवेशी (पड़ोसी) एक समवयस्क क्रिस्तान बालक हमारा सहपाठी एवं मित्र था। बहुत अन्तरंग मित्र वह था। हठात टाइफोवाइड रोग होनेसे उसकी मृत्यु हो गई। उसकी रोगशय्याके बगलमें बैटकर भी भविष्यकी अनेक बातें होती रही। वह बड़ा होनेपर देशकी सेवा करेगा अर्थात् उसके अपने ईसाई धर्मका प्रचार करेगा एवं ध र्मिक जीवयापन करेगा, ऐसा बोलता था। किन्तु विधाताका विधान दूसरा ही प्रकारका था। मृत्यु उसे ग्रासकर ली। उसके शव (लाश) को जब उन लोगोंके गिरिजाके संलग्न कब्रिस्तानको ले जा रहा था एवं उस शवके पीछे-पीछे उसकी माता तथा आत्मीयगण आर्त्तनादकर अश्रुपातकर रहे थे, वह दृश्य मुझे अभिभूत (स्तब्ध) कर दिया। उसका नाम था फ्रान्सिस। मेरे खेल धूपका उत्साह बिलकुल कम पड़ गया। पढ़ने लिखनेका भी उत्साह बहुत कुछ कम गया। मनुष्य कहाँसे आता, मरकर कहाँ जाता इसीकी चिन्ता मैं एकाग्र चित्तसे करने लगा। निर्जन मैदानमें बैठकर मनसे पुकारता प्रिय भाई फ्रान्सिस, तुम कैसे हो ? वहाँकी दुनियाँ कैसी है यह एकबार आकर मुझे कह जाओ। वहाँ भी क्या जाड़ा गरमी होती है ? वहाँ भी क्या चंद्र सूर्य हैं ? वहाँ भी क्या माता भ्राताका स्नेह वा रोग

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

शोक है ? वहाँ भी क्या हिंसा द्वेष प्रभृति है, तुम एकबार आकर कह दो। तुम्हारे पास पहुँचनेकी रास्ता यदि मुझे ज्ञात रहता तो मैं प्रतिदिन ही तुमसे एकबार मिल आता। किन्तु वह पथ तो ज्ञात नहीं है। उस पथकी वार्त्ता कोई कह सकता नहीं। तुम्हारी माँ रोती हैं, तुम्हारे भाई लोग भी रोते हैं, वे भी तुम्हें देखने चाहते। तुम सिर्फ एकही बार आकर कह दो कि तुम स्वर्ग राज्यमें सुख चैनसे हो। सुना है कि जो लोग स्वर्ग जाते हैं वे पृथिवीके लोगोंको देख पाते, इच्छा करनेपर दिखाई भी दे सकते। तुम क्या वैसा नहीं कर सकते ? स्वर्ग क्या इस पृथ्वी जैसा एक देश है ? वहाँ जो रहते उनके शरीर किस रूपके होते, तुम्हारे उस देशमें भी क्या फल फूल नद नदी स्कूल कॉलेज है वा नहीं, वहाँ भी बालक, युवा, वृद्ध हैं या नहीं इन कई बातोंको जाननेकी इच्छा होती है। जीवित अवस्थामें तुम कहते कि क्रिस्तान लोग मृत्युके बाद फिर जन्म नहीं लेते, अपने कर्मफलके अनुसार स्वर्ग वा नरकमें जाते। मृत्युके बाद ईश्वर-के दरबारमें उसका विचार होकर स्वर्ग वा नरकमें भेजनेकी व्यस्थाकी जाती है। मैं कहता था—हिन्दू धर्म कहता कि मृत्युके बाद फिर जन्म होता है। वासना और कर्मफलके क्षय हुए बिना बारंबार जन्म ग्रहण करना पड़ता है। स्वर्गमें जाता फिर इस जगत्में लौटकर आता नरकमें जाता फिर वहाँसे भी लौटकर आ जाता है। केवल जो भगवानको प्राप्त करते वे लौटकर नहीं आते। वे स्वर्गके भी ऊपर चले जाते। कोई भगवानके पास रहता, कोई उनके साथ मिल जाता, नदी जैसे समुद्रमें मिल जाती है वैसे ही बंधुभावसे हम

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

दोनों में परस्पर मतवाद चलता था। स्वर्गको तो हम दोनों ही मानते किन्तु पुण्यके क्षय हो जानेपर स्वर्गसे फिर जगतमें आना पड़ता है, बार-बार इसी प्रकारसे यातायातकी शृंखला चलती रहती है। ये सुनी हुई कई बातें मैं उसे कहा करता। वह प्रति रविवारको गिरजा जाता वहाँ पादरियोंके मुँहसे सुनता कि स्वर्ग वा नरकसे कोई लौट-कर नहीं आता। जो लोग पवित्र आचरणवाले होते हैं वे ही स्वर्ग जाते, ऐसी बातें वह हमें कहता था।

तुम तो भैया पवित्र थे, बालक थे संसारकी कोई भी कालिमा तुम्हारे जीवनको स्पर्शकर पायी नहीं इसीसे मुझे दृढ़ विश्वास है कि तुम नरकमें नहीं, स्वर्गमें ही गये हो। उस स्वर्गमें तुम किस अवस्थामें हो वही जानना चाहता हूँ। वहाँ क्या खाने, सोनेका कमरा है या नहीं; खेलने वा गप करनेवाले संगी हैं या नहीं इत्यादि कई बातें जाननेकी इच्छा होती।

एक दिन निर्जन मैदानमें संध्या समय बैठकर इस प्रकार भावनाकर रहा था उसी समय दूरसे गिरजा घरके घंटाका शब्द सुन पाया। हिन्दुओंके घरोंमें भी संध्याका प्रदीप जलाके कोई-कोई शंख बजाता था। मेरे कानोंमें वह एक स्वर्गीय ध्वनिरूपसे बज उठा उस आधे प्रकाश आधे अंधकारमें निर्जन मैदानमें केवल एक ही मीठी बोली सुन पायी—"मैं सुखसे ही हूँ।" फ्रान्सिसका कंठस्वर, अहा कैसा मधुर उसका कंठस्वर! अनमना नहीं होनेपर मेरे समझसे वह कंठस्वर सुना नहीं जा सकता। उस समय हमारे मनकी एक गंभीर अवस्था हो गई थी। पीछे कितना हूँ चेष्टा करनेपर उस

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

अवस्थाको नहीं चला सका। समझ पाया कि मन प्रशान्त नहीं होनेसे फ्रान्सिसका अथवा उसके जगत्के लोगोंका साक्षात्कार होगा नहीं। और भी कितना क्या मनमें सोचा। इस प्रकार संध्या समय और भी कई एक दिन चेष्टाकी उस गिरजा घरके घंटाध्वनि उस शंख शब्दके साथ मनको शान्तकर फ्रान्सिससे मिलने उसकी बातें सुननेकी किन्तु सब ही अस्पष्ट कल्पना मिश्रित। विचारता कि इस शरीरसे जिसके निकल जानेपर मृत्यु होती उसको क्या मनुष्य देख पाता नहीं ? नींद जब आतीं तब जगे-जगे कौन सोता उसको पकड़नेकी बहुत चेष्टा करनेपर भी असफल रहा। किसी-किसी दिन सारी रात जगा रहा। नींदसे यदि जाग सकता तो मरकर फिर क्यों नहीं आ सकता हमारे लड़कपन बुद्धिमें इस प्रकार कितने प्रश्न उठते थे।

एक दिन 'अभिमन्यु बध' अभिनय देखने जानेपर हमारे चिन्तनजगत्में और भी आलोड़नकी सृष्टि हो गयी। आह! कैसा निष्ठुर मनुष्य! एक बालकको अनेक वीर योद्धाओंने घेरकर हत्या कर डारा। किसलिये ? राज्यके लालचसे ही न ? जिस राज्यसे ये योद्धागण चले जानेमें बाध्य होंगे, जिस राज्यमें ये योद्धागण वृद्ध होकर बलहीन होंगे, कदाचित् रोगसे शय्याशायी होकर अधिक दिन तक पड़े रहेंगे, अथवा ये भी अपने शत्रुओंके हाथसे निहत हो सकते, क्या ये ही राजा, ये ही श्रेष्ठ हैं। इतने हिंसक, इतने निष्ठुर कैसे श्रेष्ठ मनुष्य हो सकते ? एक दो व्यक्ति नहीं शत सहस्र, लक्ष लक्ष, कोटि कोटि राजा तथा सैन्यगण एकत्रित हुए

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

उस कुरुक्षेत्रकी लड़ाई करनेके निमित्त। जिस जगत्‌को छोड़कर चल देना पड़ेगा फ्रान्सिसके जैसे उस जगत्‌में इतना खींचा-खींची, इतनी मारकाट क्यों? कुछ जमीन, कुछ घरबाड़ी, नदी नाला वा फल फूल पेड़ोंके लिये एक आदमी दूसरे आदमीको इस प्रकार हिंसा करता क्यों? कोई तो यहाँ चिरकाल रह पाता नहीं। मरे पीछे फिर कहाँ जन्म लेगा उसकी भी कोई स्थिरता नहीं। तो भी मनुष्य इतनी मारकाट करता क्यों? प्रकृतिके विधानसे जिस प्रकार मनुष्य जगत्‌में आता उसी प्रकार प्रकृतिके विधानसे ही मृत्यु आकर उसे जगत्‌से उठाकर ले जाती, तो भी इतने थोड़े दिनोंके लिये एक दूसरेको सह नहीं सकता, विद्वेष प्रज्वलित हो उठता! भाई भाईकी हत्या करता, स्त्री स्वामीकी हत्या करती, पुत्र पिताकी हत्या करता, धनके, राज्यके लोभसे। इतिहासमें पढ़ा था—अलाउद्दीन खिलजीने राज्यके लोभसे अपने वृद्ध ताऊकी हत्या की थी। इतिहासमें पढ़ा था—औरंगजेबने राज्यके लोभसे अपने पिताको कारावास दिया था। पौराणिक कथावाचकोंसे सुना है तथा बालकोंके पाठ्य महाभारत पुस्तकमें पढ़ा है कि कौरव तथा पांडवगण परस्पर भाई थे। राज्यके लोभसे वे विनष्ट हो गये, लाखों लाखों लोग कुरुक्षेत्र युद्धमें मारे गये। इतनी हिंसा इस जगत्‌में ' इस पर भी मनुष्य यहाँ आता क्यों? क्यों घर-बार करता, क्यों यहाँ रहनेकी इतनी चेष्टा करता? मैं ही वा स्कूल जाता क्यों? भविष्य कैसा क्या? ओह कैसी प्रहेलिका, कैसा अन्धकार होकर चलना पड़ता है। आश्चर्य यह जगत्, आश्चर्य यह मानवगोष्ठी! केवल आश्चर्य ही

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

नहीं, तीता अत्यन्त तीता। यह तो बड़ा भयंकर स्थान है। तो भी यहाँ रहना पड़ेगा, यहाँ लिखना-पढ़ना होगा! फ्रान्सिस—प्रिय बन्धु फ्रान्सिस? तुम जिस जगह गये हो वह स्थान यदि इस जगत्की अपेक्षा सुखकर हो, तुम यदि वहाँ सुखसे रह पाते हो तो अपने बन्धुको भी एक बार बुला लो। मैं जगत्की तिक्तता प्रबल रूपसे अनुभव कर रहा हूँ। यहाँ किस तरह दिन काटूँगा सोचकर उसका अन्त नहीं मिलता। तुमने इस तीते स्थानका त्यागकर अच्छा ही किया है। मैं समझता हूँ कि तुम मुझसे अधिक भगवानके प्रिय थे, इसीसे बचपनमें ही भगवान तुमको इस तीते जगत्से उठाकर स्वर्ग ले गये हैं।

चित्त बहुत चंचल। फ्रान्सिसकी चिन्तामें गहरे रूपसे डूबने चाहनेपर भी डूब नहीं सकता था। किसी किसी दिन चेष्टा ऐसा करता मानो मैं ही फ्रान्सिस हो गया हूँ। उसके शरीरमें प्रवेश किया, उसी रोगशय्यापर लेट गया, बस मृत्यु हो गई और स्वर्ग पहुँच गया। कल्पनाकर बिस्तरेपर लेट रोगसे शय्याशायी हो गया हूँ यह खूब गंभीर भावसे भाव सकता था, किन्तु देहसे किस तरह निकलकर स्वर्ग जाऊँगा उसका रास्ता खोज पाता नहीं था। इस प्रकारकी भावना करते करते मैं भी रोगाक्रान्त हो गया। बहुत दिन तक रोगका भोग किया यहाँ तक कि एक दिन मृत्युतुल्य मूर्च्छा भी हो गई थी। किन्तु मृत्यु क्या है तथा मृत्युके पर-पारमें क्या है वह रोगशय्यापर लटे लेटे बारंबार चिन्तन करनेपर भी उसका अनुसंधान कर पाया नहीं। रोगमुक्त होनेपर विचार किया

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

कि अब मैं इसी पथका अनुसंधान करूँगा। मनुष्य कहाँसे आता फिर कहाँ जाता है। इस तीते जगत्में आनेका पथ रुद्ध किया जा सकता या नहीं। इसीसे क्लासका पाठ पढ़ लेनेपर जो थोड़ा बहुत धर्मग्रन्थ प्राप्त होता उसीको पढ़ता था। पुराणोंकी कथा कथावाचक महानुभावोंके मुखसे श्रवण करता, किन्तु हमारी समस्याकी मीमांसा तब भी हो पायी नहीं।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

दिव्य जगत्का इंगित

आई दिव्य जगत्से वीणाकी मधुर झंकार। हृदयमें बैठकर जैसे कोई एक रमणीय वीणा बजा रहा है। क्षण में सुनता हृदयके अन्दर, क्षण ही अन्तर फिर सुन पाता दूर दूरान्तर। केवल वीणा ही की ध्वनि नहीं, मृदंगकी ध्वनि, और भी कितने प्रकारकी ध्वनि। वह ध्वनि आकर्षण करती, मुग्ध करती, आत्महारा करती। वह है रम्यवीणा, वह है सोनेका नूपूर। कान पात (लगा) कर सुननेका काम नहीं। वह सुस्पष्ट ध्वनि जगत्की कुल ध्वनियोंको पराजितकर एक रमणीय सुरसे बजती। दिग्भ्रममें डालती यह ध्वनि। मृग जैसे अपनी नाभीके गंधसे इतस्ततः दौड़ता है, भ्रममें पड़ता है, उसी प्रकार हृदयसे यह ध्वनि निकलनेपर भी वह बाजा पहचाना नहीं जाता। निकट और दूर भी। कौन बजाता, कैसे बजाता, कैसा उसका स्वरूप कुछ भी देखनेमें नहीं आता। केवल बजता, यह रमणीय वीणा बजती, सोनेका नूपुर बजता। क्षण ही क्षण शरीरके प्रति अणु परमाणुमें इस ध्वनिकी मूर्च्छना सुनी जाती है। सुन पाते स्नायुमें, अस्थिमें, मज्जामें। और भी बजती दूर आकाशमें वायुकी सन्-सन् ध्वनिके साथ यह अमृतमय वाणी। मधुर, अति मधुर। इच्छा होती कि दौड़ जायँ उस दिव्य पुरुषके पास जहाँसे आती यह मधुर ध्वनि। किन्तु रास्ता तो देखा हुआ नहीं। कौन

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

गंभीर गुहा (गुफा) में बैठकर वे निरालेमें अपने मनसे उस वीणाको बजाते उस राजका पथ तो जाना हुआ नहीं। जिसकी वाणी इतना मधुर जिसकी वीणाकी झंकार इतना सुललित वह तो मधुकी खान है। जिस राज्यसे आती ऐसी सुमधुर ध्वनि वही तो है दिव्य राज्य। फ्रान्सिस संभवतः उसी राज्यमें गया है। तब उस दिव्य राज्यको छोड़ उस दिव्य पुरुषको भूल मैं क्यों यहाँ रहनेका ? तब मैं क्यों यहाँ काया छोड़ छाया जगत्में, बिम्ब छोड़ प्रतिबिम्बके जगत्में ? बजाओ, अजी बजाओ अपनी रमणीय वीणा और भी ऊँची तानसे बजाओ। शब्दवेधी बाणके जैसे मैं इस नादको लक्ष्यकर तुम्हारे ही राज्यमें जाऊँगा। यह क्या वाक ब्रह्म ? वह ब्रह्म ही, वह चिन्मय विभु ही वांमय होकर आकर्षण कर रहे हैं। उनकी इतनी कृपा ? मालूम होता है जैसे सिन्धु उछल पड़ा है। वहाँ मानो प्रेमके राज्यमें बाढ़ आ गई है, तभी तो जल-प्लावन होगा। प्लावित करेगा, अभिषिक्त करेगा, भसायगा, डुबायगा उस प्रेम सिन्धुमें ! कितना दूर ? हो न कितना हू दूर। बाढ़ जब आ जायगी, कपड़ा भसायगी तब उस समय दूर दूरान्तरका भेद रहेगा नहीं। मैं तो उन्हींको चाहता। सब धन खोकर उन्हींको चाहता। यह स्थान बहुत अनचिन्हार (अपरिचित)। यह राज्य बड़े बन्धुका है—बहुत ही विघ्नसंकुल है। तो भी लोग यहाँ धन, जन, मान चाहते क्यों ? वे अगणित मनुष्य क्यों मुग्ध हो जाते ? क्या वे सिन्धुका पुकार सुन पाते नहीं ? उनके जीवन राज्यमें क्या वीणा नहीं है ? तब क्यों इतना प्रलुब्ध होते इस पृथ्वीकी धूलमें—काम

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

कांचनमें ? क्या वे दिव्यराज्यमें जाना चाहते नहीं ? उनकी बात रहने दो। हमें तो उसने पुकारा है, हृदयसे पुकारा है, उस पारसे पुकारा है। सुन पाता मधुर गुंजन, प्रस्रवण (झरने) की कल-कल ध्वनि मधुरसे अतिमधुर। कवि लोग प्रायः यही ध्वनि सुननेपर कवि होते। गायक लोग प्रायः उसी सुरको सुनकर सुरकी साधना करते। मैं तो कवि नहीं; गायक भी नहीं हूँ। मैं तो केवल अभिलाषी हूँ उस दिव्यराज्यका। मैं चाहता केवल उस दिव्य पुरुषको। उस रमणीय वीणाकी झंकारसे मैं मुग्ध, दिग्भ्रान्त।

इस ध्वनिके साथ-साथ भसकर आती एक दिव्यरूपकी झलक-ज्योति। नक्षत्र खचित आकाशमें वह ज्योति देखी जाती नहीं। चाँदकी ज्योत्स्नामें उसका संधान मिलता नहीं। अग्नि और सूर्यके प्रकाशमें भी वह ज्योति उद्भासित होती नहीं। रूप नहीं रूपकी छटा। वह वे नहीं हैं, उनके रूपकी झलक। वे क्या इतने सहज (आसानी) से आयँगे ? मेरा क्या इतना बड़ा भाग्य है ?

"दर्शन जब देते नहीं,
दो आँखें तब क्यों दिये,
क्यों दिये ये मन औ प्राण ?"

मैं समझता हूँ, तुम इसी तरहसे आते। पहले सुनाते अपनी वीणाकी ध्वनि, दिखाते अपने रूपकी झलक, पीछे आते तुम मेरे हृदयके कुल अन्धकारको विनष्टकर राजराजेश्वरके वेशमें। ऐ जीवनके राजा, ऐ हृदयके राजा! यही मानो तुम्हारी रीति है।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

आज्ञाचक्रसे रूपकी झलक दिखाते, अनाहतसे अपनी रमणीय वीणा बजाते। अनाहत केन्द्रसे बार-बार शतबार उच्चारित होती वह मधुर वाणी, क्षण ही गानके आकारमें क्षण ही वाणीके आकारमें। और इस आज्ञा चक्रके केन्द्रसे उद्भासित होती रूपकी झलक। इन दो केन्द्रोंके साथ तुम्हारे दिव्य राज्यका क्या सम्बन्ध है वह मैं नहीं जानता। सुना है—तुम जिसपर कृपा करते वह सुन पाता है तुम्हारी वीणाकी रागिणी उस हृदय गुहामें। वही देख पाता उस दिव्य ज्योतिको भ्रूयुगलके मध्यस्थलमें। जिस देहपुरका अवलम्बनकर मनुष्य तमसाच्छन्न होकर, अहंकारसे मत्त होकर अति कदर्य वस्तुमें लिप्त होता, मुग्ध होता; उसी देहपुरके अवलम्बनसे ही तुम अपने हाथमें वीणा लेकर रूपकी छटा दिखाते-दिखाते अवतरण करते आज्ञाचक्रमें, अनाहत चक्रमें। तुम इस प्रकार ही योगस्थापन करते बोलकर तुम्हारे भक्तगण योगी कहलाते। वियोग विधुर भक्तगण अन्तरमें मधुर ध्वनि सुनकर योगी सजते। उस आज्ञा चक्रमें रूपकी झलक देखकर तुम्हारे दिव्य रूपको देखनेके लिये ध्यानमग्न होते। तुम्हारा दर्शन मिलनेपर, मैं समझता, फिर कभी वियोग होता नहीं। और तुम्हारे संसारके साथ योग होनेपर सदा ही वियोग विधुर होना पड़ता। तो भी क्यों वियोगके पथमें बार बार मन धावित होता? अजी योगीगणके राजा तुम अपनी रम्य वीणा हाथमें लेकर कब आके सामने खड़े होओगे? केवल वाणी देकर भुला नहीं रखना, केवल रूपकी छटा देकर ही मुग्ध नहीं करना।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

जानता मैं जानता इस छायाके जगत्‌में इस मायाके जगत्‌में तुम अपने दिव्य वेषमें आ सकते नहीं। तुम तो राजा, तुम तो चिन्मय विभु। तुम्हारी खेल सामग्रीके मध्य तुम भी एक तुच्छ सामग्री हो पड़ोगे यह तो संभव नहीं। इसीसे तुम खींच लेते, ऊपर टान लेते और इसीसे तुम उस दिव्य जगत्‌से वह रमणीय वीणा बजाते। इस पुतलेके जगत्‌से इस छायाके जगत्‌से उस वीणाके सुरसे आकर्षणकर लेते गहरे और भी गहरे तुम अपने सिंहासनके पास। प्रेममय! ऐसा ही है तुम्हारा प्रेमका-खेल।

पुतलेके साथ खेल छोड़कर, छायाके साथ खेल छोड़कर तुम्हारे साथ खेल खेलना वह तो बहुत ही प्रिय है। किन्तु तुम तो दूर अतिदूरमें हो। हमारा शब्द वेधी हृदय बाण, हमारा शब्द वेधी ईक्षण, मनन उतना दूर पहुँच सकता नहीं। इसीसे जब ध्वनि सुनपाता, जब रूपकी झलक देख पाता तब चलते, आगे बढ़ते। तुम्हारा गान जब रुक जाता, तुम्हारे सुरकी मूर्च्छना भी जब नहीं रहती तब मैं दिग्‌भ्रान्त हो जाता हूँ। तुम्हारे रूपकी छटा जब मेरे दृष्टिपथसे अपसारित (ओझल) होती तब कुज्झटिका (कुहासा) से मेरी दृष्टि आच्छादित हो जाती है। जगत्‌के सुरसे सुर मिल पाता नहीं। तुम्हारे सुरका भी अनुसंधान पाता नहीं। यह तो जीवनका बड़ा दुर्दिन। हे विश्व पिता! हे विश्व बान्धव! तुम्हारे उस दिव्य रूपसे हमें वंचित नहीं करना। तुम्हारे रूपकी झलक बुतने नहीं देना। वह तो जीवन पथका प्रदीप है। बुताओ नहीं, अजी बुताओ नहीं, तुम्हारे रूपकी दीपशिखा मेरे

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

दृष्टिपथसे बुताओ नहीं। तुम आवाज दो, अजी और भी निकटसे पुकारो। बहुत दुर्गम पथ है। भीतर बाहर शत्रु लगे हैं। तुम पुकार दो—अपनी रमणीयवीणा बजा दो। अविराम उसवीणाको बजाओ। मेरे अचेतन रहनेपर बजाओ, दिग्भ्रान्त होनेपर बजाओ, मोह मुग्ध होनेपर भी बजाओ। मैं शब्दवेधी बाणके जैसे उस नादको लक्ष्यकर तुम्हारे ही दिव्य धाम पहुँचूँगा। तुम्हारे रूपकी झलक देखते-देखते तुम्हारे दिव्य रूपसे उद्भासित हो जाऊँगा।

यह नाद और ज्योति अस्पष्ट होनेपर भी हमें मुग्ध कर दी। मेरे जीवनमें एक दिव्यराज्यका इंगित प्रदान किया। इस बार पथका अनुसंधान पानेसे उस दिव्य राज्यमें प्रवेश करूँगा। "तव हृदय गलेगा नहीं, चरण भी टलेगा नहीं किसीके करुण क्रन्दनसे।"

———

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

कर्मके स्रोतमें

मेरा स्कूल जीवन समाप्त हो चुका था, और कॉलेज जीवन आरंभ हुआ था। उसी समय भारतवर्षमें महात्मा गांधीजीके नेतृत्वमें सन् १९२१-२२ ई० में असहयोग आन्दोलन चल रहा था। अंग्रेजी शासनके विरुद्ध असहयोग। विलायती सामान व्यवहार नहीं करूँगा, अंग्रेजोंकी नौकरी नहीं करूँगा. अंग्रेजोंके स्कूल कॉलेजोंमें नहीं पढ़ूँगा, उनका शासन नहीं मानूँगा, सब प्रकारसे अंग्रेजोंका संस्रव त्यागकर दूंगा। अनेक किरानी (क्लर्क) अंग्रेजोंके कार्यालय (दफ्तर) छोड़ दिये। अनेक वकील तथा हाकिमने कचहरी छोड़ दिया। अनेक छात्र, शिक्षक और अध्यापकने अंग्रेजके स्कूल कॉलेजोंको छोड़ दिया। अंग्रेज देशके शत्रु, जातिके शत्रु हैं, उनको घायल करना होगा, उनको भारतके सिंहासनसे हटा देना होगा। प्रबल शत्रुको अस्त्रके द्वारा घायल करना संभव नहीं था। इसीसे गांधीने अपने आन्दोलनका नाम रखा अहिंसात्मक असहयोग। बनिया जाति अंग्रेजका वाणिज्य द्रव्य खरीद नहीं करनेपर शासक-अंग्रेजका शासन नहीं स्वीकार करनेसे वे घायल हो जायँगे। विला-यती कपड़ाको छोड़ चरखेकी कती मोटे सूतका मोटा कपड़ा बहुत लोग पहनने लग गये। महात्मा गांधी स्वयं चरखा कातने लग गये। अपने कते सूतका छोटा कपड़ा पहनने लगे। भिखारीका बेष

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

धारण किये। मोटे वस्त्रका आदर होने लगा, महीन कपड़ेके प्रति घृणा उत्पन्न हुई। लाखों लोग आकर महात्मा गांधीके झंडेके नीचे खड़े हो गये। अहिंसा सत्य और त्यागके मंत्रसे दीक्षित हुए। अंग्रेजोंका सिंहासन डोल गया। बनिया-अंग्रेज भीत-संत्रस्त हो गये।

दूसरी ओर बंग-विच्छेद (सन् १९०५–६ ई०) के समयसे जो क्रान्तकारी दल बंगालमें संघटित हुआ था वह भी जाग उठा। दल बाँधकर युवक गण उस गुप्त क्रान्तकारी दलमें सहयोग देने लगे। "युगान्तर" तथा "अनुशीलन समिति" नाम देकर एवं प्रकार और भी विभिन्न दलोंमें विभक्त होकर युवक वृन्द क्रान्तकारी दलका गठन करने लगे। उन लोगोंकी मुख्य बात यह थी—"जिस किसी कौशलसे शत्रुका विनाश करना", चाहे हिंसा ही क्यों न हो, हिंसा अहिंसा कुछ नहीं समझते। समझते केवल देश मातृकाको—जननी जन्मभूमिको। उस जननीको शृंखलभारसे मुक्त करना होगा। कन्हाइ लाल तथा खुदीरामकी आत्मा मानो आकाश बतास-में विचरणकर उनलोगोंको उद्बुद्ध करने लगी। बम (बोंव) फेंककर, रिवॉलवर, (तमंचा) की गोलीसे विद्धकर गोरिल्ला युद्ध (छिपकर लड़ाई) कर देशके शत्रु अंग्रेजोंको घायल करनेके लिये वे व्रती हुए। यह विप्लवी दल विशेषकर वंगालमें ही गठित हुआ था। पंजाब तथा महाराष्ट्र आंशिक रूपसे उस आन्दोलनमें योगदान किया था।

महात्मा गांधी लिये अहिंसाका आश्रयणकर शत्रुको देशसे निकालनेका पथ। और विप्लवी लोग लिये चिर आचरित

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

क्षत्रियोंका पथ। देशकी जब इस प्रकारकी परिस्थिति हुई तब हम लोग भी अंग्रेज गवर्नमेन्ट कॉलेजको त्यागकर नेशनल कॉलेजमें पढ़ने चले आये। मैं मेडिकॉल कॉलेजमें भरती हुआ। मोटी खद्दड़ धोती, कुरता पहन, कंधेपर मोटी खद्दड़की चादर धर वा चादर ओढ़कर अध्यापक वर्ग कॉलेज आते थे। कोई-कोई कम कीमती जूता पहनते। बहुतेरे खाली पाँवसे ही चलते थे जैसे माता पिताका देहान्त हुआ हो। छात्रगण भी देशनेताओं तथा अध्यापकोंका अनुसरणकर खादी पहनने लगे। पार्क-पार्कमें तथा रास्ते-रास्ते देशभक्तगण गीत गाकर खद्दरकी फेरी करने लगे—

> माताका दिया मोटा कपड़ा,
> सिर धरले भाई, सिर धरले।
> माँ तो मेरी दीन दुःखिनी,
> इससे बेशी साध्य नहीं। इत्यादि

स्वेच्छा सेवकोंके करुण कंठका यह करुण संगीत हृदयको द्रवीभूत करता, पाषाण भी पसीज जाता।

नेशनल (राष्ट्रीय) स्कूल, कॉलेज हुए तथा मेडिकल कॉलेज भी हुआ। अध्यापक तथा शिक्षकगण कुछ मात्र वेतन ग्रहणकर अति दीन हीन भावसे जीवन यापन करनेका व्रत ग्रहण किये। तत्कालके समय छात्र, शिक्षक और अध्यापकगण देशके अन्य प्रकारके कार्य भी करते थे। कोई कोई विलायती कपड़ेकी दूकानमें अथवा मद्य वा गाँजाकी दूकानोंमें पिकेटिं (धरना) करते। कोई कोई कानून

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

भंगकर कारावास (जेल) वरण करते कोई कोई गाँव गाँवमें चरखा वितरण करते। चरखा कातनेकी शिक्षा देते। ताँतपर कपड़ा बुननेकी शिक्षा देते। खद्दड़की फेरी करते घर-घर रूई (कपास) का बीज देके रूई पैदा करनेका उत्साह प्रदान करते। याद आती कि मैं भी उस समय खद्दरकी फेरीकी थी। घर-घर चरखा पहुँचाया था। रूईका बीज बहुतोंके घरके आँगनके कोनेमें माटी खोदकर रोप दिया था। चार आना वाला कांग्रेसी मेम्बर अनेक बनाया था। पिकेटकी तथा करवाई। टेबुल (मेज) थपकाकर उच्चकंठसे स्थान स्थानमें वक्तृता भी दी थी। समवेत कंठसे गान भी गाया था—

"आगे चलो आगे चलो दुःख रहेगा नहीं।"

और भी गाया था—

देखे रक्तारक्ति बढ़ेगी शक्ति,
कौन भागता माँ को छोड़।
जाय जीवन चला देश काजमें,
तुमरे काममें वन्देमातरम् बोल।

'वन्दे मातरम्' मंत्रसे देश गूँजित हो उठा। आसमुद्रान्त हिमाचल इस मंत्रसे दीक्षित हो गया। अहिंसकगण दीक्षित हुए, विप्लवीगण दीक्षित हुए। पथ विभिन्न, लक्ष्य एक—मंत्र एक। माँकी शृंखला (जंजीर) भारको मुक्त करूँगा। Swaraj is our birth right'—'स्वाधीनता हमारा जन्मगत अधिकार है।' जाग उठा प्राण, नाच उठा हृदय। मरणजयी वीरगण संकल्पमें दृढ़

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

हुए ।' 'मृत्युको वरणकर लाभ करेंगे अमरत्व।' ओह! उस जागरणमें कैसा उन्माद कैसा आवेग! कौन किसके पहले कारागार (जेलखाना) वरण करेगा, कौन किसके पहले प्राणत्याग कर माँ (भारत) को शृंखलासे मुक्त करेगा इसीको लेकर प्रतियोगिता (चढ़ा-ऊपरी) हो पड़ी। अंग्रेजी शासनका जेलखाना भर गया। नये जेलखाने बनाये गये। मकान किराया लेकर जेल बनाये गये वे भी भर गये। अंग्रेज विचलित हुए, हिंस्र व्याघ्रके जैसे दोषी निर्दोषीका कुछ भी विचार नहीं कर अत्याचार करने लगे। विचारका प्रहसन (हँसी-दिल्लगी) होने लगा। जो दोषी थे वे अपने अपराधका विचार होनेके पहले ही अपराध स्वीकार कर लिया करते। निर्दोषी भी अपने अपराधको प्रमाणित करनेके लिये विचार-प्रार्थी नहीं होते थे। अपने देशके प्रति प्रेम करने, अपनी माताको 'माँ' कहने वा अपनी माताको सीकर (जंजीर) से छुड़ाने चाहनेसे यदि कोई अपराधी होता है तो ऐसा अपराधी मैं भी हूँ, इस प्रकार बोलकर मुक्त कंठसे स्पष्ट सैकड़ों हजारों व्यक्ति जेल जाने लगे। महात्मागांधी बन्दी (कैदी) हुए। और भी देशके अनेक मान्य व्यक्ति कैद किये गये। सुखका संसार छोड़कर, धन सम्पत्ति छोड़कर, जेल जाने लगे।

देशभक्तगण गान गाने लगे—

जितनी होंगी उनकी आँखें लाल,
आँखें हमारी उतनी ही खुलेगी खुलेगी।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

भंगकर कारावास (जेल) वरण करते कोई कोई गाँव गाँवमें चरखा वितरण करते। चरखा कातनेकी शिक्षा देते। ताँतपर कपड़ा बुननेकी शिक्षा देते। खद्दड़की फेरी करते घर-घर रूई (कपास) का बीज देके रूई पैदा करनेका उत्साह प्रदान करते। याद आती कि मैं भी इस समय खद्दरकी फेरीकी थी। घर-घर चरखा पहुँचाया था। रूईका बीज बहुतोंके घरके आँगनके कोनेमें माटी खोदकर रोप दिया था। चार आना वाला कांग्रेसी मेम्बर अनेक बनाया था। पिकोटकी तथा करवाई। टेबुल (मेज) थपकाकर उच्चकंठसे स्थान स्थानमें वक्तृता भी दी थी। समवेत कंठसे गान भी गाया था—

"आगे चलो आगे चलो दुःख रहेगा नहीं।"

और भी गाया था—

देखें रक्तारक्ति बढ़ेगी शक्ति,
कौन भागता माँ को छोड़।
जाय जीवन चला देश काजमें,
तुमरे काममें वन्देमातरम् बोल।

'वन्दे मातरम्' मंत्रसे देश गूँजित हो उठा। आसमुद्रान्त हिमाचल इस मंत्रसे दीक्षित हो गया। अहिंसकगण दीक्षित हुए, विप्लवीगण दीक्षित हुए। पथ विभिन्न, लक्ष्य एक—मंत्र एक। माँकी शृंखला (जंजीर) भारको मुक्त करूँगा। Swaraj is our birth right'—'स्वाधीनता हमारा जन्मगत अधिकार है।' जाग उठा प्राण, नाच उठा हृदय। मरणजयी वीरगण संकल्पमें दृढ़

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

हुए।' 'मृत्युको वरणकर लाभ करेंगे अमरत्व।' ओह! उस जागरणमें कैसा उन्माद कैसा आवेग! कौन किसके पहले कारागार (जेलखाना) वरण करेगा, कौन किसके पहले प्राणत्याग कर माँ (भारत) को शृंखलासे मुक्त करेगा इसीको लेकर प्रतियोगिता (चढ़ा-ऊपरी) हो पड़ी। अंग्रेजी शासनका जेलखाना भर गया। नये जेलखाने बनाये गये। मकान किराया लेकर जेल बनाये गये वे भी भर गये। अंग्रेज विचलित हुए, हिंस्र व्याघ्रके जैसे दोषी निर्दोषीका कुछ भी विचार नहीं कर अत्याचार करने लगे। विचारका प्रहसन (हँसी-दिल्लगी) होने लगा। जो दोषी थे वे अपने अपराधका विचार होनेके पहले ही अपराध स्वीकार कर लिया करते। निर्दोषी भी अपने अपराधको प्रमाणित करनेके लिये विचारप्रार्थी नहीं होते थे। अपने देशके प्रति प्रेम करने, अपनी माताको 'माँ' कहने वा अपनी माताको सीकर (जंजीर) से छुड़ाने चाहनेसे यदि कोई अपराधी होता है तो ऐसा अपराधी मैं भी हूँ, इस प्रकार बोलकर मुक्त कंठसे स्पष्ट सैकड़ों हजारों व्यक्ति जेल जाने लगे। महात्मागांधी बन्दी (कैदी) हुए। और भी देशके अनेक मान्य व्यक्ति कैद किये गये। सुखका संसार छोड़कर, धन सम्पत्ति छोड़कर, जेल जाने लगे।

देशभक्तगण गान गाने लगे—

जितनी होंगी उनकी आँखें लाल,
आँखें हमारी उतनी ही खुलेगी खुलेगी।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

उनकी बंधन डोरी कड़ी जितनी ही होगी,
उतनी ही हमारी बंधन डोरी कटेगी कटेगी ॥

कोई ऐसे गाने लगे—

अकेले चलो अकेले चलो भाई रे !
यदि कोई बात कुछ बोले नहीं ।
सभी रहें मुँह फेर और डरते भी सभी रहें ।
तू सीनाका पाँजर वज्रानलसे जलाकर,
अकेला चलो अकेला चलो भाई रे ।

कविगुरु रवीन्द्रनाथ प्रभृति तपस्विगण विविध संगीत रचना कर होमाग्निमें आहुति देनेकी प्रेरणा देने लगे। कवि नजरूलकी कविता एवं संगीत उन्माद ला दिया। मुकुन्ददास अपने कम्बुकंठ-से संगीत गा गाकर देश-देश गाँव-गाँवमें उत्तेजना ला दी। सागर उछल पड़ा—हिमालय काँप उठा। बंगाल, सिध, पंजाब, गुजरात, मद्रास एवं समग्र आर्यावर्त्त तथा दाक्षिणात्य सचेतन हो उठा। माँ (भारत) की शृंखला शिथिल हो चली।

जिस जगह जनताका समावेश, जहाँ माँकी शृंखलाका भारको हलका करनेके लिये होमाग्निको प्रज्वलित करनेका प्रयास किया जाता था वहाँ अंग्रेज शासक बाधा देने लगे। पुलिसकी लाठी चली, लाठीकी चोटसे कितने घायल हो गये। जगह-जगह बन्दूककी गोलीसे विद्ध होकर कितने धराशायी हुए, चिरनिद्रामें सो गये। अहिंसाको हिंसा दमन करने आई, सत्यको असत्य ग्रास करनेका

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

प्रयासी हुआ। अस्त्रहीन देशभक्तगण अस्त्रधारी उन्मत्त अंग्रेजकी गोलीसे बिद्ध होकर माँ-माँ आर्त्तनाद करते-करते माँके वक्षःस्थलसे विदाई ली। पंजाबमें जलियानवाला बागमें हजारों व्यक्ति अंग्रेजकी मशीन-गन, बन्दूक तथा तोपसे आहत, निहत तथा अचेतन हो गये। देशकी सब ओर दावानल जल उठा। अंग्रेजने सोचा था कि दमन-शासनसे इस जाग्रत देशको फिर सुला देगा। किन्तु उस रक्त गंग-धारासे कबंधगण गा उठे—

देखे रक्तारक्ति बढ़ेगी शक्ति,
कौन भागता माँको छोड़।

देश (भारत) की सब ओर दावानल प्रज्वलित हो उठा, कोटि-कोटि लोग इस अंग्रेजके अत्याचारसे विक्षिप्त हो गये। उन दिनों जो अंग्रेजके भक्त थे वे भी विद्रोही हो गये। महात्मा गाँधीकी होमाग्नि हजारों शिखाओंमें विस्तृत होकर दिग्दिगन्तको प्रज्वलित कर दी। "वन्दे मातरम्" ध्वनि अंग्रेजके हृदयको विदीर्ण करने लगी। हमलोग भी उसी होमाग्निमें आहुति प्रदानकर अपनेको धन्य माना। मरके ही अमर होना होगा। जीवनको आहुति देकर ही अमरत्व लाभ करना होगा। "आगे चलो, आगे चलो, दुःख रहेगा नहीं।"

स्वदेश है भगवानकी प्रति मूर्त्ति, माँ की प्रति मूर्त्ति यही प्रेरणा ऋषि वंकिमचन्द्रके "आनन्दमठ" पढ़कर पायी थी। स्वामी विवेका-नन्दकी उक्तिसे यह प्राप्ति की "जीवसे प्रेम करता जो जन वही

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

करता सेवा ईश्वर की"। जीव सेवाकी है यह महामंत्र। आर्त्तकी सेवा करता हूँ, दरिद्रकी सेवा करता हूँ, देशवासीकी सेवा करता हूँ के माने भगवानकी सेवा करना है। जलाधार विभिन्न होनेपर भी जल एक ही है। आत्मारूपसे एक ही परमात्मा विभिन्न जीव देहमें स्थित हैं। प्रतिदानकी वा प्रशंसाकी प्रत्याशा नहीं रख केवल सेवा करनी होगी। पात्र कुपात्र, जाति, कुलका कुछ भी विचार नहींकर जहाँसे आर्त्तनाद उठेगा वहाँ ही दौड़ जाना पड़ेगा। देश मातृकाकी सेवा करूंगा, बहुरूप धारी नरनारायणकी सेवा करूंगा, बहुके अभ्यन्तर अपनेको देखूंगा, उसीमें अपनेको ढाल दूँगा।

रोगियोंकी सेवा, आर्त्तोंकी सेवा व्यक्तिगत भावसे एवं दलबद्ध होकर अनेकों जगहमें करने लगा। मेलेमें स्वेच्छा सेवक दल गठनकर पिपासितोंको जल दिया है। हेराये हुए बाल-बच्चोंको खोज-निकालकर उनके पितामाताको सपुर्दकर दिया है। भीड़में चँपकर मूर्च्छित हुएको खुली जगहपर लाके सेवाकी है। महामारी (काँलेरा) से जो गाँव आक्रान्त हो गया था, जिस भयसे आत्मीय स्वजन पलायन कर चुके थे तहाँ पहुँचकर रोगियोंकी सेवाकी है। मृतकोंका दाह किया है, मुसलमान मुरदोंको उनकी कबरमें रखा है। तरुण साथियोंको लेकर इस प्रकार नर नारायणकी सेवा बहुत दिन तककी है।

अनेकों सहकर्मी तथा नेता गणके जेल जानेपर उनके कर्म-स्थानमें खड़े होकर उस कर्मप्रवाहको सजीवन रख चुका हूँ। मैं

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

काँग्रेसी होकर देशकी सेवा करनेपर भी काँग्रेसका मेम्बर कदाचित् ही होता था। अहिंसाको मैं व्रतरूपसे ग्रहण नहीं कर सकता था। अहिंसाको व्रतरूपसे वा उपायरूपसे ग्रहण किया जाय इस बातको लेकर काँग्रेसके भीतर तथा वाहर उस समय तुमुल आन्दोलन चल रहा था। मैं किन्तु उपायरूपसे अहिंसाको ग्रहण करनेका पक्षपाती हुआ। मैं विचार करता—देशमातृकाके उद्धारके लिये हिंसा अहिंसा की उलझनमें नहीं पड़ देश, काल तथा क्षेत्र विशेषसे जब जैसा प्रयोजन हो तब तैसी ही नीतिका ग्रहण करना उचित होगा। लक्ष्य है देशका उद्धार, अहिंसा लक्ष्य नहीं। व्रत है माताका श्रृंखलाभार मोचन, अहिंसाका व्रत नहीं। भगवान रामचन्द्रने दुर्दान्त रावणकी हत्या रण क्षेत्र में ही की थी। भगवान श्री कृष्णने कंस, शिशुपाल प्रभृति आसुरिक भावापन्न शत्रुगणकी हत्याकर देशमें शान्तिका स्थापन किया था। कुरुक्षेत्रके विराट् समरांगणमें वे अर्जुनके सारथी हुए थे।

"यस्य नाहंकृतो भावो बुद्धिर्यस्य न लिप्यते।
हत्वाऽपि स इमाँल्लोकान्न हन्ति न निबध्यते॥"

गीता अ० १८।१७

अहंकार ही बंधनका हेतु है। अहंकार रहित होकर अर्थात् योग-युक्त होकर यदि कोई जगत्के समस्त प्राणीकी हत्याकर डारे तो भी वह वास्तवमें न हत्या ही करता है और न हत्याके पापसे बद्ध ही होता है।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

मैं अहिंसक हूँ, यह भी एक प्रकारका अहंकार है। यंत्रबोधकी साधनामें इससे भी बाधाकी उत्पत्ति होती। जो यंत्री हैं, जो जीवनके रक्षक, विधाता, उनके साथ युक्त होनेपर वे जिस प्रकारसे सजायँगे, जिस प्रकार चलायँगे उसी साजसे सज्जित होना होगा उनकी इच्छाके अनुवर्त्ती होकर ही चलना पड़ेगा। मेरी इस चिन्ताधाराके साथ कांग्रेसका मेल नहीं होनेसे मैं इसी कारण कांग्रेसका मेम्बर पीछे फिर हुआ नहीं।

क्रान्तकारियोंके कई एक आचरण हमारे विवेक सम्मत नहीं थे। जैसा कि डकैतीकर देश काजके लिये अर्थ संग्रह करना। इस आचरणके पक्ष वा विपक्षमें अनेक तर्क हैं। हमें किन्तु पक्ष वाली युक्ति दुर्बल मालूम पड़ती थी। इसीसे मैं अन्तः करणसे क्रान्तकारियोंके सब कामोंका समर्थनकर नहीं सकता था। संक्षेपमें मैं वास्तवमें कोई भी दल-भुक्त नहीं था। मैं अपने विवेककी प्रेरणासे जहाँ कांग्रेसको समर्थन करना आवश्यक वहाँ वही करता। जहाँ क्रान्तकारियोंको आश्रय देना, आर्थिक सहायता करना आवश्यक समझता वहाँ अपने जीवनको विपन्नकर भी शरण दी थी। लक्ष्य—देश मातृकाकी शृंखलाकी विमुक्ति। मंत्र—"वन्दे मातारम्।" दिग्भ्रान्त पुलिस पुंगवगण मेरे पीछे पड़े। घोरतर सन्देहकी दृष्टिसे देखने लगे। नाना प्रकारसे निर्यातन करनेके प्रयासी हुए।

कॉलेजमें पढ़नेके साथ-साथ इस तरहसे देशकी सेवा करने लगा। देशकी सेवा नर नारायणकी सेवा करनेका अधिक सुयोग प्राप्त होगा यही सोच-विचारकर डाक्टरी पढ़ने गया था। अपने

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

जलपानके पैसे, धुलाईके पैसे, दूधके पैसे बचाकर गरीब सहपाठियों तथा आर्त्तजनोंको साहाय्य करता। सबोंके अभ्यन्तर विश्वपिता आत्म रूपसे विराजमान हैं यह मनमें सोचकर अपना भाग उन लोगोंमें वितरणकर तृप्ति बोध कर पाता था। सबोंके मध्य उसी अन्तर्यामीका छाया रूप देखने लगा। जिनकी रम्यवीणाकी ध्वनि सुन पाता था, जिनके रूपकी झलक क्षण ही क्षण देख पाता था, उन्हींकी छायमूर्त्ति मानों देख पाने लगा उन आर्त्तजनोंके अभ्यन्तरमें। गर्भ धारिणी माता, मालूम होता, अपने सन्तानोंके अभ्यन्तर उसी अन्तर्यामीकी छाया मूर्त्ति देखकर ही स्वयं नहीं खाकर अपने सन्तानोंको खिला सकती है। संभवतः पिता भी सन्तानोंके मध्य उसी अन्तर्यामीकी छायामूर्ति देखकर स्वयं कष्टसे जीवन यापनकर भी सन्तानका लालन-पालनकर सकते हैं। किन्तु कोई-कोई कहता कि अपत्यस्नेहके बीच प्रत्युपकारकी आशा रहती है। सन्तान बड़ा होकर बृद्ध पिता माताको संभालेगा इस प्रत्याशासे वे अपने सन्तानको प्यार करते। प्रत्युपकारकी आशा रहती इसीसे प्रायः अन्तर्यामीका दिव्य रूप अपने सन्तानोंके अभ्यन्तर देख पाते नहीं केवल छाया रूप ही देखते। किन्तु मैं जिन्हें प्यार करता था, स्वयं कष्ट स्वीकारकर भी जिनको अपने खाद्यका भाग देता था उनसे हमें कोई प्रत्युपकारकी आशा थी नहीं। पीछे कदाचित् अहंकार आ जाय इसलिये गुप्तदान करता। इस क्षुद्रदानसे मैं यथार्थ आत्मप्रसाद लाभ करने लगा। कांग्रेसका कार्य कर विप्लवियोंको योगदान कर भी जो तृप्ति हमें नहीं मिली उसकी अपेक्षा कहीं बढ़कर तृप्ति मिली

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

अपने भोजनके भाग क्षुधार्त्त बंधुओंके मुखमें डार कर। शरीर कुछ दुर्बल हुआ सही किन्तु मन पुष्ट और पवित्र हुआ। कोई-कोई शौकीन मित्र हमारे इस प्रकारके त्याग स्वीकारको देख उपहास भी करते। कोई मुझे बुद्धिहीन (बेवकूफ) भी समझते। किन्तु मैं अपने अन्तरमें जिस स्वर्गीय तृप्तिका अनुभव करता उसको वे लोग कैसे समझ सकते।

क्रमशः देशवासियोंके अन्तरमें देशके उद्धारका जो प्लावन आया था वह मन्द हो चला। गांधीजी के ज़ेलखानेमें, देशके नेतागण कैदी; अनेक कार्यकर्त्तागण बन्दी हो गये। देशवासियोंको प्रेरणा देने, उज्जीवित करनेवाले कोई रह गये नहीं। तेज विहीन प्रदीप मानो बुत गया। स्रोत सूख जानेपर वेगवती नदी भी मरुभूमिमें परिणत हो गई।

सन् १९२३ ई० में देशमें हताशकी एक काली घटा उतर आई। जो लोग दुःखको वरण कर, परिजनको विपद्ग्रस्त कर देशकार्यके लिये पदार्पण किये थे वे दरिद्रताके निष्पेषणसे प्रभाहीन हो गये। मनका बल खो बैठे। कांग्रेसके बीच भी दलबन्दी दिखायी देने लगी। गया कांग्रेसके अधिवेशनमें देशबन्धु सी० आर० दास प्रभृति नेतृवर्गके नेतृत्वमें स्वराज पार्टी गठित हुई। कांग्रेसके भीतर तथा बाहर फूट पैदा हो गई।

गांधी किंकर्त्तव्यविमूढ़ हो गये। बाढ़के पीछे जैसे नदी प्रभृतिमें घोला जल देखा जाता, मृत जीव-जन्तु भसता फिरता, चारों ओर हतश्री दीख पड़ती, उसी प्रकार देशवासियोंके भीतर जब सम्वेग

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

शिथिल हो गया तब चारों ओरसे भसने लगी मानव-चरित्रकी लुकी-छिपी पशुवृत्तियाँ सब। देवभाव अस्तमित हो गया, पशुभाव जाग्रत हो उठा। अर्थ तथा स्वार्थ लेकर, पद गौरव लेकर दलबन्दी आरंभ हो गया। वह एक वीभत्स दृश्य था। अन्तर जब जाग्रत हो उठा था उस समय जिनके भीतर देवभाव देखकर शिर स्वतः ही झुक पड़ता था, आज उन्हींके अन्तरमें तांडव नृत्य देख घृणाका उद्रेक होने लगा। हा मनुष्य! तुम तात्कालिक भावावेगसे देवता-की भी अपेक्षा उन्नत हो सकते हो, पुनः वही मनुष्य तुम स्वार्थके संस्पर्शसे दानव, राक्षस, पिशाच हो सकते।

इधर सहधर्मी तथा अध्यापकोंके बीच भी बहु विध दुर्बलता देखकर मैं व्यथित होने लगा। एक ओर जैसे कई एक निर्मल चरित्रवान अध्यापक एवं छात्र थे, दूसरी ओर तैसे ही अनेक चरित्रहीन छात्र तथा अध्यापक अपने सामयिक सुन्दर विशुद्ध भाव को मिटाकर दुर्बल चरित्रका परिचय देने लगे। चरित्रहीन कोई कोई अध्यापक सुश्री लड़कोंको प्रणय विषयक व्याख्यानसे उनका चरित्र नष्टकर डाला। कालेजमें नाटक दल गठन करने जानेमें अबाध संसर्गके अन्तर्गत अवैध सम्पर्क होने लगा उनके अन्तरसे देवता दूर हो गये, पिशाच जाग्रत हो गया। देश तथा जातिकी बात भूल गये। इन्द्रियोंके दास हो गये। होस्टल (छात्रावास) में सरस्वती पूजाके अवसरमें अश्लील गानकी व्यवस्था हुई अध्यापक गाने लगे—

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

अपने भोजनके भाग क्षुधार्त्त बंधुओंके मुखमें डार कर। शरीर कुछ दुर्बल हुआ सही किन्तु मन पुष्ट और पवित्र हुआ। कोई-कोई शौकीन मित्र हमारे इस प्रकारके त्याग स्वीकारको देख उपहास भी करते। कोई मुझे बुद्धिहीन (बेवकूफ) भी समझते। किन्तु मैं अपने अन्तरमें जिस स्वर्गीय तृप्तिका अनुभव करता उसको वे लोग कैसे समझ सकते।

क्रमशः देशवासियोंके अन्तरमें देशके उद्धारका जो प्लावन आया था वह मन्द हो चला। गांधीजी कैदखानेमें, देशके नेतागण कैदी; अनेक कार्यकर्त्तागण बन्दी हो गये। देशवासियोंको प्रेरणा देने, उज्जीवित करनेवाले कोई रह गये नहीं। तेज विहीन प्रदीप मानो बुत गया। स्रोत सूख जानेपर वेगवती नदी भी मरुभूमिमें परिणत हो गई।

सन् १९२३ ई० में देशमें हताशकी एक काली घटा उतर आई। जो लोग दुःखको वरण कर, परिजनको विपद्ग्रस्त कर देशकार्यके लिये पदार्पण किये थे वे दरिद्रताके निष्पेषणसे प्रभाहीन हो गये। मनका बल खो बैठे। कांग्रेसके बीच भी दलबन्दी दिखायी देने लगी। गया कांग्रेसके अधिवेशनमें देशबन्धु सी० आर० दास प्रभृति नेतृवर्गके नेतृत्वमें स्वराज पार्टी गठित हुई। कांग्रेसके भीतर तथा बाहर फूट पैदा हो गई।

गांधी किंकर्त्तव्यविमूढ़ हो गये। बाढ़के पीछे जैसे नदी प्रभृतिमें घोला जल देखा जाता, मृत जीव-जन्तु भसता फिरता, चारों ओर हतश्री दीख पड़ती, उसी प्रकार देशवासियोंके भीतर जब सम्बेग

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

शिथिल हो गया तब चारों ओरसे भसने लगी मानव-चरित्रकी लुकी-छिपी पशुवृत्तियाँ सब। देवभाव अस्तमित हो गया, पशुभाव जाग्रत हो उठा। अर्थ तथा स्वार्थ लेकर, पद गौरव लेकर दलबन्दी आरंभ हो गया। वह एक वीभत्स दृश्य था। अन्तर जब जाग्रत हो उठा था उस समय जिनके भीतर देवभाव देखकर शिर स्वतः ही झुक पड़ता था, आज उन्हींके अन्तरमें तांडव नृत्य देख घृणाका उद्रेक होने लगा। हा मनुष्य ! तुम तात्कालिक भावावेगसे देवता-की भी अपेक्षा उन्नत हो सकते हो, पुनः वही मनुष्य तुम स्वार्थके संस्पर्शसे दानव, राक्षस, पिशाच हो सकते।

इधर सहधर्मी तथा अध्यापकोंके बीच भी बहु विध दुर्बलता देखकर मैं व्यथित होने लगा। एक ओर जैसे कई एक निर्मल चरित्रवान अध्यापक एवं छात्र थे, दूसरी ओर तैसे ही अनेक चरित्रहीन छात्र तथा अध्यापक अपने सामयिक सुन्दर विशुद्ध भाव को मिटाकर दुर्बल चरित्रका परिचय देने लगे। चरित्रहीन कोई कोई अध्यापक सुश्री लड़कोंको प्रणय विषयक व्याख्यानसे उनका चरित्र नष्टकर डाला। कालेजमें नाटक दल गठन करने जानेमें अबाध संसर्गके अन्तर्गत अवैध सम्पर्क होने लगा उनके अन्तरसे देवता दूर हो गये, पिशाच जाग्रत हो गया। देश तथा जातिकी बात भूल गये। इन्द्रियोंके दास हो गये। होस्टल (छात्रावास) में सरस्वती पूजाके अवसरमें अश्लील गानकी व्यवस्था हुई अध्यापक गाने लगे—

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

घर आई गृहलक्ष्मी, झीनी साड़ी, गहना
न होनेपर गृहिणी, हँसकर तो बतियाती ना", इत्यादि ।

कितने एक छात्र उन (अध्यापक) को घेरकर कमर डोलाकर नाचने लगे । कोई-कोई तो "क्या बात, क्या बात" बोलकर उत्साह प्रदान करने लगा ।

यह एक नारकीय दृश्य था । अध्यापकको बुला उनके कक्षमें ले आकर मैं उनका तिरस्कार किया । दुर्बलचित्त होस्टेल वासीगण डर गये । हठात् 'क्या बात, क्या बात' की ध्वनि बन्द हो गई । वे तत्काल रुक गये सही किन्तु उनके अन्तरसे पिशाच तो दूर हुआ नहीं । मेरा मन बिगड़ा । मनमें घृणा भावका संचार हो गया उन नरदेहधारी पिशाचोंके आचरणको देखकर । दूसरी ओर होस्टेलके छात्रोंके विरुद्ध वयस्क एवं वृद्ध पड़ोसी गण होस्टेलके निरीक्षकके पास अभियोग लेकर आने लगे—"छात्रोंमें से कोई कोई जंगला (खिड़की) होकर महिलाओंकी ओर हेरता रहता । कोई फिर सूर्य किरणके सामने दर्पण रखके प्रतिविम्ब बिखेरकर महिलाओंकी दृष्टि आकर्षण करता । और कोई तो गुड्डी उड़ाकर उसके द्वारा प्रेम-पत्रका आदान-प्रदान करता । इस होस्टेलके ४५।४६ छात्रोंमें से १०।१२ व्यक्तियोंके विरद्ध इस प्रकारका अभियोग उपस्थित हुआ । नाम रहित दो एक प्रणय-पत्र भी निरीक्षकके निकट अभिभावक गण उपस्थित किये । वास्तविक यह बहुत ग्लानिकर घटना थी । एक छात्र पुलिसका गुप्तचर बोलकर पकड़ा गया । उसके बिस्तरा और बाकस (पेटी) को ढूँढ़नेपर

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

पुलिसकी अनेग गुप्त चीठी पाई गई। होस्टेलके छात्रोंको गिरफ्तार कराने, पकड़वानेके लिये यह षड़यंत्र होता था। उस छात्रको सब कोई मिलकर पीटे। होस्टेल छोड़कर क्षत विक्षत देहसे वह भाग गया। किन्तु पापी तो केवल एकही व्यक्ति नहीं था। उसकी अपेक्षा और भी जघन्य पापी वे थे जिन्होंने उसे मारा था—उन्हींमें से कई एक। सिनेमा देखनेके बहाने कई एक छात्र वेश्यालय भी जाया करता। धिक् उन लोगोंको, धिक् राष्ट्रीय शिक्षालयोंको धिक् उन मनुष्य चर्मावृत पिशाच गणको! जातीय शिक्षालयोंके प्रति मेरा अन्तर विद्रोही हो गगा। नेशनल (राष्ट्रीय) कालेज नाम देनेपर भी राष्ट्रगठनके पवित्र व्रतका उन्हें पता नहीं। अंग्रेजी शिक्षालयोंकी अपेक्षा राष्ट्रीय शिक्षालयें किस अंशमें श्रेष्ठ हैं इस का भी मैं तारतम्य करने लगा। अभिभावकोंसे अवाध्य होकर उच्च आशा लेकर मेरे जैसे और भी कितने लोग उस कॉलेजमें पढ़ने आये थे। उनके तथा अपने भविष्यकी चिन्तासे चित्त भारा-क्रान्त हो जाता। अन्यान्य होस्टेलोंसे भी इस प्रकारके अभियोग की बात सुनपाने लगा। मूठी मात्र छात्र बिद्रोही, अधिकांश छात्र ही इस प्रकार कुत्सित जीवन यापनसे प्रसन्न। नरोंमें नारायणको देखनेका जो अभ्यास कर रहा था उसे इन पिशाचोंको देख भूल गया। अंग्रेजी छात्रावासों तथा शिक्षालयोंमें वरं कुछ शासन है भी किन्तु यहाँ तो स्वाधीनताके नामसे शासनकी अपेक्षा उत्शृंखलता ही विशेष है। केवल मोटा खद्दड़ पहननेके अतिरिक्त साधारण मनुष्योंसे इनमें कोई भी पार्थक्य नहीं था। चरित्रका बल नहीं,

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

शिक्षामें अनुराग नहीं, देशके प्रति कोई प्रेमही नहीं। मसीलिप्त तमसावृत भग्न विग्रह (देवमूर्ति) तुल्य वे थे। विकृत वा भंग देवमूर्तियोंकी सेवा-अर्चा होती नहीं। टूटा फूटा देवालयोंमें कोई रहता नहीं, इसीसे उनके साथ रहनेकी मेरी भी इच्छा रह गई नहीं। इसी अवसरमें होस्टेलमें और एक नयी घटना हो गई।

किसी विशेष प्रयोजनसे दो तीन दिनके लिये मैं बाहर गया था। होस्टेल प्रवेश करते ही होस्टेलका रसोइया आर्त्तनाद करते हुये मेरे पाँव पड़ गया। वह बिहारी ब्राह्मण था, निष्ठावान एवं चरित्रवान् था। वह कहने लगा—बाबू, आप और वसन्त बाबू होस्टेलमें नहीं रहनेसे मुझे ५।६ बाबू लोग बहुत मारा है। वे बाबू सब मुर्गी खाने चाहते थे, मैं पकाकर नहीं दिया यही मेरा अपराध। केवल आपको एवं वसन्त बाबूको ज्ञात करानेके लियेही मैं काम नहीं छोड़ा है। कलही यह घटना हुई है। उसे प्रबोध वाक्य बोलकर मैं अपने कमरेमें जाकर समस्त घटनाका अनुसंधान किया। जो सब रसोइयाको मारे थे उनमें अधिकांश थे धनवानोंके पुत्र। वे बड़े घमंडी थे तथा आसुरिक भाव भी उनका दुर्दमनीय। वसन्त बाबू तबतक भी लौटकर आये नहीं थे। मैंने विचारकर स्थिर कर लिया कि उनको दमन करनेका प्रायश्चित्त भिन्न दूसरा कोई रास्ता नहीं। स्वयं अनसनकर उनके दोषोंका प्रायश्चित्त करूँगा यही निश्चय किया। उपवासके दूसरे दिन वे जान पाये कि उनके अपराध ही के लिये मैं प्रायश्चित्तकर रहा हूँ। दो एक व्यक्ति मेरे कमरेमें आकर मुझे समझानेकी चेष्टा करने लगे कि वे कोई

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

अन्याय किये नहीं। वेतन पानेवाले टहलू रसोइयाको उनके मालिक जो कहेंगे उसको मान लेनेके लिये वे वाध्य हैं इत्यादि नानाप्रकार की बातें वे कहे। मुझे अनसन भंग करनेको कहे। मैं अविचलित रहा। रसोइया ब्राह्मण भी आकर करुण कंठसे मुझे अनसन भंग करनेका अनुरोध करने लगा। तीसरे दिन मेरे उपवासकी वार्त्ता कॉलेजके अध्यापकोंके कानोंमें पहुँची। पिछली वेलेमें दो व्यक्ति अध्यापक मेरे पास आए। सारी घटना सुनकर वे भी दुखी एवं विचलित हुए। जो सब अपराधी थे वे तीसरे दिन बहुत कुछ लज्जित सा हो गये। उनमेंसे कई एक मुझे आन्तरिक भावसे श्रद्धा करते। वे स्वीकार किए कि वे किसीको उत्पीड़नकर आपत्ति-कर खाद्य पदार्थ खायँगे नहीं। रसोइयाके उत्पीड़न सम्बन्धमें दुःख प्रकाश किये, पश्चात्तरसे क्षमा प्रार्थी हुए। चौथे दिन मैं अपना अनसन व्रत भंग किया। उपवासके द्वारा कई एक व्यक्तियों का चित्त सामयिक भावसे पवित्र हुआ देखकर मैं अपने अन्तरमें कुछ तृप्तिका अनुभव किया। समष्टिगत भावसे होस्टेल वा कॉलेज-का परिवेश हमें विषवत् बोध होने लगा।

फिर नये ढंगसे जीवनका पथ बाछ लेना होगा। किन्तु पथ-प्रदर्शक कहाँ ? वह ध्वनि और ज्योति अभी भी समय-समयमें देख सुन पाता, किन्तु उससे पहले जैसा आकर्षण बोधकर पाता नहीं। **Light, more light**—प्रकाश, और अधिक प्रकाश चाहिये। विन्दुसे क्या सिन्धुकी तृष्णा मिट सकती ? केवल ओससे क्या पृथिवी अभिषिक्त हो सकती ? अन्तरमें दारुण क्षुधा, और

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

उस क्षुधाकी ज्वालासे पुनः चारों ओर भ्रमण करने लगा। टीका टोलीके रामकृष्ण मिशनमें ब्राह्म मन्दिरमें, आर्य समाजमें, गेण्डारियाके गोसाईं जीके आश्रममें तथा कभी कभी भोला गिरिजी महाराजके आश्रममें यातायात करने लगा। उस समय उन स्थानों में जो रहते थे वा वक्तृतादि प्रदान करते थे वे भी अपने जीवनके प्रकाशका अनुभव नहीं कर पाये थे यह उनके आचरण तथा कथनसे समझ पाया। मुझे चाहिये प्रत्यक्ष दर्शी वास्तविक योगी। अन्ध पथिक मैं चाहता नहीं। केवल शास्त्रज्ञानी दांभिक पंडित हमें नहीं चाहिये। जिसने अमृत सागरका अवगाहनकर चुका हो, जिसने नित्य धामका अनुसन्धान पाया हो एसेही योगी मुझे चाहिए। वही योगी पुरुष देगा मुझे दिव्यपथका अनुसन्धान, एवं रास्तेका पाथेय। वे योगी नहीं थे, उन्हें शिशुही कहा जा सकता है। इसीसे पथ प्रदर्शनकी क्षमता उनमें थीं नहीं। किसी प्रकार टोआ टोई कर कंपित शरीरसे चल रहे थे। उनके संकल्प दृढ़ नहीं हो पाये थे। उनकी मात्र नीति—व्याख्यान, वृहद् दार्शनिक व्याख्यान, और "सब कुछ भगवानकर देंगे" इन भरोसोंकी बातोंसे मेरा अन्तर विगलित हुआ नहीं। क्षुधा—दारुण क्षुधा। विश्वका कोई विभव चाहता नही इन्द्रत्व, वा विष्णुत्व भी नहीं चाहता। चाहता केवल शान्ति। चाहिये ऐसा धाम जहाँ मनुष्य नाम धारी पिशाच न हो जहाँ कोई प्रलोभन नहीं, मृत्यु नहीं। फिर एकान्तमें बैठ, किसी निर्जन पार्कमें बैठ, बूढ़ी गंगाके तीरमें बैठ, रमना मैदानमें बैठ नीरवमें रोने लगा। अन्तरमें यह तीव्र ज्वालामय अग्नि कौन

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

जलाता समझ पाता नहीं। इस दावानलमें इन्धन कौन देता उसे भी देख पाता नहीं। विष-सभी विष। आब्रह्मस्तंभ पर्यन्त विषसे संघटित। अनन्तरूप से फिर नारायणको देख पाता नहीं। बहुरूप के बीच नारायणको ढूँढ़ पाता भी नहीं। विष—तीव्र विष। इस विषाक्त जगत्को त्याग करो नित्य धामको चलो। मैं अपनी इच्छा-से इस प्रकार चिन्ता करता नहीं, मानों कोई मुझसे ऐसी चिन्ता करा लेता हो। यह मायावाद नहीं, विषवाद। चेष्टा करनेपर भी अन्तरमें इस आवेगको शान्त कर पाता नहीं। कॉलेज जाना अच्छा नहीं लगता। होस्टेलके दो मंजिलेमें जिस कमरेमें मैं रहता था उसकी खिड़की खोलनेपर एक नीमका पेड़ देख पाता। वह नीम गाछ तथा नील आकाश किसी किसी समय मुझे प्रिय लगता। ब्राह्म-समाजमें एक गान सुना था—

"तुम हो विटप-लता जलद गातमें,
शशि तारा अरु सूरजमें।
मैं आखोंमें वसन बाँध,
रो मरता अँधियालेमें।
मैं देख पाता न कुछ, समझ पाता भी नहीं,
मुझे दो जी सिखा दो समझा।

"तुम हो विटप-लतामें"—इस बातको लेकर मनमें विचार हो आता—तुम कौन ? विटप-लताके अभ्यन्तर वा हमारे भीतर तुम हो। तुम स्थूल वा सूक्ष्म, दयामय या निष्ठुर हो यह बता देगा

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

कौन ? इस प्रकार चिन्ता करते-करते रो पड़ता, बहुत रोता। क्षण ही में किवाड़ बन्द कर अपने मनसे गाने लगता—

कब तृषित यह मरु छोड़ जाऊँगा मैं,
तुम्हारे ही रसाल नन्दनमें।
कब तृषित चित्त, करेगा शीतल;
तुम्हारा ही करुण—चन्दन हमें।

वह रसाल नन्दन कहाँ ? कितना दूर सो जानता नहीं। तो भी इस कंटकाकीर्ण जगत्से अव्याहति चाहता। इस जगत्को छोड़ किसी दूसरे जगत्में जाऊँगा इसकी कोई भी धारणा थी नहीं। तो भी वह विषाक्त वा कंटकाकीर्ण होगा नहीं। वहाँ हिंसा, द्वेष, कुटिलता रहेगी नहीं। वहाँ पर श्रीकातरता रहेगी नहीं। वहाँ नारीके प्रति नरकी आसक्ति एवं नरके प्रति नारीका आकर्षण रहेगा नहीं। धनकी स्पृहा रहेगी नहीं, पद मर्यादाकी स्पर्द्धा रहेगी नहीं। वहाँ ग्रीष्मके उग्रतापसे दग्ध होना पड़ेगा नहीं। प्रबल शीतके कषाघातसे शरीर कम्पायमान होगा नहीं। दुःख वहाँ नहीं, दैन्य वहाँ प्रवेश कर सकता नहीं। वह राज्य ऊपर बहुत ही ऊपर वा अन्दरके एकान्त स्थानमें है सो विचारकर निश्चयकर सकता नहीं। क्षण ही में उसे साकार समझता, फिर क्षण ही में उसे विराट् और निराकार समझ लेता। हिन्दूके घर-घरमें तीर्थ-तीर्थमें अनेक देव देवी देख एवं पौराणिक कथा बाँचनेवालोंके मुखसे अनेक देव देवियोंकी कथा सुन साकार तथा निराकारका द्वंद्व मनमें यथेष्ट ही था। सभी

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

किन्तु अस्पष्ट, सभी कल्पना जैसी। तो भी अन्तरसे जैसे कोई कह देता, तुमतो अमृतमय, शान्तिमय हो। इस विश्वकी उत्पत्ति जहाँसे हुई है, मेरी प्रथम उत्पत्ति जहाँसे हुई है; मेरे मन, बुद्धि, इन्द्रिय जिसे देख पाये नहीं जिस स्थानमें प्रवेशकर सके नहीं, तुम उसी स्थानमें एक अमृतमय धाममें विराजमान् हो। स्पष्ट धारणा कुछ भी नहीं, सभी अस्पष्ट सभी कल्पना मिश्रित। तो भी इन बातोंके विचारसे प्राणको शान्ति मिलती।

तुम निराकार हो वा साकार हो यह लेकर कोई विचार करने चाहता नहीं। मैं अन्तरकी तीव्र ज्वालासे दग्ध हो रहा हूँ। मैं विरह व्यथासे अहरहः जल रहा हूँ। तुम जहाँ भी रहो, जिस किसी रूपसे रहो एक बार मेरे सामने आकर खड़े हो जाओ। तुम्हारे नहीं आनेसे तुम्हारा यह विश्व मेरे निकट अति तिक्त बोध हो रहा है—श्मशानवत् बोध हो रहा है। तो क्या तुम केवल ज्वाला देने ही, दग्ध करने लिये ही इस विश्वकी रचना की है ?

"नहीं रे क्या सुख, नहीं रे क्या सुख ?
यह धरा क्या केवल विषादमय ?"

केवल रोनेके लिये ही, केवल आघात पानेके लिये ही क्या तुम इस विश्वकी रचनाकर मनुष्यको कारागारमें भेज दिये हो ? इस बातके चिन्तनसे भी अन्तरमें व्यथा पाता हूँ। इसकी अपेक्षा शतगुण व्यथा पाता तुम्हारे इस विश्वसे। तुम्हें नहीं पाने पर तुम्हारा रचित यह विश्व अच्छा नहीं लगता। जिस गृहमें अनेक उपकरण हो

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

अथ च उस गृहमें उजाला न हो तो उस उपकरणकी सार्थकता ही क्या ? निमंत्रण भवनमें खानेका कुल सामग्री रहनेपर भी यदि गृहस्वामी अनुपस्थित रहे तो उस निमंत्रणकी सार्थकता क्या ? हे विश्वपति ! तुम्हारा ही यदि यह विश्व हो तो तुम्हारे निमंत्रित अतिथियोंके बीच तुम एक बार खड़े होकर सिर्फ एक ही बार बोल दो कि तुम इस विश्वके पाता, धाता, विधाता और मोहमुग्ध जीवके परित्राता हो। अँधियाले घरमें दीपक जलाकर-उजालाकर एक बार कह दो कि ये समस्त उपकरण तुम्हारी ही पूजाके लिये हैं। गृह तुम्हारा, उपकरण तुम्हारे, मैं भी तुम्हारा ही। तुम्हारे इस विश्वयज्ञमें आहुति-प्रदानके निमित्त तुमने हमें रचनाकी है।

यह पृथिवी स्वर्गमें परिणत हो जायगा यह पहले निरंतर सोचा करता। श्री अरविन्दकी पुस्तक पढ़ वह संस्कार और भी गाढ़ा हो गया था। इसीसे देशके कार्य करते समय पृथिवीको स्वर्ग रूपमें परिणत करनेकी कल्पना करता। कुछ दिनोंमें ही अपनी अज्ञानता समझ पाया। शौचागार (पैखाना) को शयनागार मानकर उसमें शयन करना निरर्थक नहीं क्या ? "अनित्यमसुखंलोकम्"—यह विश्व अनित्य दुःख पूर्ण। इसको रूपान्तरित करनेकी कल्पना करना, इसको स्वर्गतुल्य सुखकर बनानेकी चेष्टा करना एक प्रकारकी वातुलता ही है। कोयलेमें कितनाहू साबुन लगाया जाय तो भी वह धप-धप स्वच्छ होता नहीं। कोयला तो कोयला ही रहेगा। लोहेका गोला अग्निके सम्पर्कसे जैसे उत्तप्त हो जाता वैसे ही अन्तरके शान्तिरस से यह जगत् तात्कालिक सुखकर बोध होता। यह विश्व

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

कितनाहू भी सुन्दर क्यों न हो तो भी है वह एक पगला-गारद। यह है एक शौचागार; इसीसे इसे स्वर्गमें परिणत करनेकी जो अभिलषित कर्मके स्रोतमें भसते-भसते पहले मनमें आया करता था वह अन्तर्हित हो गया। अपने मनही मन गाने लगा—

"तृषित यह मरु छोड़ जाऊँगा तुम्हारे रसाल नन्दनमें।"

जिस भाव प्रवणताको लेकर कर्मकर रहा था वह भाव प्रवणता दूर हो गई। अन्तरका स्रोत दूसरी ओर प्रवाहित हो गया।

इधर हमारे अभिभावकगण उत्कंठित थे कि मैं शीघ्र ही डाक्टर होकर घर लौटूँगा। बहुत धन उपार्जन करूँगा, उन्हें धन-धान्यसे, सांसारिक परम सुखसे रखूँगा। मेरे चाचा निपुत्र, फूफी मेरी बाल विधवा, वे बहुत ही आशा लगाये थे हमारे भविष्य अर्थ उपार्जनके ऊपर। निर्भरशील आत्मीय-स्वजनकी भी बहुत कुछ आशा थी, मेरी माताकी आशाका तो अन्त ही न था। प्रतिवेशीगण भी यह आशा रखते थे कि कष्टके समय वे मुझे अपने रोग शय्याके पास पाकर उपकृत होंगे, सान्त्वना पायँगे। हा! उनके छोटे संसारकी अपेक्षा भगवानके वृहत्तर संसार से—दिव्य जगत् से आमंत्रण पत्र गुप्त रूपसे स्वर्गके दूतगण मेरे पास पहुँचादेते थे वह समाचार उस समय तक वे नहीं जान पाये थे। वे तृषा-मरीचिकाके पीछे दौड़ रहे थे। वे शून्य आकाशमें अट्टालिकाका निर्माण कर रहे थे। आशासे वंचित होकर उन्हें रोना पड़ेगा यह बात वे तब तक समझ नहीं सके थे। मेरे मनमें भी समय-समयपर उनके लिये कुछ चिन्ता हो जाती थी। लड़काई समयसे अति स्नेहसे लालित-पालित हुआ हूँ, अप्रिय

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

व्यवहार किसीसे पाया नहीं। प्रतिवेशीगणके निकटसे भी स्नेह एवं श्रद्धा यथेष्ट मिली। हठात् पढ़ना छोड़ निष्क्रान्त हो जानेसे वे वज्र जैसा आघात पायँगे यह मैं भी जानता था। कभी सोचता कि हमारा दायित्व बहुत है सही किन्तु प्रतिजन्म जीवनमें मनुष्योंके दायित्व रहते ही हैं। कर्त्तव्यका अन्त नहीं, भोगका भी पर्यवसान नहीं। सोचता कि मुझको छोड़, मेरा उपार्जित धन नहीं पाकर भी उनको अन्न वस्त्रका अभाव होगा नहीं। उन्हें अट्टालिका होना संभव न हो, प्रचुर दास दासी उन्हें न रहें तथापि क्षुधा-ताड़नसे भिक्षाकी झोली हाथमें लेकर उन लोगोंको डोलना न पड़ेगा। भगवान उन्हें अन्न वस्त्र देकर ही भेजा है हमारे मुखापेक्षी होनेका कुछ प्रयोजन नहीं। हमारे लिये यह कम सौभाग्यकी बात नहीं। जिन्होंने यह सौभाग्य देकर मुझे इस जगत्‌में भेजा है उनके लिये ही यह जीवन उत्सर्ग करना नितान्त आवश्यक। बुद्धदेव वृद्ध पिता, युवती स्त्री, सद्योजात पुत्रके प्रति कर्त्तव्यके बंधनको तृण समान उच्छेदकर निकल पड़े थे। श्री गौरांग ६५ वर्षकी विधवा वृद्धा माता तथा १४ वर्षकी किशोरी स्त्रीको परित्याग कर उन्हीं (भगवान) के प्रेम समुद्रमें कूद पड़े थे। मेरी छोटी कल्पनाका बाँध माँ (भगवान) के प्रबल आकर्षणसे टूट गया, भस गया। सागरके आकर्षणके सामने पराजित होता कुल नदियोंका आकर्षण। अन्तरकी गुप्त निधि अन्तरसे आकर्षणकी। प्रेमनिधिके प्रेमाकर्षणके सामने मायाका आकर्षण पराजित हो गया—

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

"डाँके जैसे, डाँके जैसे, सिन्धु मोहे डाँके जैसे।"

जिनके जगत्में आया हूँ, जिन्होंने इस जगत्में भेजा है, जिनके दिये ये देह मन प्राण हैं उन्हींके आकर्षणसे बिलकुल अधीर हो उठा। पुकार आया—उस चितके संधानमें, विराटके संधानमें, शान्तिमयके सन्धानमें यात्रा करनी होगी।

किन्तु पथ प्रदर्शन करायगा कौन? मुझे पाथेय देगा कौन? वह जीवन मुक्त कहाँ? मैं देहवान, देहधारी गुरुके नहीं मिलनेसे तो तृप्ति पाता नहीं। अन्तरकी कुल बातें समझ पा सकता नहीं। अजी! आओ तुम मूर्त्तिमान होकर, आओ तुम देहधारी होकर, पुकार दो—निरन्तर पुकार दो। अब देर मत करो। आओ चिन्मय विभु, आओ परित्राता, तुम देहधारी होकर आ जाओ। अब तो प्रतीक्षा कर सकता नहीं।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

विवाह का प्रस्ताव ।

मनुष्यको संसारमें फसानेका विवाह ही मानो एक बड़ा जाल है। मैं जब संसार समुद्रसे पार होनेकी चेष्टा कर रहा था उसी समय हमारे अभिभावक गण एवं उनके हितैषी बंधुवर्ग अपनी रंगीन तूलीसे अनेक प्रकारके चित्र अंकितकर मुझे विवाह रूप जालमें फसानेका प्रयासकर रहे थे। विवाह बंधन ही नहीं, नितान्त दृढ़ बंधन-फाँसीकी रस्सीमें लटकानेकी युक्ति। कामान्ध मनुष्य कामवृत्तिके ताड़नसे इसी फाँसीकी डोरीमें दिनरात झुलते रहते हैं। यह कामवृत्ति मनुष्यका सहजात है। क्षुद्र पिपीलिका एव मधुमक्खीसे लेकर चिड़िया पक्षी कबूतर प्रभृति खेचरगणमें, एवं गौ, घोड़ा, वकरा प्रभृति इतर जन्तुओंमें भी यह कामवृत्ति रहती है। अवस्थाकी वृद्धिके साथ-साथ शरीर पुष्ट होनेपर मनुष्यमें यह कामवृत्ति प्रवल रूपसे जग उठती है। भोगी लोग इस काललालसामें इंधन देकर बद्ध होते। त्यागी लोग तपस्याके प्रभावसे इस वृत्तिको संयतकर संसार सागरके पार हो जाते। यह सहजात कामवृत्ति जब युवावस्थामें प्रवल हो उठती तभी उस रंगीन तूलिकासे अंकित कामलालसके चित्र अत्यन्त प्रिय लगते। बालकोंमें यह वृत्ति प्रसुप्त रहती, इसीसे वे उन चित्रोंको देख मुग्ध होते नहीं।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

युवतीयोंकी गौदीमें बैठनेपर भी उनका काम उद्दीपित होता नहीं। किन्तु एक जन युवक युवतीको स्पर्श करनेपर उसका चित्त चंचल हो जाता। यहाँ तक कि युवतीका नग्नचित्र देखनेपर भी चित्त चंचल होता। युवतीके प्रति युवकोंका इस प्रकारका आकर्षण सहजात है। युवतीयोंके भी युवकोंके प्रति इस प्रकारका आकर्षण होता। लेकिन स्त्रियां स्वभावतः लज्जाशीला होतीं इसीसे सहसा प्रकट रूपसे असंयत होतीं नहीं। वर्त्तमान समयमें किन्तु अनेक स्त्रियाँ लज्जाको भी लज्जित करतीं। उनके निर्लज्ज आचरणसे शिर नीचे हो जाता।

यह कामवृत्ति यद्यपि मनुष्यका सहजात है तथापि इसको पशुवृत्ति कही जाती। तांत्रिकोंने बकरेको कामवृत्तिका प्रतीक कल्पना कर बलिदेनेकी व्यवस्था की है। महिषको क्रोधका प्रतीक मानकर बलिकी व्यवस्था लिखी है। प्रतीकको बलि न देकर अर्थात् छायाका शिरच्छेद नहीं कर कायाका शिरच्छेद करनेसे ही छाया तथा काया दोनों ही के शिरच्छेद हो जाते। अन्तरके पशुकी बलि दे सकनेपर बाहरके पशुकी बलि देनेका प्रयोजन रह जाता नहीं। देखनेमें आता कि पशुओंमें भी अनेक ऐसे हैं जो मनुष्योंकी अपेक्षा संयत होते। जो सब पशु गृहपालित अथवा जो श्रेष्ठ (सिंह प्रभृति) उनकी कामवृत्ति खूब ही कम होती। कुत्ते वर्षके किसी विशिष्ट ऋतु (दो तीन महीने) में कामान्ध होनेपर भी वर्षके अधिकांश समयमें संयमित जीवन यापन करते। बैल, घोड़ा, महिष प्रभृति उनकी युवावस्थामें भी युवक मनुष्यकी अपेक्षा अधिक,

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

संयत रहते। सहजात इस कामवृत्तिमें और भी इन्धन डारते कामान्ध साहित्यिक गण। उनकी निर्लज्ज लेखनीसे कितनी ही कदर्य भाषा निकलती है। अनेक चल-चित्र उनके पृष्ठपोषक वा अनुगामी होते।

पाश्चात्योंकी अपेक्षा प्राच्यगण इस कामको चिरकालसे ही विभीषिकाकी दृष्टिसे देखते आये हैं। किन्तु वर्तमान समयमें पाश्चात्य जगत्के अत्यधिक संस्रवमें आनेसे प्राच्य भारतवासी गण भी पशुवृत्तिको अब पशुवृत्ति मानते नहीं। ब्रह्मचर्य पालनकी आवश्यकताका अनुभव अब होता नहीं। गृहस्थ जीवनमें भी संयमित रहनेकी बात सुनी जाती नहीं। जो कुछ हो किन्तु इस पशुवृत्तिको सुसंयतकर किस प्रकार आदर्श गृहस्थ गण चलें एवं उत्तम संतान-संतति लाभकर संसारमें सुखी हो सकें इस विषयको लेकर मनन-शील मनीषी गण गंभीर भावसे अनुशीलनकर विवाहकी व्यवस्था की थी पृथिवीके प्रत्येक सुसभ्य देशोंमें। जिसवृत्तिके हाथोंसे सहसा अव्याहति पानेका उपाय नहीं उसको धीरे-धीरे किस तरह अपने वशमें लाया जाय एवं संसारधर्म पालन किया जाय उसीका निर्देश कर गये हैं वे चिन्तनशील व्यक्तिगण। विवाह बधनसे बद्ध होकर स्वामी तथा स्त्रीकी परस्पर सहायतासे उद्दाम कामवृत्तिको किस प्रकार सुसंयत कर पायें इसके भी निर्देश वे दिये थे। उत्तम संतान प्राप्त करनेके लिये कामान्ध होनेसे चलनेका नहीं संयमके बंधनसे जीवनको बाँधना पड़ेगा। उत्तम पिता माता होनेके लिये अधम पशु होनेसे चलेगा नहीं, आहार विहार, एवं चिन्तनमें पवित्रताका

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

प्रयोजन है। इसीसे प्राच्यगण स्त्रीका नाम दिये सहधर्मिणी। स्वामीके शरीर वा मनमें कामका अत्यधिक आक्रमण होनेपर स्त्री स्वामीको सुसंयत होनेका परामर्श देंगी, स्त्रीके मनमें दुर्बलता आनेपर स्वामी उनको स्मरण करा देंगे—आज इस तिथि, इस बार, इस मुहूर्त्तमें सन्तानका गर्भाधान करनेसे वह सन्तान दुःखका निदान होगा। रोगी, पंगु, अन्ध सन्तान पैदा हो सकता है। पिता माताका अवाध्य असुरभावापन्न सन्तानभी जनम सकता है। इससे सन्तानको भी क्लेश होगा, हम लोगोंको भी आजीवन क्लेश भोग करना पड़ेगा। इस प्रकारके सन्तान समाज तथा देशके अमंगलकारी होते। अतएव संयमी होवो, पवित्र होवो। दितिके गर्भसे कुसमयमें सन्तानगण जन्मग्रहण किये थे इस कारण ही वे असुरभावको प्राप्त किये। मनु, पराशर, प्रभृति ऋषिगण गृहीको किस प्रकार सुसंयत होकर चलना चाहिये उसका पुनः पुनः निर्देश कर चुके हैं। परन्तु आधुनिक तरुण तरुणी गण उन निर्देशोंको नहीं मानकर जिन सन्तानोंको पैदा करते वे विज्ञानमें उन्नत होकर सोनेका रावणराज्य निर्माण करनेपर भी वास्तवमें मानवताके स्तरसे बहुत नीचे उतरे जा रहे हैं। क्या देख पाते नहीं, केवल भारतवर्षमें ही नहीं सारी पृथिवीमें अभी कैसा हा हा कार है! कैसा अन्तर्दाह! विज्ञानकी उन्नति होनेपर भी मनुष्य सामग्री-सम्पन्न होनेपर भी अज्ञानता तथा पशुवृत्ति बढ़ गयी है। इसीसे आदर्श मनुष्यके स्तरसे मनुष्य नीचे उतर रहे हैं। यह क्रम विकाशका पथ नहीं, वरं ध्वंसका ही पथ है।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

मैं जिस समयकी बात लिख रहा हूँ। (१६२१-२२ ई०) अर्थात् जिस समयमें मुझे विवाह बन्धनसे बाँधनेकी चेष्टा हमारे अभिभावक गण कह रहे थे उस समय लोगोंकी मनोवृत्ति इतनी निकृष्ट नहीं थी। विगत २० वर्षोंसे मनुष्यकी चरम अवनति हो गयी है और हो रही है। हाहाकार बढ़ गया है, मनुष्य हृदयहीन हो चुका है। श्रद्धा, प्रेम, प्रीति खो डाला है। हृदय शुष्क, प्राण संकीर्ण। २० वर्ष पहले भी मनुष्यका हृदय उदार था, मनुष्यमें भी देवभाव देखा जाता था। अकृतज्ञता वा कृतघ्नतासे मनुष्य भय पाता। घूस लेना, खाद्यके साथ अखाद्य मिलाकर लाभ उठाना मनुष्यको अपराध मालूम पड़ता। किन्तु अभी बहुत वीभत्स दृश्य देख रहा हूँ।

जिस समयकी बात लिख रहा हूँ उस समय हमारी वयस १७-१८ वर्षकी होगी। अभी जो लिख रहा हूँ अवश्य इतनी बातों-को समझनेकी शक्ति तब मुझे थी नहीं। किन्तु विवाह जो किये हैं वे सबके सब पापी हैं ऐसा भी मैं नहीं समझता था। पुराणोंके कथा वाचकोंके मुखसे सुना था—सृष्टिके प्रारंभमें सनक, सनन्दन प्रभृति ऋषि गणकी उत्पत्ति हुई थी। किन्तु उनके विवाह नहीं करने पर ब्रह्माकी सृष्टिका कार्य चला नहीं, इसीसे वे अंगिरा, मरीचि, पुलस्त्य, पुलह प्रभृति भोगाभिमुखी ऋषिगणको उत्पन्न किये। वैराग्यवान एक दलके लोग पूर्वमें जैसे जन्म ग्रहण करते थे वैसेही अभी भी जन्मग्रहण करते हैं। श्री शंकराचार्य, श्रीचैतन्यदेव, स्वामी विवेकानन्द प्रभृति तपस्विगण वैराग्यवान होकर ही जन्म ग्रहण

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

किये थे। उस समय मेरी दृढ़ धारणा थी कि जो भगवानको प्राप्त करना चाहते उनको विवाह करना उचित नहीं। स्वामीजी के सन्यासी-गीतमें पढ़ा था—

"कामिनीमें करता स्त्रीबुद्धि जो जन,
होता नहीं उसका बन्धन विमोचन"।

श्रीरामकृष्ण परमहंस देव बोले थे—'जिसने एक बार रसगुल्ला चख चुका है उसे गुड़ प्रिय लगता नहीं'। मैं तो रसगुल्ला ही खाने चाहता, ईश्वरका नामामृतही पान करने चाहता, अतएव संसार रूप गुड़ मेरा खाद्य नहीं। श्रीशंकराचार्यने कहा है—नारी नरकका द्वार है। परन्तु जैसे पुरुषके लिये नारी नरकका द्वार है उसी प्रकार नारीके लिये भी पुरुष नरकका द्वार है, यही उनके कथनका अभिप्राय है। श्रीचैतन्य तथा श्रीशंकराचार्य अभिनय छोटे ही वयसमें देखकर स्थिर कर लिया था कि संसारमें आसक्त होऊँगा नहीं। बाल्यसखाके परामर्शसे जिनको जीवनका आदर्श रूपसे पहले ग्रहण किया था वे प्रभु जगद्बन्धु भी चिरकुमारही थे।

संसारमें कोई अभाव था नहीं। मेरे पिता तीन भाई थे। मैं ही एक मात्र उनके दुलारा था। ताऊ महाशयको एक मात्र कन्या थी, चाचाको भी एक लड़की ही थी। हमारे चार सहोदर भाई बहन थे। ताऊ महाशय एवं मेरे पिता तब इस लोकमें नहीं थे और सब वर्त्तमान थे। सबसे छोटा, मेरा छोटा भाई मुझसे दश वर्षका छोटा था। बाल-विधवा मेरी फूफी एवं अन्यान्य आत्मीय गण मुझे बहुत ही प्यार करते। धनकी प्रचुरता न होनेपर भी कोई

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

कमी नहीं थी। खाद्यान्नकी बातही नहीं यहाँ तक कि दूध घी प्रभृतिका भी प्राचुर्य था। अतएव सांसारिक कष्ट वा अनादरसे मेरे अन्तरमें वैराग्य उत्पन्न हुआ था यह मैं नहीं कह सकता। वरं यह कहूँगा कि मनुष्यके सांसारिक मोह एवं काम क्रोधादि जैसे सहजात होते मेरे अन्तरमें वैराग्य, ईश्वर प्रेम वैसे ही सहजात थे। कोई जैसे आकर्षण करता हो, कोई जैसे हाथके इशारे पुकारता हो।

मैं शान्त चित्तसे अपने कमरेमें वा छादपर बैठे रहा करता। किसी किसी दिन गभीर रात्रि पर्यन्त बूढ़ी गंगाके तीर वा रमना मैदानमें बैठ कुछ सोचा करता। सब रोज कॉलेज मैं जाता नहीं। यह सब समाचार जब अभिभावक तथा आत्मीयोंके कानमें पड़ा तब तो वे और भी अधीर हो गये। वे हमें प्रत्यक्ष एवं परोक्ष रूपसे उपदेश देने लगे कि 'तुम सुखका संसार त्यागकर अनिर्दिष्ट पथमें मत गमन करो। अपने इतने आत्मीय तथा प्रिय जनोंको छोड़ विदेश-वासीमत हो जाना। साथ पैसा नहीं रहनेपर विदेशमें कोई भी खोजखबर लेगा नहीं। लाभमें लाभ होगा दुःख दैन्य अनाहार और अनिद्राका भोग। शरीर जीर्ण शीर्ण तथा दुर्बल हो जायगा। बीमार पड़नेपर सेवा सुश्रुषा करनेवाला कोई भी रहेगा नहीं। दुःखमें सहानुभूति दिखानेवाला कोई भी रहेगा नहीं। धूप वर्षामें पीड़ित होकर, जाड़ा गरमीसे पीड़ित होकर किसी निर्जन प्रान्तमें वा वृक्षके नीचे प्राण विसर्जन करना पड़ेगा। इससे अच्छा कि आश्रम धर्मका यथाक्रम पालन करो। बहुतोंके अन्नदाता तथा आश्रय दाता हो वो।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

वृद्ध वयसमें धर्म और तीर्थ यात्रा करना। विवाह करो, संसारी हो वो, सन्यास सबके लिये नहीं—विशेषतः कलिकालमें सन्यासका विधान नहीं है।" इत्यादि नाना तर्क युक्तियोंसे मुझे भुलानेकी चेष्टा करते। किन्तु जिस मनको वे भुलाते वह मन तो वैराग्यका चोला पहनकर बैठ रहा था, इस लिये उन लोगोंकी लुभानेवाली बातें व्यर्थ हो गईं।

विप्लववाद छोड़ा काँग्रेसवाद भी छोड़ दिया जनसेवा भी छोड़ चुका था। मैं चाहता अपनी 'माँ' को। माँ कौन और कहाँ यह मैं नहीं जान पाता तो भी माँको पुकारना अच्छा लगता। माँ बोलनेपर समस्त शरीर शीतल हो जाता, मन भी शान्तहो जाता यह अनुभव होता। ध्यान जानता नहीं मंत्र जानता नहीं, विधि भी मैं जानता नहीं तो भी माँ बोलनेमें अच्छा लगता। कॉलेजकी छुट्टीके अवसरमें अपने गाँव घर जानेपर निर्जन मैदानमें वा नदीके तीरमें बैठकर माँ बोलना अच्छा मालूम पड़ता। रमनाके मैदानमें वा बूढ़ी गंगाके तीरमें बैठ माँ बोलना प्रिय लगता। गभीर रात्रिमें अनन्त नक्षत्रोंकी ओर हेरनेपर अच्छा लगता। चाँदनीमें होस्टेलके छादपर बैठ माँ बोलना प्रिय लगता। उस जंगलेके छेद होकर नीम गाछकी ओर होकर माँ बोलना अच्छा लगता था। आकाश की आर ताकनेपर भला मालूम होता। वायुको माँ बोलना भी अच्छाही लगता। अजी राह दिखाओ, अपने पास खींचलो, अपार है यह भव-सागर। बाहरमें शत्रु, भीतरमें शत्रु। भीतरकी मनोवृत्ति

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

चंचल होती जाती। तुम सामने आओ, समीप आओ तुम गुरुरूपसे कृपा करो।

पुलिसकी ताड़न—

सिरका बाल छोटे क्यों छटवाते, खद्दड़ क्यों पहनते, साधारण वेशमें क्यों रहते, निरामिष आहार क्यों करते इसकी कैफियत जैसे अभिभावक तथा आत्मीयोंको देनी पड़ी उसी प्रकार पुलिस कर्मचारी गणको भी देनी पड़ी। यहाँ तक कि मैं विवाह क्यों नहीं करने चाहता सो भी पूछनेमें बाकी नहीं रख छोड़े। उनके प्रश्नोंके उत्पीड़नसे मैं एक वार एक पुलिस कर्मचारीको उपहासकर जिज्ञासा की थी—क्या आपको कन्यादाय है? पुलिस कर्मचारी गण ये समाचार भी संग्रहकर लिये थे—मैं तोशक त्यागकर शक्त बिछौनेपर सोता, तकिया त्यागकर शक्त पुस्तक सिरहानेमें रहता। देहमें तेल मालिस करता नहीं, साबुनके बदले खलीका उबटन व्यवहार करता। इन आचरणोंसे मानो मैं बहुत दुराचारी था। क्रान्तकारियोंका समर्थन करना बोलकर वे हमें भी एक क्रान्तकारी व्यक्ति समझ लेते। बम बनाने जानताकी नहीं, बन्दूक और रिवॉल्वर चलाने सीखा है या नहीं, यह कोई कोई पुलिस कर्मचारी अम्लान वदनसे जिज्ञासा करते। अभिभावक गण इससे और भी डर गये थे। कोई कोई पुलिस कर्मचारी शीघ्र विवाह करानेके लिये अभिभावकोंको प्रोत्साहित कर रहे थे। यह पुलिसका उत्पात हमारे प्रति २०।२५ वर्ष काल पर्यन्त था। उस सम्बन्धमें यथा स्थानमें पीछे कहूँगा।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

विवाहका प्रस्ताव मेरे मनमें काम तथा संसारके प्रति और भी घृणाको उत्पादन कर रहा था। कामासक्त किसी मनुष्यके पास बैठनेसे विशेषतः वायुके सन्मुख बैठनेपर एवं उसके शरीरके छूए वायुका हमारे शरीरमें स्पर्श होनेपर मैं तीव्र ज्वालाका अनुभव कर पाता। किसी जानवरके शरीरसे जैसे दुर्गंध निकलता उसी प्रकार कामान्ध विषयासक्त व्यक्तिके शरीरसे तामसिक गंध निर्गत होते अनुभव कर पीड़ित होता। संक्रामक रोग जैसे शरीरका अनिष्ट-कारक है, तामसिक लोगोंका सम्पर्क भी उसी प्रकारका अनिष्ट कारक होता, यह प्रति पदक्षेपमें अनुभव करने लगा। तब नियमित-रूपसे गीता कुछ-कुछ पढ़ता था। गीताका पूरा अर्थ नहीं समझ पाने पर भी किसी-किसी श्लोकके पाठसे विशेष प्रेरणा पाता। "त्रिविधं नरकस्येदं द्वारं नाशनमात्मनः। कामः क्रोधस्तथा लोभस्तस्मादेतत् त्रयं त्यजेत्"। काम, क्रोध तथा लोभ ये तीन नरकका प्रधान द्वार है। गीताका यह श्लोक जिस दिन पढ़ा उस दिन हमारे अन्त-जंगत्में नवीन विप्लवकी सृष्टि हुई। तपस्यामें गभीर भावसे निमग्न नहीं होनेपर माँका स्पर्श गंभीर भावसे अनुभव नहीं कर पानेसे रिपुकुलको दमन करना कठिन है यह भी मैं समझ पाया। आसन और प्राणायाम कुछ-कुछ अभ्यास करनेपर भी योगका सुनिर्दिष्ट पथ कोई मिला नहीं यह भी समझ सका। ध्यानमग्न होना होगा, जंगत्को भूलकर ध्यानस्थ होना होगा। किन्तु उसका पथ दिखायगा कौन ? विचार किया—कॉलेज छोड़, घर छोड़, अपने स्वजनोंको छोड़ गुरुकी खोजमें बाहर निकसूंगा। मैं अपनी जय यात्रा

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

करूंगा। 'हृदय गलेगा नहीं, चरण भी टरेगा नहीं किसीके करुण-क्रन्दनसे'।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

गुरु लाभ ।

मन्मना भव मद्भक्तो मद्याजी माँ नमस्कुरु ।
मामैवैष्यसि युक्त्वैवमात्मानं मत्परायणः ।।

तुम हमारेमें मन लगावो, मेरा भजन पूजन करो मुझे प्रणाम करो अर्थात् कायमनोवाक्यसे प्रणत होवो, इस प्रकार मत्परायण होकर हमारेमें युक्त-समाहितचित्त होनेसे हमारेमें लीन हो जाओगे, मुझको प्राप्त करोगे । गीतामें यही बात पढ़ी ।

विराट् तुम, महान तुम, निर्गुण तुम, तुमको किस तरह अपना चित्त समर्पण करूँगा ? अतीत कालमें कब तुम स्थूल रूपसे अवतीर्ण हुए थे उस खयालसे तुममें आत्म-निवेदनकी प्रचेष्टाकर विफल होता । मैं चाहता मेरे ही जैसे देहधारीको । जो मनुष्य देह धारणकर भी महामानव हों । जो जीव शरीरमें रहकर भी ब्रह्मरसमें निमग्न हों । जो जीवत्वसे ब्रह्मत्व पर्यन्त सोपानकी रचना करने जानते हों, एवं जो उसी पथसे सर्वदा आवागमन करते हों; मैं चाहता ऐसे ही ब्रह्मविद्को । जो इच्छा करने मात्रसे चित्तकी गतिको रुद्धकर ब्रह्मरसमें निमग्न हो सकते हों, गंभीर समाधिमें मग्न हो सकते हों, पुनः इच्छा करनेपर समाधिसे व्युत्थित होकर जीवका कल्याणसाधनकर सकते हों, मैं चाहता इसी तरह महामानवको ।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

अजी ! कहाँ लुक रहे हो, हे मानव देहधारी दिव्य पुरुष, एक बार दर्शन दो, पकड़ने दो, पथ दो पाथेय दो। 'हाथ धर तू लेचल सखा, मैं तो पथ पहचानता नहीं।' तुम आकर हाथ धर लो, कानोंमें प्राणोंमें सिद्ध वीज मंत्र ढाल दो। इतने बड़े विश्वसे तुमको मैं किस प्रकार ढूंढ़ निकालूंगा ? हे विश्व पिता ! तुम मेरे अन्तरमें तृष्णा दी है, उस तृष्णाके निवारण निमित्त कहाँ जल रूपसे, स्नेह-घन मूर्त्तिसे अवस्थान करते सो एक बार बोल दो। बाल्यकालसे ही तथा कथित गुरु तो अनेक देख रहा हूँ। किन्तु वे तो स्वयं अर्थलोलुप, भोगलोलुप, सांसारिक, तृष्णासे तृषातुर हैं। वे मुक्तिका पथ दिखाने जानते नहीं, स्वयं भी मुक्ति पथके पथिक नहीं। गुरुके छद्मवेशधारी ऐसे अज्ञ गुरुगण किस तरह पथ दिखायँगे कहो ? इसीसे कहता—हे विश्व पिता ! तुम स्वयं आकर पकड़ाई दो दिखाई दो। हाथ धरके बोलो—मैं आ गया हूँ—मैं आया हूँ, कर्म, ज्ञान तथा भक्तिकी त्रिवेणी धारा लेकर तुम्हें अभिषिक्त करूँगा बोलकर। मैं आया हूँ दिव्य जगत्का अमृत भंडार लेकर तुम्हारे तृषित कंठमें ढालनेके लिये। मैं आया हूँ सिद्ध वीज मंत्र लेकर तुम्हारे हृदयमें बोनेको। कब तुम मेरे हाथ पकड़ सामने खड़े होकर इन बातोंको गुरु गंभीर स्वरसे बोलोगे ? प्रतीक्षा तो अब सही जाती नहीं।

पढ़ने वैठनेपर पढ़ सकता नहीं। पुस्तकके पन्ने आँखके आँसूसे भीज जाते। वेदनाहत नेत्र जल कपोलसे टपककर बहकर कुरता धोतीको भिगा देता। लोगोंके समूहमें जा सकता नहीं, कॉलेज भी जा सकता नहीं। अहरहः वेदनासे जलता, आँसूसे बहा जाता।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

छिन अपने बिछौनेपर लेटकर वेदनासे छटपटाता। छिन ही सामने जंगला होकर दूर नील आकाशकी ओर हेरकर उसे बुलाता। पुनः छिन ही में सामनेके नीमगाछकी ओर हेरकर गाछके डाल-डालमें पात-पातमें उनको खोजता। देवताओंको कितना गोहराता, महापुरुष-को कितना कहता—दो, अजी दो हमारे गुरुको। जो हमारे जीवन रथके सारथी जो हमारे जीवन पथके पथिक, जो हमारी दिव्य दृष्टिके नयनमणि जो हमारे तापित अंगको जुड़ानेका शीतल जल, अजी! उन्हींको दो। मैं नर रूपी नारायण गुरुको पाकर दिव्य धामकी यात्रा करूँगा।

एक दिन सोचा—वर्त्तमान युगके तपस्वी श्री अरविन्दके पास पाण्डिचरी चलें। वहाँ मनोवांछा पूर्ण न होनेपर निर्जन हिमालयकी गुफाओंमें घूमकर अथवा तिब्बतके घोर जंगलोंमें जाकर अपने गुरुको निकाल लूँगा। श्री राम कृष्ण देव तब इस लोकमें नहीं, स्वामी विवेकानन्द भी इस धराधामसे विदाई ले चुके थे। श्री विजय कृष्ण गोस्वामी अन्तर्धान हो गये थे। श्री लोकनाथ ब्रह्मचारी भी शरीर त्यागकर चुके थे। प्रभु जगद्बन्धु भी कुछ दिन पूर्व लोकान्तर चले गये थे। जो लोग है वे क्या हमें पथ दिखा सकेंगे? वे ख्यातनामी हो सकते, अनेक लोग भेड़ियाधसान प्रवाह जैसे उनके पीछे-पीछे दौड़ धूपकर सकते, किन्तु तृष्णाका जल क्या वे देने जानते? जिनको देखनेपर श्रद्धासे शिरनत होता नहीं, जिनकी बोली सुनकर अन्तरकी वीणासे झंकार उठता नहीं, जिनको देख अतिशय आत्मीय बोध होता नहीं वे हमारी तृष्णाको किस प्रकार

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

निवारण करेंगे। जो पितासे बढ़के जो मातासे भी स्नेहघन, जो बन्धु भ्रातासे भी अधिकतर अपने, वे ही होंगे मेरे जीवन पथके पथिक—अन्तरराज्यके गुरु। कहाँ? ऐसे आत्मीय कहाँ? कहाँ ऐसे प्रिय बान्धव ही वा? आह! कैसी यातना, अब प्रतीक्षा सही जाती नहीं।

श्रीकृष्ण जन्माष्टमी तिथिमें उपवासकर ढाका गढ़ मैदानमें एक निर्जन वृक्षके नीचे बैठ सारा दिन उन्हें गोहराया। संध्याके बाद बूढ़ी गंगाके किनारे जाकर गभीर रात्रिपर्यन्त रोकर अतिवाहित किया। मंत्र जानता नहीं, तंत्र जानता नहीं, विधि-विधान जानता नहीं, जानता केवल रोना। होस्टेलका नियम भंगकर गभीर निशीथ पर्यन्त बूढ़ी गंगाके किनारे समय बिताया। गभीर निशीथमें होस्टेल लौट आया। छादपर बैठ अवशिष्ट रात काटी, उस आकाशकी ओर हेरकर, उस नक्षत्र, मेघ तथा चाँदनीकी ओर हेरकर। दिखाई दो, अजी! दिखाई दो निकट होकर।

जन्मभूमिके परिचित बन्धुओंसे अन्तिम विदाई लेकर उनके अनुसन्धानमें निकलूँगा यह संकल्प किया। मेरे अन्तःकरणकी गुप्तबात बन्धुगण जानते नहीं, आत्मीयगण भी जानते नहीं; किन्तु बन्धुवर्ग लक्ष्य कर रहे थे मेरे जीवनका एक अस्वाभाविक भाव। बन्धु माने होस्टेलमें जो कुछ घनिष्ठ भावसे हमसे मिलते उन्हींकी बात मैं कहता। होस्टेलके बाहर भी एक जन मेरे प्रिय मित्र थे। वे भी मेरे ही जैसे दिव्य जीवनका पथ ढूँढ़ रहे थे। वे रामकृष्ण-मिशनमें आसक्त थे इसीसे उनके आभ्यन्तरिक आवेग बहुत कुछ

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

संयमित थे। उनकी यह इच्छा रही कि मैं मिशनसे ही दीक्षा ग्रहण करूँ। होस्टेलके दो एक जन मित्र तबतक श्री भोलागिरि महराजके पास दीक्षित हो चुके थे। उनके मुखसे गिरिजी महाराजकी अलौकिक शक्तिकी वार्ता भी सुन पाई थी। बंगदेशमें तब भोलागिरिजी महाराजकी विपुल प्रतिष्ठा थी। किन्तु, जाना नहीं क्यों मेरे अन्तरसे कोई प्रेरणा पाई नहीं उन महापुरुषके पास दौड़ जाने की। मनुष्यके जन्म ग्रहणमें जैसे कर्मानुसार पिता-माताके साथ संयोग घटता है उसी प्रकार आत्मज्ञान लाभमें गुरुके साथ संयोग घटता। जिनका नाम सुनकर अन्तर व्याकुल होता नहीं, जिनको देख प्रियजन-सा बोध होता नहीं, लोगोंके कहने मात्रसे कैसे उनको गुरु बोलकर वरण करूँगा ? इसीसे मैं अनिर्दिष्ट पथका यात्री होकर रह गया।

सन् १९२३ ई० में पिछले साल जैसा ढाकाकी जन्माष्टमीकी प्रसिद्ध शोभायात्राको देखूँगा सोचकर बाहर निकला। साथमें थे हमारे एक मित्र जो रामकृष्ण-मिशनके भक्त थे। विक्टोरिया पार्कके बगल होकर कुछ दूर आगे बढ़नेपर ही हठात् एक व्यक्ति आकर नगीचसे मेरा नाम लेकर पुकारे। साथ ही साथ उनके एक युवक साथी आकर कहा—आपको भैया बुलाते हैं। उनके पास पहुँचनेपर ही वे मधुर सम्भाषणमें मेरा कुशल समाचार जिज्ञासा किये। वे प्रभु जगद्बन्धुके एकनिष्ठ भक्त थे। उनका जीवन संयत, पवित्र, तथा सात्विक था। वयस अधिक होनेपर भी तबतक विवाह नहीं किये थे। स्वरूप पवित्रतासे भरा। चक्षुमें निर्मल ज्योति। वे

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

हमारे कुल समाचार अवगत होकर एक छोटी पुस्तक मेरे हाथमें दिये। नाम—'सत्यप्रतिष्ठा'। वे बोले—'साधन समर' नामका एक अपूर्व ग्रन्थ इन्हीं महापुरुषका लिखा हुआ प्रकाशित हुआ है। उनका पता है—नं०-१०० बनिया टोला स्ट्रीट, शोभा बाजार, कलकत्ता। उनका पहलेका नाम मालूम नहीं। अभी वे श्री सत्यदेव नामसे परिचित हैं।

'श्री सत्यदेव' यह बहुत ही प्रियनाम, बहुत ही परिचित नाम-सा मालूम हुआ। मन ही मन अनेक बार उस नामका उच्चारण किया। मन ही मन उनको प्रणाम किया। कुछ देर शोभायात्रा देखकर होस्टेल वापस आया। 'सत्यप्रतिष्ठा' पढ़ने लगा। दो-तीन घंटेमें ही पुस्तक पढ़ डाला। मनमें आया कि मेरे पथका पाथेय इसी ग्रन्थ-लेखकके पास संचित है। दूसरे ही दिन उनको पत्र लिखा अन्तरका कुछ आवेग जनाकर। 'साधन समर' पुस्तक भी डाकसे भेजनेकी अभिलाषा प्रगट की। यथासमयमें पुस्तक पहुँच गयी, पत्रका उत्तर भी आ गया। अनेक बार पत्र पढ़ा। पत्रमें कई प्रश्न भी थे, जिसका उत्तर लिख भेजा। अब प्रतीक्षा सह्य होती नहीं यह भी सूचित किया। 'साधन समर' पुस्तक पढ़नेसे अन्तर और भी व्याकुल हो गया उनके पास दौड़ जानेके लिये। उस पुस्तकमें लिखा था—'आओ मातृक्रोड़स्थ मातृहारा शिशु'। माताकी गोदीमें बैठ फिर माँको देख पाता नहीं यह बात तो मुझे ही संकेत कर लिखी गई है। मैं ही माताकी गोदमें बैठ मातृहारा होकर रो रहा हूँ। माँका मुख देख पाता नहीं। माँकी स्नेहभरी

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

दोनों आँखें दिखायी देतीं नहीं। वह मुख देखनेका कौशल, वह स्नेहभरी दृष्टिसे अभिषिक्त होनेका कौशल यह ऋषि अवश्य ही जानते होंगे, इसीसे तो वे ऐसा लिखे हैं—'आओ, आओ मातृ-क्रोड़स्थ मातृहारा शिशु।'

———

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

दीक्षा लाभ।

बंगला सन् १३३० साल (सन् १९२३ ई०) श्री श्रीलक्ष्मी पूर्णिमा तिथि, आश्विन मास, स्थान बनिया टोला स्ट्रीट नं० १००, तिमंजिलेपर एक छोटे कमरेमें श्रीनारायण प्रतिष्ठित। उनके सामने श्रीगुरुदेव दीक्षा दिये। आत्मज्ञ पुरुष आत्मचेतनासे उद्बुद्ध किये।

मैं श्रीदुर्गापूजाके कई एक दिन पूर्व ही अपने मित्रोंके साथ बिछौना, पुस्तक तथा पेटी इत्यादि घर भेजकर श्रीगुरुदेवसे मिलनेके लिये कलकत्तेकी ओर रवाना हुआ। मनमें आता जैसे अनेक जन्मके परिचित बान्धवके पास जा रहा था। पुनः छिनमें ही सन्देह उत्पन्न हो जाता—केवल उनकी पुस्तक पढ़कर इतना श्रद्धान्वित हो जाना क्या ठीक है? लोगोंके व्यावहारिक जीवन एवं उनके लेख तथा कथावार्त्तामें अनेक अन्तर देखा जाता। वे यदि मत्स्य मांसाहारी तांत्रिक हों तब तो उनसे मत मिलेगा नहीं, तब क्या करूँगा? यदि उनके पास पथका अनुसन्धान नहीं पाऊँ, यदि जीवनका भार वे ग्रहण नहीं करें ऐसी स्थितिमें ही वा क्या करूँगा? फिर क्या तथाकथित बन्धुवर्गके संग उसी बोर्डिंगमें रहना होगा? फिर क्या उन्हीं परिजनोंके बीच रहकर मोहके चक्करमें पड़ उत्पीड़ित होना होगा? मेरी आन्तरिक व्यथाको वह महामानव समझ पायँगे नहीं? उनके साथ क्या पूर्व जन्मका कोई सम्पर्क ही

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

हमारा नहीं ? तब उनका नाम सुनकर इतनी आत्मीयता बोध होती क्यों ? पिता-माताके साथ जैसा संस्कार-जन्य सम्पर्क रहता उसी प्रकार गुरुके साथ भी सम्पर्क रहता ऐसा मैं सुन पाया है। वे क्या मुझे प्रत्याख्यान कर सकेंगे ? जो घटनेके योग्य नहीं वह यदि वास्तवमें घटित हो जाय तब क्या करूँगा उसको भी सोचने लगा। विचार किया कि तपस्वी श्रीअरविन्दके निकट जाऊँगा। वे भी यदि प्रत्याख्यान कर दें तब हिमालयकी गुफामें बैठकर अपने मन-से उनको गोहराऊँगा। सारे रास्तेमें इसी प्रकार सोच-विचार करते हुए कलकत्ते की ओर चल रहा था।

सवेरे सियालदह स्टेशनमें रेलसे उतर अपने जीवनके अच्युत-सारथि, प्रेममय पिता- दरदी बान्धवके निकट हाट-खोला बनिया टोला स्ट्रीटमें उपस्थित हो गया। तब कलकत्तेमें इतने लोक-लोका-रण्य था नहीं; इतनी मोटरगाड़ी भी नहीं थी। मेरी घोड़ागाड़ी जिस जगह खड़ी हुई उसकी दूसरी ओरके घरसे दो तीन आदमी बाहर आये। युवक, गेरुआ वस्त्र पहने, माथेमें कुछ बड़ा केश, गालमें छोटी-छोटी दाढ़ी थी। उनमेंसे एकने पूछा आप किसे चाहते ? उत्तर दिया नं० १०० बनिया टोला स्ट्रीटमें जो महापुरुष निवास करते मैं उन्हें ही चाहता।

प्रश्न—आप क्या ढाका से आये हैं ?

उत्तर—जी हाँ।

वे हमारे सामानको उनके ही आलयमें रखनेके लिये कहे। एक बेतके बाकसमें पहननेकी कुरता-धोती थी एवं कुछ पुस्तक थी। एक

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

छोटा बिछौना, शतरंजी, कम्बल, सुजनी, तकिया और मच्छर-दानीके अलावे एक लोटा था। मित्रोंके अनुरोधसे इतने सामान साथमें लाया था। और भी कितनी वस्तुएँ लानेके लिये उन्होंने दी थी, किन्तु मैं लायी नहीं। श्री बुद्धदेव तथा श्री चैतन्यदेव जब सन्यास ग्रहण किये थे तब वे अपने साथ कुछ भी नहीं लेकर निकले थे। मैं ही वा इतनी सामग्री लेकर क्यों चलूं? विशेषतः मैं जिनके पास जा रहा हूँ वे तो ईश्वर तुल्य हैं। फिर ईश्वरको अभाव ही किस वस्तुका? जो कुछ हो, मैं अपने सामान्य सामानों-को वहाँ ही रख उन साधुओंके निर्देशसे मुँह हाथ धो कपड़ा बदला। बार-बार अपने हार्दिक आवेग सूचित करने लगा—मैं उनसे मिलने चाहता, एक बार प्रणाम करने चाहता। तब उस मकानकी दूसरी ओर एक सकरी गली होकर एक साधु हमें ले चले। सीढ़ियाँ पारकर दो मंजिलेपर चढ़ते ही उन सदाप्रसन्नवदन स्नेहसागर पिताको एक आसनपर बिराजमान देखा। दुग्धवती गौ जैसे अपने बछड़ेको जोह रही हो उसी प्रकार मेरी स्नेहमयी जननी, परमपिता, परमबन्धु मेरी प्रतीक्षा करते हुए हमारी ओर ताक रहे थे। आँखोंसे आँख मिलते ही मधुर मुस्क्यानसे सम्बोधन किये—'आओ श्रीमान्'। अहा! क्या मधुर आह्वान, कितना स्नेन इस छोटे वाक्यमें, कितना माधुर्य उनके अवलोकनमें, मुस्कराहटमें। स्वर्ग कहाँ सो जानता नहीं। मुझे मालूम होता जैसे उसी जगह, उन्हीं ऋषिके चरणके तलवेमें मेरे जीवनका स्वर्ग है। इतने आत्मीय, इतने प्रिय, इतने सुन्दर, इतने सरस तुम

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

पिता हमारे। दंडवत् प्रणाम कर पाँवके पास बैठ गया। मालूम हुआ जैसे वास्तवमें उस दिन मैं अपने आप्तको प्राप्त किया। विचार, वितर्क, वितंडा अन्तरसे दूर हो गया। मस्तक नत हो गया, मनका संशय नष्ट हो गया, अन्तर श्रद्धासे परिपूर्ण होने लगा। मनमें आया कि उनको जकडके पकडूं, मनमें आया कि उनको छातीसे लगा नाचूं। मनमें आया कि उनके दोनों हाथ पकड़ किसी एकान्त गुफेमें चला जाऊं। मनमें आया कि महासिन्धुमें इस लघुविन्दुको डुबोकर भेदाभेदकी ज्वालाका निरसनकर डारूं। कुछ देर मौन रहकर एक दूसरेको परस्पर निहार रहा था। यह केवल आँखोंसे नहीं, हृदयसे निरीक्षण था। एक अलौकिक शक्तिका स्पर्श उनकी दृष्टिसे प्राप्तकर रहा था। कुछ कालबाद रास्तेमें कोई असुविधा हुई या नहीं इत्यादि विषयके दो चार प्रश्न किये। स्नान भोजनके उपरान्तक अपराह्नमें पुनः भेंट होगी ऐसा कहे। प्रणामकर उसी पथ-प्रदर्शक साधुके साथ साधुओंके डेरेमें लौट आया।

छोटा मकान, निचले मंजिलमें-ठंढकसे गीला। ज्ञात हुआ कि डाक्टर श्री तिनकौड़ी घोष महाशयका वह मकान था। वे श्री श्री ठाकुर (गुरुदेव) के एक भक्त थे। इसीसे साधुओंको बिना भाड़ेके रहनेके लिये दिये थे। एक जोड़ी चौकी बिछी थी। उसपर तीन जन साधुओंके तीन बिस्तरे बिछे थे। समझ लिया कि हमें नीचे जमीनपर ही अपना बिछ‌ंना करना पड़ेगा। स्नान भोजनके बाद कुज देर विश्रामकर लेनेपर प्रतीक्षा करने लगा—कब उनका फिर

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

दर्शन होगा। इसी अवसरमें साधु लोग अनेक प्रश्नकर मेरा परिचय पुंखानुपुंख रूपसे पा लिये।

तीसरे पहर वे महापुरुष फिर अपने पास बुलाये। इस बार दो मंजिलेपर उनके सोनेके कमरेमें जाते ही वे किवाड़ बन्दकर देनेको कहे। वे अपनी खाटके एक भागमें बैठनेका इशारा किये, जैसे पिता पुत्रको करता है। किन्तु मैं खाटपर नहीं बैठ थोड़ा शिर झुकाके खड़ा रहा। वे मेरे माथेपर हाथ फेरे तो पवित्र गंगाकी अमृतधारासे मानो अभिषिक्त होने लगा। 'साधन समर' पुस्तककी कौन बात अच्छी लगी सो जिज्ञासाकी। मैं उत्तर दिया 'आओ मातृ क्रोड़स्थ मातृहारा शिशु' यही बात सब बातोंसे विशेष अच्छी लगती कुछ मुस्कराकर फिर बोले—'जो माँ को चाहता उसके लिये यह पथ दुर्गम नहीं, उनकी कृपा होने ही से अन्तरमें आवेग आत', एवं वे आकर्षणकर अपने पास टान लेतीं। तुम्हारे भी शुभ दिन आगतप्राय। तुम माँ को पाओगे बोलकर ही माँ तुम्हे आकर्षणकर रही हैं। यहाँ ही रहो, और कहीं भी जाना न पड़ेगा। वे अपनेको इंगित कर बोले—यहाँसे ही तुम्हारे पाथेय एवं पथका अनुसंधान मिलेंगे'। स्नेहाश्रु से भीजते-भीजते और भी क्या-क्या बोले यह मैं सुन पाया नहीं। मैं केवल बारंबार यही सुन रहा था—'यहाँ ही रहो, यहाँसे ही तुम्हारे पाथेय और पथका अनुसंधान मिलेंगे'। वे फिर मेरे शिरपर हाथ फेरे। मैं उनके चरण पकड़ प्रणाम किया। प्रणामके माध्यमसे अपनेको निवेदित करनेकी चेष्टाकी। "निवेदयामि चात्मानं त्वं गतिः परमेश्वर"। इस मंत्रका भाव अन्तरमें आया।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

यह कोई अभावका अश्रु नहीं; शोकका भी अश्रु नहीं; यह अश्रु आनन्दका। अब इसी अश्रुसे भीजने होगा, भसने होगा। वे फिर बोले—दुर्गापूजा आगतप्राय है। तुम अच्छे समयमें ही आये। माँ की पूजाके पश्चात् तुम्हारी दीक्षा होगी। डाः तिनकौड़ी बाबूके तिमंजिलेके छातपर पंडाल बनाकर उस साल पूजाकी व्यवस्था हुई थी। याद आती प्राय २०।२२ व्यक्ति पूजक इस पूजामें योग-दान किये थे। महिलायें भी १०।१२ थीं। यह समवेत भावसे पूजा मैं प्रथम ही देखी। पूजाका कुछ भी मैं नहीं जानता था, दुर्गाका ध्यान तक नहीं। तो भी वे मुझे पूजामें बैठनेका अधिकार दिये। ठीक उनके आसनके पास न होनेपर भी दूर नहीं बैठा था। उपस्थित पूजकों अर्थात् भक्तोंके मध्य मैं ही वयसमें सबसे छोटा था। केवल वयसमें ही छोटा नहीं, ज्ञान बुद्धिमें भी छोटा था। वे सभी मंत्र जानते, तंत्रजानते, विधिविधान कुल जानते। इसीसे मैं उन सबको श्रद्धाकी दृष्टिसे देखता।

सप्तमी पूजामें प्राणप्रतिष्ठाके बाद प्रतिमामें परिवर्त्तन देखा। माँका मुखड़ा उज्ज्वलतर बोध होने लगा। याद आती कि अष्टमीके दिन, सवेरे जब गंगा स्नान करने जा रहा था, एवं जब स्नान कर लौट रहा था तब दाहिने-बाँयें, सामने-पीछे, ऊपर-नीचे जिस ओर ताक़ता माँका वह उज्ज्वल मुखड़ा ही केवल देख पाता था। राह चलते-चलते जैसे अक्षम हो पड़ता था। माँका स्नेह भरा हुआ मुखड़ा मेरी आँखोंके पास मेरी छातीके पास भासित हो उठता था। रास्ता चलना कठिन हो गया। सहयात्रीगण तेजीसे आगे बढ़ रहे

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

थे। किसी-किसीने समझा कि मैं पहली बार कलकत्ता गया था इसी-से शहरके मकानोंको देख रहा था। मैं जो भर नयन अपनी माँको देख रहा था सो कैसे वे जान पाते? गंगा स्नानकर उस दिन मनमें आता था कि सत्य ही गंगा हैं—"सद्यः पातकसंहंत्री, सद्यो दुःख विनाशिनी"—यह मंत्र लज्जासे मन ही मन पढ़ रहा था। 'सुखदा मोक्षदा गंगा, गंगैव परमा गतिः' ये वाक्य वारंबार बोलनेमें खूब ही अच्छा मालूम होता था। इसीसे बार बार बोलता था—'सुखदा मोक्षदा गंगा'। 'विगलित करुणा गंगा यमुना' यह वाक्य भी अनेक बार मनमें आया। भगवान् जैसे करुणासे विगलित हो वह सुखदा मोक्षदा गंगा होकर सज्जित हो गये हों। अंजलि भरके गंगामें गंगाजल अर्पण कर तर्पण किया। अंजलि भरकर गंगाजल पान किया। सुखदा मोक्षदा गंगा, विगलित करुणा गंगा। मनमें हुआ—अस्थि, मज्जा, स्नायु उस विगलित करुणा गंगाके स्पर्शसे विगत कल्मष हो रहा था। सहयोगी लोग चिल्लाकर कहे—चलो शीघ्र-शीघ्र पूजामें बैठना होगा। दबे पाँव चलना पड़ा। माँका वह उज्ज्वल मुखड़ा तो साथ-साथ चल रहा था। पूजा मंडपमें पूर्व-निर्दिष्ट अपने आसनपर बैठ गया। अब माँका कल्पित मुखड़ा वास्तव मूर्त्तिमती माँके साथ मिल गया। पूजा प्रारंभ होनेमें तब भी कुछ विलम्ब था। सब पूजाका आयोजन कर रहे थे। मुझे आयो-जन करनेका कुछ भी नहीं। अर्थ रहनेपर भी अर्थहीन होकर निकला था। अनेक लोग रहनेपर भी उनको छोड़ अकेला निकल पड़ा था। मंत्र भी कोई जानता नहीं। तब याद पड़ी—'अश्रु जलसे

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

तुम्हारे चरणकमल नहीं धोनेसे तुलसी और गंगाजलसे पूजा करनेसे क्या होता ? मेरे पास पूजाका कोई उपकरण नहीं, अपने भंडारमें सिर्फ मैं ही हूँ । उपचारसे पूजा करने आया नहीं । मैं अपनेको ही उत्सर्ग करने आया हूँ । "लो लो मेरे जीवनका भार, प्राणके देवता हे प्रिय हमारे" । इस प्रकार कितनी बातें हृदयमें उदय होते । ये बातें ही थे मेरे मंत्र, अश्रुजल ही था मेरा उपचार । याद आती, आज भी याद आती, उस अष्टमी नवमी तिथिमें जितना रोया था उतना प्रायः इस जीवनभरमें कभी नहीं रोया । 'लो लो मेरे जीवनका भार, अश्रुसिक्त मौन वेदना अर्घ उठाकर लाया आज' । मौन मंत्रसे आन्तरिक यह अर्घ बराबर अर्पण करता रहा, अपने आपको अर्पण करता रहा । 'बोल दो हमें, मैं कैसे अपराधी हुआ, किस अपराधसे फिर इस विश्वमें आया ?' किस अपराधसे पथिक होकर पथमें विचरण करता । किस अपराधसे सिन्धुको छोड़ विन्दुका रूप धारण किया ? बतला दो हमें मैं किस प्रकार अपराधी ? सब कोई क्या मंत्र पढ़ते थे, वे आत्मज्ञ पुरुष क्या मंत्र पढ़ाते थे अधिक काल ही उस ओर हमारा लक्ष्य रहा नहीं करता था । सबोंके बीच बैठे रहनेपर भी मैं अकेला—निःसंग । छिन ही छिन भास उठता वह चिन्मयीका मुखमंडल आँखमें, अन्तरमें, हृदयमें । नवमीकी सारी रात नींद आई नहीं । कल विजया होगी । माँकी मूर्त्ति अन्तर्हित होगी । फिर माँको देख पाऊँगा नहीं । अपने दुःखको जतानेका आश्रयस्थल खो बैठूँगा इसी सोचसे रोता था । मैं रोता था यह कहना भूल होगा, कोई मानो मुझे रुला रहा था । मैं अपनी

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

कविता खो बैठा उस वनमें इसीसे मैं दरदर रोता। बतलाओ हमें कैसे मैं अपराधी। हे गुरुदेव! बोल दो हे बांधव बोल दो! तुम मातृघनमूर्त्ति, तुम जीवनके अच्युत-सारथि बोल दो हमें तुम बोल दो। इन बातों को बोलते-बोलते विजयाके परे श्रीगुरुके पादपद्ममें लुण्ठित होता था। वे भी मातृघन मूर्त्तिसे अपने चरणतलसे उठाकर अपनी छातीसे लगा लिये थे उस दिन। स्नेहमय भुजाजालसे जकड़ लिये थे। बोध होता जैसे अश्रुजलसे जन्म जन्मान्तरीय अपराध कुछ प्रक्षालित हो गया। यह भी बोध हुआ कि जीवत्वका मोह भी कुछ विदूरित हुआ। इसीसे आत्मज्ञ पुरुष मुझे चरणसे उठाकर छातीसे लगा लिये।

तीन चार दिन बाद मेरी दीक्षा होगी नया जन्म होगा। अँधियाला घर उजाला होगा मंत्रपूत होऊँगा, पथ और पाथेय मिलेगा। यह विचार करनेपर कितना उल्लास, कितना आँसू दोनों आँखोंमें। पुण्य कोजागरा तिथि आ गई। वनके दो फूल और आँखमें अविरल अश्रुधारा यही मात्र उपकरणको लेकर तिमंजिलेके छोटे ठाकुर वाड़ी कमरेमें ऋषिके पद प्रान्तमें जब जा बैठा तो क्षण कालके लिये अपने आपको भूल गया था। मैं अनुभवकर रहा था कि वे दिव्य पुरुष जैसे मेरे देह, मन और प्राणमें अपने देह मन एवं प्राणको मिला दे रहे थे। "मद्देहो गुरु मन्दिरम्"। ना, ना, केवल मेरा देह गुरुका मन्दिर ही नहीं, "मद्देहः श्रीगुरोर्देहः, मत्प्राणः श्रीगुरोः प्राणः।" हे आत्मज्ञ महापुरुष! तुम अपनेको ऐसे छोटे आधारमें ढाल दे सकते इसीसे समझता कि तुम अणुसे

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

भी अणु, महानसे भी महीयान कहे जाते। ऐसा मालूम होता कि मेरी आँखें उनकी आँखोंमें मिल गई हैं। मेरे बाहु उनके बाहु हो गये, मेरी त्वचा, अस्थि, चर्म, मांस उन्हीं की त्वचा, अस्थि मांस हो गये हैं। मेरा अहं क्षीण रूपमें जली रस्सीके समान पड़ा हुआ है। वे उद्बोधन किये मैं उद्बुद्ध हो गया। मैं जाग्रत हुआ, चिर-जीवनकी निद्रा भंग हो गई। पथ पाया, पाथेय पाया और अब प्रारंभ हो गई मेरी यात्रा।

एक छोटे वटबीजमें जैसे एक महान वृक्ष छिपा रहता हैं उसी प्रकार छोटे बीजमंत्रमें अनन्त शक्ति छिपी रहती। वप शक्ति साधन-से दीपित होगी—प्रज्वलित होगी जपके अभ्याससे क्रमशः वह सक्ति दिव्य रूपसे जग ज.यगी—मंत्र चैतन्य हो जायगा। छोटा सा एक मंत्र दिये और दिये अपने हृदयके अमितवीर्य—प्रसन्नता, करुणा और प्रेम। और यह भी कह दिये कि साधनाके विविध उपाय भी क्रमशः कहेंगे।

—:❀:—

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

भुवनेश्वरमें ।

भुवनेश्वर जानेके लिये गैरिक वस्त्रधारी दो जन साधु प्रस्तुत होने लगे। मैं तो प्रस्तुतही था। वेतका वेग, कम्बल और लोटा हाथमें लिया कि चले । मेरे पास राँधने और खानेका कोई बर्तन था नहीं। राँधना-पकाना तो उन दो साधुओंके संग एक हाँड़ीमें हो जायगा। खानेकी थाली लेकर प्रश्न उपस्थित हुआ। साधुओंके लिये वर्तन जो दे रहे थे वे श्री श्री ठाकुर (गुरुदेव) को पूछे— और यह छोकरा भी तो साधुओंके संग जा रहा है वह किसमें खायगा ? श्री श्रीठाकुर बोले—'वह तो साथमें कुछ भी लेकर आया नहीं, उसके लिये एक पीतलकी थाली और एक गिलास दे दो।' घरके भीतरसे वे बोले—'साधु होने आया है, पेट तो साथ है उसके लिये थाली वर्तनकी आवश्यकता है इतना भी क्या वह छोकरा जानता नहीं ? तब सीढ़ीके बगलमें मैं भी बैठा था, अपने कानसे इन बातोंको सुना।

जानेका रेलभाड़ा मेरे पास था। साधुओंके लिये शहरके टिकट-घरसे दो टिकट आ गये। मेरा टिकट हावड़ा स्टेशन पहुँचकर लिया गया। साधुओंको रेलमें चढ़ानेके लिये दो एक स्थानीय बन्धु गये थे। दूसरे दिन ठीक समयमें रेलगाड़ी भुवनेश्वर पहुँचनेपर एक बैलगाड़ी पर गठरी-सामान लादकर हम लोग भुवनेश्वरकी लाल माटी

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

वाली टेढ़ी-मेढ़ी राह होकर गाड़ीके साथ ही चले। चारों ओर छोटे छोटे जंगल स्टेशनसे ही मंदिरका शिखर देख पड़ता था। हजूरी पंडा श्री श्रीठाकुरका पत्र पाकर विन्दु सरोवरके पास खड़े थे। हम लोग पहले धर्मशालामें ठहरे। विन्दुसरोवरमें स्नानकर मन्दिरमें दर्शन किये। विराट मन्दिर, कई एक जगह जीर्ण अवस्थामें देख भीतरमें चमगुदड़ी भी बसेरा की थी। मन्दिरके प्रधान देवता शिव होते। पंडा लोग बोलते कि हरिहर दोनोंही मूर्त्ति यहाँ एक साथ हैं। मन्दिरके प्रवेश द्वारपर ही गणेश जीकी मूर्त्ति है। मन्दिरके इस कोने, उस कोने, सामने, पीछे अनेक देव देवियाँ हैं। साधुओंके साथ शिवकी पूजाकर अन्यान्य दो चार देव देवीको मैं देखा, मेरे पास पैसा पर्याप्त नहीं रहनेके कारण पंडेका उत्पात भी उतना नहीं था। यथा समय अर्थात् एक बजे प्रसाद आया। बहुत तृप्तिसे प्रसाद पाये। भात, गाढ़ी अरहरकी दाल और दो तीन तरकारी थी। अवशिष्ट प्रसाद रात्रि-भोजनके लिये जंगलेके पास रख दिया गया। तीसरे पहर साधुओंके साथ मैं भी जरा घूमनेके लियें बाहर हुआ—मैदानमें, जंगलमें, प्रान्तरमें जहाँ माँ सहज रूपसे मिलें, जहाँ गला-खोलकर पुकारा जाय, जहाँ लोक लज्जाकी भी कोई आशंका रहे नहीं। संध्याके बाद आनेपर देखा गया कि जंगलेके फाँकसे बन्दर कुल प्रसाद निःशेष रूपसे खाकर हाँड़ी फोड़कर रख छोड़ा है। जय भुवनेश्वर, जय महावीर! याद नहीं है कि रातमें भोजनकी कोई दूसरी व्यवस्था हुई थी या नहीं। प्रायः दो दिन हम लोग धर्मशालामें थे।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

इस बार लोकालयसे बहुत दूर (प्रायः एक मील) एक निर्जन मैदानमें दो-तीन पुराने शिव मन्दिरके पास एक फूसकी झोपड़ीमें जाकर हमलोग टिके। जिसका मासिक भाड़ा तीन रुपये थे। मिट्टीका दीवाल, जँगला इत्यादि विशेष कुछ भी नहीं, दो-एक गवाक्ष मात्र। पास ही एक निकम्मा जलाशय भी था जिसके जलसे बतन माँजना किसी तरह चलता था। मन्दिर बाजार प्रभृति अनेक दूरमें, गौरीकुंड तालाव भी बहुत ही दूर। मैं तो छायाकी नाईं उनका अनुवर्तन करता था। इसीसे अपना कोई मंतव्य प्रकाश नहीं कर साधुओंकी विधि-व्यवस्था ही मान ली। भाड़ेका घर मिल गया, अब नये ढंगसे संसार चलाना होगा। साधुओंके साथ बाजार गया। दो-एक ठो माटीकी हाँड़ी कलसी, एक खजूर पत्तेकी चटाई एवं चावल, दाल, तरकारी आदि साधुओंने खरीद किया। मन्दिरके समीप ही बाजार। सामान सब खरीदे जानेपर साधुओंने ढोनेका भार हमें दिया। वे स्वयं दो-एक हलकी वस्तु लेकर खड़ाऊँ पाँवसे आगे-आगे चले। बोझ ढोनेमें मैं अनभ्यस्त होनेसे बहुत कठिनाईमें पड़ गया। दो कलसी, हाँड़ी, चटाई, चावल, दाल इत्यादि सब सामग्री अकेला किस तरह ले जा सकूँगा समझ नहीं सका। कुछ तो कंधेपर कुछ हाथमें लिया, किन्तु चटाई कैसे लूँगा वह एक समस्या हो गई। अस्तु उसे बगलमें दबा लिया। कई एक कदम चलनेपर ही कंधेपरकी गठरी नीचे जमीनपर गिर पड़ी। हाथकी कलसी जमीनपर रख फिर गठरीको कंधे पर रख ली। साधुओंने पीछे हेरकर कहा 'चलो आओ, शीघ्र चलो।' अपने जीवनमें कभी

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

हाट-बाजार किया नहीं, गठरी ढोनेकी बात तो दूर रही। हमें बहुत कष्ट और असुविधा देख दूसरे साधु हमारे हाथसे एक घड़ा ले लिये। अब गठरी थाँभनेका तथा बगलकी चटाई सँभालनेकी कुछ सुविधा हुई। पसीना बहुत होने लगा। जो भी हो अतिकष्टसे स्थान-पर पहुँच गया।

दूसरे दिन सबेरे कुछ ध्यान-धारणाके पश्चात् साधु लोग गौरी-कुंडमें स्नान करने चले, हमें भी साथ चलने कहे। कलसी दोनों साथ ले चलनेको कहे। वहाँसे जल लाना होगा। विन्दु सरोवरकी अपेक्षा गौरीकुंड छोटा होनेपर भी जल उसका स्वच्छ था। उसमें बहुत लोग स्नान करते। पासमें ही उसके गौरीदेवीका मन्दिर जिसके समीप ही और एक छोटा कुंड था जिसका जल पीनेके लिये सब लोग ले जाते थे। गौरीकुंडमें स्नानकर मन्दिरमें गौरीदेवीका दर्शन किये। साधुओंने स्तव पाठ किया। छोटे कुंडसे दो घड़ा एवं उनके दो कमंडलुओंमें जल भर लिया गया। कमंडलुको हाथमें लेकर दोनों साधु खड़ाऊँ पाँवसे चलने लगे। हमें खड़ाऊँके बदले जूता था। पवित्र जलसे स्नानकर पवित्र मन्दिरमें दर्शन करना होगा बादमें पीनेका जल लेकर चलना पड़ेगा अतएव जूता व्यवहार करना चलेगा नहीं। कंकरमय देश, खाली पाँव चलनेमें बहुत कष्ट होता था। दो ठो जलका घड़ा ढोना पड़ेगा। एक तो कंधेपर उठाया, दूसरा हाथमें झुला लिया। एक कंधेसे दूसरे कंधेपर, एक हाथसे दूसरे हाथमें फेर बदलकर एवं रह रहके उनको नीचे उतार कुछ विश्रामकर फिर चलता। तब जड़भरतकी कई बार याद हो आई।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

उन्होंने प्रायः राजाकी पालकी ढोई थी। उन्हें देहात्मबोध था नहीं, इसीसे पालकी ढोनेमें कष्टका अनुभव हुआ नहीं। किन्तु हमें तो अभी भी देहात्मबुद्धि है इसीसे कष्टका भी अनुभव है। तो भी प्रसन्न रहनेकी चेष्टा करता। किन्तु अलक्षित रूपसे आँखोंके कोनेमें आँसू आ जाता था। यह वेदनाका अश्रु था प्रेमाश्रु नहीं। प्रत्यह सवेरे और तीसरे पहर इसी प्रकार हमें जल ढोना पड़ता था। अतः पर साधु लोग केवल अपने जूठे वर्तन तथा हलके कर्छुल, छोलनी, सड़सी इत्यादि माँज लेते थे। जले कारिखे वर्तन अधिकांश ही हमें माँजने कहते। बोला करते—पंडाको एक दाई ठीक करने कहे हैं, दाई मिलनेपर तुम्हें फिर वर्तन माँजना नहीं पड़ेगा। इसी तरह दिन कटते गये। साधु लोग कभी-कभी कहते—निष्काम भावसे साधु सेवा करनेसे ही आन्तरिक द्वार सहज ही खुल जायगा।

जिस रास्तेसे गौरीकुंड यातायात करता था उसके समीप ही कई एक बंगालियोंके घर थे। उस समय भुवनेश्वरमें घरद्वार कम ही था। एक बंगालिन प्रौढ़ा महिला छलकते नेत्रसे मेरे रास्तेके बगलमें आकर खड़ी हुईं। जलके भार वहनसे मुझे कष्ट होता देखकर वे पूछीं 'अरे बबुआ तुम्हे क्या कोई नहीं है? मैं उत्तर दिया 'हाँ माँ हमें सब हैं। उन्होंने फिर प्रश्नकी—'तुम कितने दिनसे इनलोगोंके पाले पड़े? ये तो बहुत ही निठुर हैं, तुम्हारा कोमल कच्चा शरीर है तो भी तुम्हारे कंधेपर दो जलके घड़े रखकर स्वयं कमंडलु हाथसे हन् हन् कर चले जाते। एक बार भी तुम्हारे कष्टकी ओर घूरकर ताकते नहीं, तुम इनका संग त्याग

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

करो, नहीं तो ये तुम्हें मार डारेंगे इत्यादि'। मैंने उत्तर दिया 'मैं अपनी इच्छासे ही इनके साथ आया हूँ'। अपने आन्तरिक क्लेश-को व्यक्त किया नहीं।

कठिन परिश्रमसे अभ्यस्त नहीं रहनेके कारण शरीर सहसा क्लान्त हो जाता। पौष्टिक आहारका भी अभाव था। आठ दश दिनमें ही अस्वस्थ हो गया। ज्वरसे १०।१२ दिन विस्तरेपर लेटे रहना पड़ा दूसरे साधु रामकृष्ण मिशनसे औषध ला देते। शिरमें बहुत ही व्यथा होती थी। डाक्टरनें माथा धुला देनेको कहा, किन्तु जल तो निकटमें नहीं मिलनेका इसीसे किसी प्रकार अंगपोंछा भिजाकर शिर और मुँह पोंछ लेता। प्रारब्धका भोग! शिरकी व्यथा नहीं रहनेपर भले तन्मयभाव लेकर रह सकता, किन्तु व्यथा बढ़नेपर छटपटाना होता। साबूदाना और मिसरीके लिये पैसे देनेपर द्वितीय साधु दयाकर ला देते। श्री श्री ठाकुर (गुरुदेव) के पास चिट्ठी गई। वे लिखे कुछ आराम होनेपर ही कलकत्ते भेज देना। दश बारह दिन वाद पथ्य लिया। उसी दिन कलकत्ता जाना होगा। थार्ड क्लास (तृतीय श्रेणी) के महसूलमें एक इन्टर क्लास (मध्यम श्रेणी) का टिकट मिल गया। रामकृष्ण मिशनके द्वारा किफायतमें टिकट मिलनेका सुयोग हुआ। टिकट मिल जाने-पर हमें स्टेशन पहुँचानेके लिये एक बैलगाड़ी भी ठीककर ली गई। तब हमारे पास कितने रुपये थे यह प्रथम साधु जानने चाहे। बैलगाड़ी किराया छै आने, हावड़ेमें कुलीको दो आने, एवं हावड़ेसे बनिया टोला घोड़ागाड़ीका किराया एक रुपया वा अट्ठारह आने।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

अतएव तात्काल हमें एक रुपया दश आने होनेपर ही चल जायगा। ऐसा हिसाब साधुजी किये। अवशिष्ट ३६) रु० जो मेरे पास थे वह साधुजी अपने लोगोंके खर्चेके लिये रख छोड़नेके लिये कहे। बोले—कलकत्ते पहुँचनेपर ही गुरु महराजसे जितना प्रयोजन होगा उतना मिल जायगा। मैं उन्होंको कुल रुपये दे दिया।

सबेरे दश बजे पथ्य खाया था इसीसे तीसरे पहर खूब भूख लगी। दूसरे साधु कुछ खोई (धानका लावा) खानेको दिये। स्टेशन जानेके लिये बैलगाड़ी आई, कारण कि स्टेशन तक पैदल चलनेकी शक्ति हमें नहीं थी। मैं गाड़ीपर चढ़ स्टेशनकी ओर रवाना हुआ। उस समय भुवनेश्वरमें हावड़ाके लिये रेलगाड़ी रात ९ बजे आती थी। इन्टर क्लासका डब्बा खाली ही था। अपना छोटा बिछौना बिछाकर सो गया। गभीर रात्रिमें क्षुधासे छटपटाने लगा। बालेश्वर में गाड़ी थमनेपर फेरीवाला चिल्ला रहा था—'मुरही बतासा, मुरही बतासा'। दो पैसेकी मुरही और दो पैसेकी बतासा खरीदी। क्षुधाकी निवृत्ति हो जानेपर फिर सो गया। भोर होनेपर खिड़की खोल प्राकृतिक दृश्य देखने लगा। गाड़ी आकर हावड़ा पहुँची। मेरे पास सवा रुपैया मात्र पूँजी थी। उसमेंसे एक आनेकी मुरही बतासा खरीद करनेपर एक रुपैया तीन आने मात्र रह गये थे। कुली करने पर घोड़ा गाड़ी किरायेमें कमी होनेकी आशंकासे दुर्बल शरीर होनेपर भी सूटकेस और बिछौना ढोने लगा, किन्तु कष्ट बहुत होता था। कुछ दूर बढ़ जानेपर एक कुली बोला—'बाबू हमें चार पैसे देना मैं आपका सामान पहुँचा दूंगा। ढोनेमें असमर्थतासे

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

राजी हो गया। अट्ठारह आनेमें घोड़ा गाड़ी ठीकर उसपर चढ़के बैठ गया। उसी समय गाड़ीवान दूसरे एक मुसाफिरके साथ भाड़ा ठीककर हमें भीतरसे निकालकर बाहर ऊपरमें अपने साथ बैठनेको कहा। बोला कि भीतरमें बैठनेसे और भी चार आने देने पड़ेंगे। उस आदमीके आचरणसे दुःख हुआ। अपना सामान नीचे उतारकर उसे कहा कि मैं तुम्हारी गाड़ीमें नहीं जाऊँगा। तब दूसरा एक गाड़ीवान आकर अट्ठारह आनेमें ही नं० १०० बनिया टोला स्ट्रीट हमें पहुँचा देनेमें राजी हुआ। अट्ठारह आने मात्रही हमारी पूँजी बची थी। साधु लोग जो हमसे रुपये माँगकर रखलिये यह बात श्री श्रीठाकुरको बोलनेमें संकुचित हो गया। भावा था कि साधु लोगही श्री श्रीठाकुरको सूचितकर देंगें। कोई कोई, हो सकता कि इस तरह साधुओंको रुपये दे देनेसे हमें अहंमक समझ लेते हों। किन्तु भविष्यमें जिनके संग रहना पड़ेगा, जिनका प्यार पानेकी इच्छा रहती थी उनका सामान्य द्रव्य देनेमें हमें विन्दुमात्र भी पराया भाव आया नहीं। मैं तो सब कुछ त्यागकर आ रहा था, मित्रोंके ही अनुरोधसे केवल कुछ रुपये साथमें लाया। कलकत्ता पहुँचनेपर जब अर्थाभावसे विशेष कष्ट पा रहा था तब मनमें कोई प्रश्न उठा नहीं ऐसा नहीं। उदारताके बदले साधुओंके आचरण हमें कुछ व्यथित किया था इसमें कोई सन्देह नहीं।

पहले साधुओंके साथ जिस कमरेमें मैं था उसी कमरेमें पुनः रहनेका सुयोग मिला। और भी एक व्यक्ति उस कमरेमें था। साधुओंके न रहनेसे चौकीपर ही सोनेका स्थान मिला। किन्तु

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

चौकी दोनोंमें खटमल भरे थे। आश्रममें अर्थात् श्री श्रीठाकुरके घरमें दोनों बेला भोजनकी व्यवस्था थी। बीमारीके बाद प्रायः कुछ दिन अधिक भूख लगती। सवेरे और तीसरे पहर हमें भी खूब भूख लगती। किन्तु मेरे हाथमें पैसे नहीं। ठाकुरवाडीमें भी जलपानकी कोई व्यवस्था थी नहीं। कॉलेज त्यागकर आनेके समय एक मित्रके पास कुछ रुपैया रख आया था। डाक्टरी पढ़नेकी पुस्तकें कीमती थीं। उनको एक मित्रके जिम्मे रख आया था। प्रयोजन होनेसे उन पुस्तकोंको बिक्री कर रुपया हमें भेज देगा ऐसी बात हुई थी। विदेश जानेपर पग-पगमें द्रव्यकी आवश्यकता होती यह बात वे हमें कहे थे। मैं अपने रुपये और पुस्तकें दान कर देने चाहा था, किन्तु वे ही हमारे भविष्यतकी चिन्तासे यत्नके साथ एक जन तो रुपये एवं दूसरेने पुस्तकें रख ली थी एवं वे कह दिये थे कि जब तुम्हें रुपयेका प्रयोजन हो सूचित करनेपर तुरत रुपया भेज दिया जायगा। जिसके पास नगद रुपया रखा था उसको कुछ रुपयेके लिये पत्र लिखूंगा यह विचार किया। किन्तु पोस्टकार्ड खरीदनेका भी पैसा हाथमें नहीं। तब पोस्टकार्डका दाम एक ही पैसा था। ५।६ दिन बाद जिनके साथ मैं एक कमरेमें रहता था उनको पत्र लिखते देख उनसे एक पोस्टकार्ड पैंचा माँगा। मित्रको दश रुपये भेजनेको लिखा। रुपये आ जानेपर सबेरे और तीसरे पहर समय-समयमें जलपान कर लिया करता। शरीर स्वस्थ हो गया।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

'न रखो उसे छप्पर छाया,
न राखो धन धान,
डगरमें लाकर अन्तमें,
करो उसे तब अकिंचन।'

कवि गुरुकी कई एक बात बार-बार स्मरण हो आता था।

भुवनेश्वरसे मैं अनेक अभिज्ञता लाभ कर आया। जो आठ-दश दिन वहाँ स्वस्थ था काम-काजके व्यवधानमें जंगल तथा मैदानमें बैठकर गुरुदत्त मंत्रका जप करता था। सत्यप्रतिष्ठा भी करता। निर्यातित कार्यके मध्य भी सत्यप्रतिष्ठाका भाव रखनेकी चेष्टा करता। दैहिक कष्टके कारण अनेक समय वह भाव रहता था नहीं। आह! कैसा कठोर निर्यातन, कैसी भीषण परीक्षा। निर्यातन पाकर भी साधुओंके प्रति हमें विरक्ति होती नहीं। यह समझता कि मेरे अपने पूर्वजन्मका परिणाम है। नवीन सेनके लिखे बुद्धचरित्र 'अमिताभ' कई बार ही पढ़ चुका था। शिशिर घोष लिखित 'अमिय निमाइ चरित' भी अनेक बार पढ़ा था। बुद्धदेव एवं श्रीगौरांगके कष्टकी बात स्मरण कर मनको शान्त करता। राज-सिंहासन त्यागकर बुद्धदेव बोधिवृक्षके नीचे बैठकर अधिकांश निराहार रहकर कैसी कठोर तपस्या की थी। उनके राज्य वा राज-धानीमें तो कोई भी अभाव था नहीं। हमें उनके ही जैसे अपने संकल्पमें दृढ़ रहना होगा। इस दुःखका अन्त कहाँ? इस जय-यात्राका ही वा अन्तिम परिणाम क्या उसे देखना पड़ेगा। जिस

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

आकांक्षाको लेकर भुवनेश्वर गया था वह पूर्ण हुआ नहीं। वेदना लेकर ही वहाँसे लौटा। किन्तु अपने संकल्पमें दृढ़ रहा।

मैं कलकत्तेमें किस ठिकाने आया था वह मेरे होस्टेलके दो-एक मित्र जानते। उनसे ठिकाना-पता संग्रहकर मेरे अभिभावकगण कलकत्तेमें उनके परिचित लोगोंको मेरी खोज लेनेके लिये पत्र लिखे। तब तक तो मैं भुवनेश्वर चला गया था। श्री श्रीठाकुरके पास देखकर दिये कि हमारे-घरमें अनेको ही मेरे लिये अधीर हो अनाहार अनिद्रासे विलाप कर दिन काट रहे थे। एक बहनकी भी इसी समयमें मृत्यु हो गई थी। उसके शोकसे भी वे अधिकाधिक अभिभूत थे। मेरा शरीर कुछ स्वस्थ हो जानेपर एक बार घर जानेके लिये श्री श्रीठाकुरने कहा। मुझे प्रथम तो प्रसाद हुआ किन्तु 'मंत्रमूलंगुरोर्वाक्यम्' यह बात स्मरण कर सम्मत हुआ।

रेल स्टेशनमें उतर घर जानेके रास्तेमें अनेकोंसे भेंट हुई। वे देखकर बहुत उल्लसित हुए। मेरे गृहत्यागके पीछे अनेक दूर पर्यन्त यह समाचार बिखर गया था। देशके लोगोंगी प्रीति एवं श्रद्धा मैं बाल्य अवस्थासे ही प्राप्त की थी। इसीसे हमें देख उनके हृदय तृप्त हुए। घर पहुँचनेके साथ ही मेरे चाचा कटुवाक्यसे तिरस्कार करने लगे—उनको बिना कहे-सुने इस प्रकार चले जानेके कारण। घरमें नजरबन्दकर रख छोड़े। पहरावालेको नियुक्त कर दिये जिससे मैं फिर भाग न सकूँ। कभी मीठी बोलीमें, कभी कड़ शब्दोंमें, कभी मेरे दायित्व कर्त्तव्य सम्बन्धमें, मेरे कर्त्तव्य बोधको चेतानेकी चेष्टा कर अनेक उपदेश देते रहे। कैसी कठोर

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

परीक्षा ! राजबन्दी वा हाजतमें खूनी असामी जैसे कड़े पहरेमें रहने-के कारण अपनी परिस्थिति जनाकर किसीको पत्र लिखनेका उपाय नहीं।

सभी बालूका बाँध। तृण समान उल्लंघनकर मैं चल दूँगा अपने मन्तव्य पथसे। अच्छे अच्छे खाद्य समाग्री देकर मेरी माता एवं फूफी मेरे मनको भुलाने-लुभानेकी चेष्टाकी। नेशनल मेडिकल कॉलेज दुर्गापूजाकी छुट्टीके बाद तब खुल चुका था। वे फिरसे पढ़नेके लिये हमें उत्पीड़न करने लगे। मैं गलत रास्तेसे चल रहा था इस बातको अनेकों व्यक्ति समझानेकी चेष्टा की किन्तु सब प्रयास व्यर्थ हुए। मैं विहारी पहरा वालेको अपने आचरणसे विश्वास करा दिया कि अब मेरी इच्छा भागनेकी नहीं। साधु लोग बहुत कष्ट देते इत्यादि बातें भी कुछ कुछ बोला था तब वह कुछ नरम हो गया। अवसर देख एक दिन गभीर रात्रिमें मैं निकल पड़ा। ट्रेनसे जानेपर धर-पकड़ हो जा सकता कारण ट्रेन तो भोरेमें छूटती थी। इसीसे गाढ़ी रातमें जो स्टीमर नारायण गंज पर्यन्त जाती उसीसे नारायणगंज पहुँच गया। एक घंटा बादही कलकत्ता जानेवाली डाकगाड़ी छूटती उसी गाड़ीपर चढ़के निश्चिन्त हो गया।

श्रीसरस्वती पूजाके कई एक दिन पहलेही कलकत्ता पहुँच गया था। पूजाके पश्चात् श्री श्रीठाकुरके साथ करमाटांड़ जाऊँगा यह निश्चय हुआ। साधु लोग भी भुवनेश्वरसे पूजाके पहलेही लौट आये थे। पर वे पूजाके बादही करमाटांड़ चले गये। उनके साथ राजेन्द्र

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

ज्योति दर्शनकर, नाद श्रवणकर सिहरनसे पुलकितकर तुम आओगे ऐसा भरोसा पाता किन्तु आते कहाँ ? प्रतीक्षा तो अब सही जाती नहीं नाथ !

तड़के ४ बजे हमलोग शय्या त्याग करते। शौच कर्मादिसे निपटकर जिस कमरेमें श्री श्रीठाकुर रहते उसी कमरेमें बैठकर हमलोग विविध स्तत्र पाठ करते। श्री श्रीठाकुर बैठते चौकीके ऊपर अपने बिस्तरेपर। हमलोगोंमें जो उसी कमरेमें जमीनपर रातमें सोते वे अपने-अपने बिस्तरेको छोटा कर बिछौनेके ही एक प्रान्तमें बैठते, श्री श्रीठाकुरकी ओर दृष्टि रखकर। जो दूसरे कमरेमें सोते थे वे भी इस कमरेमें आकर अपना आसन लेकर बैठ जाते। गीताके द्वादश अध्यायवाले भक्तके लक्षण प्रायः पाठ हुआ करता। 'अनिकेतः स्थिरमतिर्भक्तिमान् मे प्रियोनरः' इत्यादि श्लोक बार-बार पाठ किया जाता। सोचता कि मैं भी तो अनिकेत हो गया हूँ, क्योंकि अब मेरा भी कोई निर्दिष्ट स्थान है नहीं। मति (बुद्धि) भी स्थिर कर ली है कि केवल तुम्हींको मैं चाहता। जीवन धारणके लिये सामान्य जितना ही प्रयोजन उतनेसे ही सन्तुष्ट रहता हूँ। केवल एक ही सम्पद् नहीं है—भक्ति। तुम बोले हो कि भक्तियुक्त व्यक्ति तुम्हें प्रिय है। तुम मेरे हृदयमें स्पर्श नहीं देनेसे तुम मेरे हृदयमें और भी दृढ़ भावसे आसन नहीं जमानेसे भक्ति कैसे पाऊँगा प्रियतम ? इसीसे कहता तुम आओ, और भी समीप आओ, भक्तिरससे अभिषिञ्चित करो।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

किसी-किसी दिन गीताके द्वितीय अध्यायमें स्थितप्रज्ञका लक्षण पढ़ा जाता था। 'रसवर्जं रसोऽप्यस्य परं दृष्ट्वा निवर्त्तते'। परमको नहीं देखे पर्यन्त, चिन्मयको नहीं देखे पर्यन्त अन्तरमें वैराग्य आता नहीं। विषयको त्यागनेसे ही अन्तरसे विषय वासना चली जाती नहीं। विकलांग व्यक्ति तो अनेक विषय ही भोग कर सकता नहीं तथापि उसके अन्तरमें भोगकी लालसा रहती ही है। दरिद्र वा असमर्थ व्यक्ति भी अनेक विषयका भोग कर सकता नहीं, किन्तु उसके अन्तरमें प्रबल भोग तृष्णा रहती। एकमात्र रसमय—प्रेममयको देख लेनेपर ही अन्तरसे विषय तृष्णा दूर होती। जो इच्छा करनेसे ही प्रासाद (राजमहल) में रह सकता वह कभी कूड़ा घरमें रहने जाता नहीं। जो इच्छामात्रसे उत्तम पदार्थ खा सकता वह कथमपि कदन्नाहार ग्रहण करता नहीं। रसमयको, प्रेममयको पाकर जो आनन्द और तृप्ति अन्तरमें मिलती उसकी अपेक्षा विषयानन्द अति तुच्छ प्रतीत होता। विषयानन्द आपात रमणीय होनेपर भी परिणाममें दुःखप्रद होता। किन्तु ब्रह्मानन्द तो सब विषय सुखकी स्मृतिको विस्मृत कर अमृतरससे अभिषिंचित करता। उस अमृतधारामें एक बार स्नान करनेपर फिर विषयके पंकिल (गदले) जलमें अवगाहन करनेकी इच्छा रहती नहीं। ब्रह्मानन्दमें अवगाहन करना, स्थितप्रज्ञ होना एवं ब्राह्मी स्थिति लाभ करना मानव जीवनका चरम लक्ष्य है।

स्थितप्रज्ञ होनेके लिये ही भगवान श्रीकृष्ण कुरुक्षेत्रके समरांगणमें खड़े होकर भक्त अर्जुनको उपदेश दिये थे। भारतीय

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

दर्शनकी यही मूल बात है। ब्रह्मरसमें अवगाहन करो तो विषय रस संभोगकी स्पृहा स्वतः निवृत्त हो जायगी। जीवनयात्राके प्रत्येक कर्ममें योग युक्त होनेकी चेष्टा करो। अभ्यास वैराग्य तथा ज्ञानकी सहायतासे योग युक्त होनेकी चेष्टा करो। जो चिन्मय मैं (आत्मा) तुमको धारणकर रखा हूँ, जो चिन्मय मैं विश्वको धारणकर रखा हूँ। जो चिन्मय मैं तुम्हारे मनके भीतर-भीतर रह रहा हूँ। जो चिन्मय मैं तुम्हारी बुद्धिकी भी बुद्धि हूँ उस चिन्मय मैं (आत्मा) को देखनेका अभ्यास करो। बुद्धिको हमारे साथ युक्त करो। ऐसे युक्त होकर चलनेसे कर्म करते हुए भी कर्म बन्धन रहेगा नहीं।

मैं उनके साथ सब अवस्थाओंके बीच युक्त रहनेकी चेष्टा करता। हाथोंसे काम करनेपर भी मनमें सत्ताबोध, चिन्मयबोध जगा रखनेकी चेष्टा करता। हठयोग वा राजयोगके अभ्यास करने जानेपर उन्हींमें युक्त रहनेकी चेष्टा करता। भक्ति करने जानेपर भी उसी चिन्मय, आनन्दमयकी भक्ति करता। ज्ञानकी चर्चा करने जानेपर भी उसी प्रियतमकी चर्चा करता हूँ इस बोधको चेता रखनेकी चेष्टा करता। केवल साधनाके कालमें ही नहीं; व्यावहारिक जीवनमें भी उसी प्रियतम, उसी चिन्मय, उसी विराट्विभुको आँखमें, मनमें प्राणमें धर रखनेकी चेष्टा करता। विषय रूपमें जो हैं वे ही विषयके आनन्द रूपमें भी हैं।

चिन्मयको, रसमयको लक्ष्यकर बोलता—अजी प्रेममय! तुम मुझे कदर्य उच्छिष्ट विषय रससे मुग्ध न करो। तुम्हारा जो परम रूप, दिव्य रूप, जो रूप देखनेपर विषयतृषा समूल नष्ट हो जाती

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

वही रूप मैं देखने चाहता। तुम अपना कल्याणप्रद रससे, निर्मल रससे अभिषिक्त करो।

किसी-किसी दिन श्रीशंकराचार्य प्रणीत दक्षिणामूर्ति स्तोत्रका पाठ होता। कठिन संस्कृत होनेसे पहले पहल श्लोकोंके अर्थ समझनेमें कठिनाई होती थी। श्री श्री ठाकुर व्याख्या कर समझा देते। अनेक छिद्रविशिष्ट एक घटमें प्रदीप रख देनेपर जैसे उसका उजाला छेद होकर चारों ओर निकसता उसी प्रकार हमारे इन्द्रिय वर्गके रास्तेसे अन्तरस्थित विभु बाहर स्पन्दित होकर विषयोंके साथ सम्पर्क स्थापित करते। इन्द्रियां तो द्वार मात्र हैं, वे तो हैं भीतरमें, उन्हींको देखना होगा। विश्वरूप दर्पणमें दृश्यमान नगरके जैसे बाहरमें देखे जानेपर भी वास्तवमें वह बाहरमें है नहीं। स्वप्नावस्थामें स्वप्नरचित वस्तुएँ बाहर दिखाई देनेपर भी वे मनकी ही गढ़ी वस्तु हैं। ठीक उसी प्रकार हमलोग जिस वस्तु-जगतमें रहते हैं वह बाहर मालूम पड़नेपर भी वास्तवमें बाहरमें नहीं है; वह अन्तरजगत्का ही प्रतिविम्ब है। यह जगत् विम्ब नहीं प्रति विम्ब है। यथार्थ जगत् तो अपने ही अन्तरमें है। वासनासे उस जगत्की उत्पत्ति है, उसका निरोध करना होगा। ईश्वर प्राप्तिकी वासना जितनी प्रबल होगी विषयवासना उतनी ही क्षीण होगी। चित्त कभी भी शून्य (खाली) रहता नहीं। ईश्वरवासनाका वहाँ स्थान नहीं होनेपर बहुविध विषय वासनाकी उत्पत्ति वहाँ हो जाती है। आलसी मस्तिष्क शैतानका कारखाना है। प्रभु जगद्बन्धुकी एक बात याद आती—'गुरु गोविन्दको छोड़ अन्य

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

कुछ चिन्तन करना नहीं'। गुरुको स्मरण करनेपर, गोविन्दको स्मरण करनेपर विषयतृष्णा अन्तरमें प्रवेश करती नहीं। बीच-बीचमें कैवल्यउपनिषद् वा गुरु स्तोत्रादि भी पाठ होता। किसी-किसी दिन संध्याबेलामें भी विविध स्तव पाठ होता था।

प्रातः प्रभृति सायान्तं सायन्तात् प्रातरन्ततः।
यत्करोमिजगन्मातस्तदेव तव पूजनम् ॥

सवेरेसे संध्या पुनः संध्यासे सवेरे पर्यन्त तुम्हीको अन्तरमें रखकर सांसारिक सब काम करूँगा। प्रति कार्यमें उनको अन्तरसे स्मरणकर चलनेकी चेष्टा करता। जीवनके संगीको आखोंके सामने रखनेकी चेष्टा करता। सब स्तोत्रोंसे अधिक यह स्तोत्रपाठ होता—

"नमस्ते सते सर्वलोकाश्रयाय।
नमस्ते चिते विश्वरूपात्मकाय।
नमोऽद्वैत तत्त्वाय मुक्तिप्रदाय।
नमो ब्रह्मणे व्यापिने निर्गुणाय!"

उपर्युक्त इन चार मंत्रोंसे विशेष रूपसे प्रेरणा पाता। इसीसे मैं अतिरिक्त समयमें भी इन मंत्रोंको पढ़ता। सब लोकोंके आश्रयरूप से, समस्त नाम रूपके आश्रय रूपसे, समस्त नामरूपके उपादान रूपसे सत्स्वरूप विभुको देखता। प्रत्येक नाम रूपमें उनको देखते देखते, नाम रूपके अंगमें हाथ फेरते फेरते सत्स्वरूप विभुके अंगमें हाथ फेरता ऐसा अनुभव करता था। एक वैद्युतिक शक्ति प्रकटित होती, ज्योति उद्भासित होती, अनाहत नाद बज उठता। अश्रु

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

पुलक और कम्प होता। नेत्रके सामने प्रत्येक दृश्यमें उद्‌भासित हो उठता चिन्मय विभु। इसीसे नामरूपको छातीसे लगा आलिंगनकर भुजाजालसे आबद्धकर, चुम्बनकर बोलता—"नमस्ते विश्वरूपात्मकाय।" चिन्मय तुमने ही जमकर नामरूपके आकारको ग्रहण किया। रस जमकर दाना हुए। दानामें दाना मिलाकर रूपका संघटन किया है। जब तुम जम जाते तभी तुम्हें नामरूपमय देख पाता। जब तुम फिर अन्तरमें प्रेमकी बाढ़ लेकर आते तो तुम्हें रसमय, चिन्मय रूपसे देख पाता। रससे जब सब ओर परिपूर्णहो जाता, रस जब अन्तरमें बाढ़ रूपसे प्रवाहित होता। तब सब भेद अभेदमें डूब जाता। नाम और रूप धीरे धीरे गलकर मिल जाते तुम्हारे अखंड चित् रसमें। प्रथम तुम्हें पाता सत्तारूपसे प्रत्येक नाम और रूपके मध्य। सत्तामें अवस्थान करनेपर, तुम्हारे सत्स्वरूपकी गोदमें अवस्थानकर सकनेपर मलिनता दूर होती, अहंकार नमित हो जाता। देख पाता कि तुम मुझे आड़ देकर मेरे हृदय कमलमें एवं विश्वचराचरमें चिन्मय रूपसे लीलामें निरत होते। तुम्हारे चिन्मय रूपमें अवगाहन करते करते पाता हूँ एक अद्वैत तत्वको। नाम और रूपकी सत्ता विलुप्त हो जाती, दिव्य सत्तासे उद्‌भासित हो जाता तुम्हारा अखंड रस। इसीसे प्रणत होकर कहता—'नमोऽद्वैत तत्त्वाय मुक्तिप्रदाय, नमो ब्रह्मणे व्यापिने निर्गुणाय।" अपना निर्गुणत्व त्यागकर, किस प्रकार तुम नामरूप धारण करते, किस प्रकार तुम विश्वसाज से सजते वह तुम्हारे अंकमें आरोहणकर समझ सकता हूँ। किन्तु तुम्हारी यह बहु होनेकी अभिलाषा क्यों सो

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

सोच समझ पाता नहीं। सब अशाओंके परे तुम हो, सब आशाएँ जहाँ निःशेष रूपसे मिट जाती वही तुम्हारा अद्वैत रूप है।

मैं एक ही दिनमें वा एक ही वर्षमें इन चारों मंत्रोंका रहस्य समझ लिया था, अनुभवकर लिया था ऐसा नहीं। धीरे-धीरे पाया था, लाभ किया था अपने प्रियतमको। उसी क्रम विकाशकी बात अब कहूँगा।

रूप-रूपमें, नाम-नाम में सत् स्वरूप विभुको पहले देखने लगा, जो ज्योति पहले देखता था उसकी अपेक्षा व्यापक ज्योति उद्भासित होने लगा। ज्योति देखते-देखते फिर रूप दिखाई देता नहीं। ज्योति विविध वर्णकी—कभी-कुहेसा जैसी, कभी बर्फके पहाड़ जैसी कभी लाल, कभी हरा, कभी नील, कभी बैंगनी रंगकी ज्योति देख पाता था। राम धनुष जैसा वहुरंगी ज्योति भी किसी समय उद्भासित हो जाती वस्तुका रूप ढक जाता। ज्योतियाँ, तरंग (ढेऊ) की नाईं नाच-नाचकर आतीं। कभी जिस वस्तुके ऊपर सत्य प्रतिष्ठा करता था उसी के अंगको लेकर ज्योति खिल उठती। कभी आज्ञा चक्रसे ज्योति उद्भासित होती। कभी छोटा गेंदके आकारमें, कभी चौकोर वृहत् आकारसे, वा कभी दिगन्तप्रसारी विराट् ज्योति उद्भासित हो जाती। किसी-किसी दिन ज्योति इतनी गाढ़ी होती कि उससे अपना शरीर पर्यन्त ढक जाता था। अंधकार जैसे नेत्र दृष्टिको व्याहतकर अपने शरीरके अवयव तकको भी देखने देता नहीं उसी तरह यह ज्योति भी आवृत कर डारती हमारे अंग प्रत्यंग को।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

देवदेवियोंकी मूर्त्तिमें सत्य प्रतिष्ठा करनेपर उनकी वगलमें भी उन देवदेवियोंकी आकृति लेकर ज्योतिमय देवदेवी उद्भासित हो जाती। पेड़ व फूलमें सत्य प्रतिष्ठा करनेपर भी उसी प्रकार ज्योति दिखाई देती। किसी समय देवदेवियोंकी मूर्त्तियाँ जीवित और उज्जवल बोध होती थी, मानों वे हँस रही हैं। बोलने चाहती हों। किसी दिन स्वच्छ गाढ़ी ज्योतिसे देवदेवियोंकी मूर्त्तियाँ भी ढक जाती थीं। उजले मेघ जैसे वे ज्योतियाँ दहिनी वा बायीं ओरसे हवेमें भसकर आतीं। कभी-कभी ज्योतिमय देवदेवियाँ भी आकर सामने खड़ी हो जातीं। मन शान्त होनेपर अनेक समय इस प्रकार देव-देवियोंको देखने लगा। जगे हुए देखता हूँ वा स्वप्नमें देख रहा हूँ यह तन्मयताके कारण इस प्रकार भ्रम होता। मन शान्त होनेपर एक तंद्राविष्ट भाव कभी-कभी होता किन्तु वह वास्तवमें तंद्रा नहीं। वह एक शान्त समाहित भाव था और उसी अवस्थामें देवदेवियोंके दर्शन होते थे।

साथ ही साथ बजती रहती थी अमृतमय अनाहत ध्वनि। कभी मनमें आता कि यह ध्वनि हृदयसे सुन पाता। कभी मनमें होता कि दूरसे वायु वहनकर लाता यह अमृतमय कंठ निःसृत मधुर संगीत ध्वनि। कभी मनमें होता निकटमें अति निकटमें, दहिने वा बायें बैठकर चिन्मय विभु गाते यह सुमधुर संगीत। उनको देख नहीं पानेपर भी उनका कंठस्वर व्याकुल कर देता, मृग जैसे नाभिगंधसे इतस्ततः धावित होता उसी प्रकार हमारी दृष्टि भी इतस्ततः ढूँढती फिरती उस प्रेममय विभुको, जो बजाते ऐसी मधुर

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

बाँसुरी। कभी बाँसुरीकी नाईं, कभी वर्षाकालके भेक (मेढ़क) की नाईं, कभी मृदंगकी नाईं, कभी घण्टेकी नाईं, फिर कभी वीणा की झंकारकी नाईं वह अनाहत नाद ध्वनित होता। बाँसुरीका सुर अधिक मीठा मालूम होता। विविध ताल सुरसे बजती थी वह बाँसुरी। उस सुरमें बहुत आकर्षण था। वह प्रलुब्ध करता, आकर्षण कर लेता जिस ओरसे वह सुर आता उसी दिव्य राज्यकी ओर। जब हृदयसे सुनता तब अधिकाधिक तृप्ति पाता। और तब वह अति समीप मालूम होता था। बाँसुरीकी आवाज सुन पाता किन्तु उसको देख पाता नहीं। पूर्वमें जो नाद सुनता उसकी अपेक्षा यह नाद और भी स्पष्ट, और भी मधुर और भी प्रलुब्धकर। यही क्या मुरलीधर श्रीकृष्णकी वंशीध्वनि? क्या यही वीणापाणिकी वीणाकी झंकार? वा क्या यही शिवके हाथके डमरूकी भैरवी रागिनी? मधुर अति मधुर! किन्तु इससे भी पूरी तृप्ति कहाँ?

शक्ति प्रवाह मूलाधारसे मेरु दंड होते हूए ऊपर उठता जाता। अनाहतमें जाके वह शक्ति प्रवाह मानों दिगन्त तक बिखर जाता। सारे पीठ और शरीरमें सुखमय शक्ति तरंग प्रवाहित होती रहती। स्नायुमें, पेशीमें, हाड़में, मज्जामें इस शक्तिका स्पर्श होता रहता था। तब कविके सुरमें सुर मिलाकर गाता "भर ये देह मन प्रान, कौन अमिय तुम करन चाहते पान।" अपूर्व यह प्रेमालिंगन! पहले पहल इस आलिंगनको शरीर नहीं सह सकता था। अशुद्ध शरीर यह उस शुद्ध दिव्यभावके स्पर्शसे वातहत केला गाछकी नाईं हिला करता। कभी-कभी इतना जोर कम्पन होता कि अपने

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

आसनसे तीन चार हाथ दूर गेंदके जैसे फेंक दिया जाता था। बहुत सुखद यह वैद्युतिक शक्ति होती। कभी धोबीके कपड़े फींचने की नाईं यह शक्ति शरीरको पटकन (पछाड़) पर पटकन मारती, कभी तो धनुष टंकारके रोगीके जैसा सारे अंगोंको मचोड़ देती। इसके परिणामसे शरीरमें समय समय पर व्यथा भी होती। किन्तु यह ऐसा सुखद स्पर्श था कि व्यथित होनेपर भी उस दिव्य स्पर्श पानेका प्रलोभन होता। वह शक्ति प्रवाह शरीरको केन्द्र बना चारों ओर बिखर जाता। उस मधुर स्पर्शके प्रिय आस्वादनसे आँसू टपक पड़ता। भावाविष्ट करता वही उनका दिव्य-स्पर्श। क्षण ही क्षण मेरा शरीर एक शक्तिका बेलून-सा प्रतीत होता। क्रमशः वह भीषण कम्प रुक गया, शरीर भी उनके सुख स्पर्शसे सहनशील हो गया। जीवनमें कितने ही दुर्भाग्य रहते, कितनी ही मलिनता देह एवं मनमें रहती। जागतिक रसास्वादन करते-करते कितने कुत्सित रसमें लिप्त होते ये देह, मन, प्राण। इसीसे ये उनके दिव्य स्पर्शको सहनकर सकते नहीं। बहु युग युगान्तरमें जो जीव-चेतन अनेक जन्म धारणकर विषयानन्दका उपभोग करता आया इसी कारण उसे सह्य होता नहीं यह दिव्यानन्दका स्पर्श। स्पर्श जन्य भोगमें अभ्यस्त इन देह इन्द्रियोंको दिव्य पुरुषका स्पर्श सह्य होता नहीं।

विषयोंके उपभोगसे तृष्णा बढ़ती जाती किन्तु दिव्य शक्तिके उपभोगसे तृष्णा मिट जाती है। विषय तृष्णासे कंठ सूख जाता किन्तु अमृतकी तृष्णासे कंठ रसार्द्र हो जाता है। सर्प बिच्छूका

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

विष जैसे समस्त शरीरको विषाक्त करता, जहाँ दंशन करता वहीं सीमावद्ध रहता नहीं उसी तरह अमृतका स्पर्श देहके जिस स्थानको स्पर्श करता वहीं सीमावद्ध होकर रहता नहीं सभी अंगोंमें विखर जाता। अमृतकी झरना धारासे अभिषिक्त करता रहता। मूलाधार मणिपूर वा अनाहत केन्द्रसे शक्ति प्रवाह आरंभ होनेपर भी उसी केन्द्र तक सीमावद्ध रहता था नहीं। अथवा केवल इड़ा पिंगला एवं सषुम्नाके वीच होकर ही प्रवाहित नहीं होता था। सारे शरीरमें वह शक्ति प्रवाहित होती थी। वहुत ही सुखप्रद था वह मधुर स्पर्श। किसी-किसी समय समस्त शरीर ही शक्तिका जमावट जैसा अनुभव होता था।

उस प्रेममयका व्यापक स्पर्श जव अनुभव होता रहता था तव अपने अंग-अंगमें गुरुके अंगका आरोप आवश्यक नहीं होता था। सारे अंग ही शक्तिका जमावट जैसे अनुभव होता था। भागवती तनु, दिव्य शरीर जैसे मालूम होता। किन्तु सव समय पहले पहल यह भाव रहता नहीं, शक्तिका ज्वार भाटा (चढ़ाव-उतार) होता। जव भाटा होता तव फिर देहमें तामसिक भाव उतर आता, किन्तु वह तामसिक भाव अधिक दिन अधिक क्षण स्थायी हो सकता नहीं। इस विषय में पीछे लिखूँगा।

सवेरे स्तव पाठके पश्चात् एक अध्याय गीता पाठ होता। जिसके वाद ध्यान और जप करनेके लिये वैठना पड़ता था। इसी अवसरमें कई एक मिनटके अभ्यन्तर ओछौना-विछौना उठाकर घर में झाड़ू देके श्री श्रीठाकुरका आसन नीचे विछा दिया जाता

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

था। गौर-निवासके उत्तर भागके कमरेमें श्रीश्रीठाकुर रहते थे। उसी कमरेमें सब कोवैई ध्यान करने वैठते। हमलोग उत्तराभिमुख होकर ध्यानमें वैठते। श्रीश्रीठाकुरके कोई दहिने कोई वायें वैठते, बीचमें लाइन (पंक्ति) के कुछ आगे श्रीश्रीठाकुर वैठते। किसी-किसी दिन कोई-कोई दूसरे स्थानमें भी वैठ जाते। जप और ध्यान सवेरे ६।१० बजे तक चलता। हमलोगोंमें कोई तो इष्ट रूपका ध्यान करता, कोई सत्य प्रतिष्ठा करता, अथवा कोई चक्र-चक्रमें ध्यान करता, कोई केवल अनाहतमें ध्यान करता, कोई आज्ञा चक्रमें ध्यान करता। ध्यानके माने धारणा। ऋषि पतंजलिने ध्यानको और भी गंभीर अवस्था कहा है। सत्तावोधमें गंभीर भावसे अवस्थित न होनेपर ठीक-ठीक ध्यान होता नहीं। प्रचलित भाषामें हमलोग जिसको ध्यान कहते हैं वह वास्तव पक्षमें धारणा है। सो जो कुछ भी हो किन्तु इस धारणासे ही ध्यानकी अवस्था आती। सत्य प्रतिष्ठासे ही सत्ताकी अनुभूति जग उठती। किसी-किसी दिन ध्यानकी अवस्था इतनी गहरी होती कि दश वजेके वाद भी आसन-से उठनेकी इच्छा नहीं होती थी। ध्यानमें सत्तावोध जाग्रत होनेपर वह सत्ता चुम्बक जैसे आकर्षणकर रखता। जीववोध सत्तावोधमें लीन हो जाता। सत्ताके विराट् जालमें जीववोध फँस जाता। संसार जाल, मोहजाल दूर भाग जाता। यह सत्तावोध गाढ़ा होनेपर गुरुके स्थूल देहका अवलम्वनकर वा किसी देवदेवीकी मूर्त्ति लेकर साधना करनेका प्रयोजन होता नहीं। गुरुका स्वरूप वा देवदेवीकी मूर्त्ति सत्ताकी ही एक जमावट तरंग मात्र अनुभव होती। सत्तावोधसे

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

जगता सत्तामें चैतन्य बोध। क्रमशः यह अनुभूति गाढ़ी हो जाती। स्थूल जगत्‌में, विश्व चराचरकी जितनी वस्तु इस भौतिक दिगन्त प्रसारित आकाशमें हैं उस आकाशमें एवं वस्तुओंमें सत्ताबोध जागनेपर जीव चेतनाके नीचे जो चिदाकाश है वह उद्भासित हो उठता। इसी चिदाकाशमें हमलोग पाते चिन्मय सत्ताको। अनेक देवदेवियों तथा ऊपर लोकमें अवस्थित दिव्य पुरुषोंके साक्षात्कार होते इसी चिदाकाशमें।

अब कुछ व्यावहारिक जीवन यात्राकी लौकिक बात कहता हूँ। राँधने पकानेका काम हमलोग अपने ही करते। तब तक भी मैं राँधने जानता नहीं था। भुवनेश्वरके वे ही दो जन साधु जो कलकत्तेसे हमलोगोंके आनेके पहले ही करमाटाँड़ आये थे वे हीं अधिकतर राँधनेका कामकर लेते थे। फिर मैं भी थोड़े ही दिनमें राँधना सिख लिया। पीछे तो एक बेला प्राय मैं ही पाक करता, अन्य वेलामें साधु लोग करते। श्री श्रीठाकुरको भोग निवेदनकर जिससे हमलोग भी बारह बजेके भीतर ही प्रसाद पा सकें उसी प्रकारकी व्यवस्था थी। पाक करनेकी सामग्रीमें साधारणतया आतप चावलका भात, कच्ची मूंगकी दाल, आलू पपीतेकी डालना अथवा डुमरका झोल होता था। करमाटाँड़में सप्ताहमें एक दिन हाट लगती अतएवं वहाँ भाजी-तरकारी दुर्लभ थी। शीत कालमें बैगन, लौकी, पतकोबी, टोमाटर प्रभृति कुछ-कुछ मिलता था। वर्षा एवं ग्रीष्मकालमें आलूके अलावे पपीता और डुमर ही अधिकांश मिलता था। आलू तो बारहों महीनें पाया जाता था। हमलोग जब पहले

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

करमाटाँड़ पहुँचे थे तब जाड़ा प्राय शेष हो रहा था। उस समय तक भी बैगन मिलता था। पकी-पकी कड़ी पात कोबी भी मिलती थी। रातमें रोटी और एक तरकारी होती थी। आलू, वा आलू पपीता, वा आलूबैगन अथवा पातकोबी। दूध सामान्य प्राय आधा सेर रखा जाता था। ठाकुर (गुरुदेव) के भोजनोपरान्त जो कुछ प्रसादी बचता वह पारीक्रमसे हमलोग पाते। सवेरे वा पिछले पहर जलपानकी कुछ विशेष व्यवस्था नहीं थी। जिनके साथ मैं था श्रीठाकुर सहित उनको अधिकांश ही पेटकी बीमारी थी। वैसी हलकी कच्ची मूंगकी दाल एवं डुमर पपीतेका झोल खा कर भी उनमें किसी-किसीको पिछले पहरमें अजीर्ण होता था। सवेरमें कोई-कोई बोलते कि रातमें पेट गरम हो गया था इससे अच्छी निद्रा नहीं हुई। अतएव उनके जलपानका कोई प्रश्न ही नहीं उठता था। मेरा तो तब दृढ़ शरीर, उत्तम स्वास्थ्य, युवा शरीर था। दो पहरमें जो खाता था वह मालूम दो घंटेमें हजम हो जाता था। रातमें रोटी जो खाता सो भी हजम होते देर नहीं लगती थी, इसीसे सवेर तथा पिछले पहरमें भीषण क्षुधा लगती थी। क्षुधाकी ज्वालासे कभी-कभी खाली पानी ही पी लेता था जिससे क्षुधाकी उत्तेजना और भी अधिक हो जाती। सौंताल परगनेका जल हजमी होनेके कारण अनेक पेटकी बीमारीवाले उक्त परगनेके विभिन्न स्थानोंमें जलवायु परिवर्तन करने आते एवं वहाँके जलके प्रभावसे उनकी परिपाकशक्तिकी वृद्धि होती है। खानेका कष्ट होनेपर भी

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

मानसिक शान्ति मैं यथेष्ट पाता था, इसीसे मैं खाने पीनेकी ओर भ्रूक्षेप नहीं करता था।

भुवनेश्वरके दोनों साधु करसाटाँड़ आ चुके थे यह बात मैं पहले कह आया हूँ। इस बार वे हमारे प्रति सद्व्यवहार करने लग गये थे। साधुओंके आनेके समय उनके साथ राजेन नामका एक आदमी आया था, वही बाजारसे सामान-सामग्री लाने एवं झुलसे वर्तनोंको माँजनेका काम विशेष भाग करता था। प्रत्येक आदमीका जूठा वर्तन अपनेसे ही माँज लेनेका विधान था। श्री श्रीठाकुरका वर्तन मैं माँज लेता। मेरा अपना तो कोई वर्तन था ही नहीं, उन्हीं-की थालीमें प्रसाद पा लेता था। एक दाई भी कुछ दिनके बाद रख ली गई थी। उसे सप्ताहमें प्रायः छै वा आठ आने मजदूरी देनी पड़ती थी एवं सवेरे जलपानके लिये कुछ चीउड़ा दिया जाता था। मजूरनीका वेतन उस समयमें ऐसा ही था। वह बहुत काम कर देती। निकटमें ही उसका घर था। दोपहरमें अपने घरमें ही खाती-पीती थी। फिर तीसरे पहर आकार आवश्यकीय काम कर देती और संध्या समय चली जाती थी।

इसी बीच एक घटना ऐसी हुई। वे (प्रथम) साधु जी श्री शंकराचार्यकृत कोई विषय हम लोगोंको समझा देनेका व्रती हुए। वे अपनी ही इच्छासे व्रती हुए एवं हमलोगोंको श्रोता वा छात्र रूपसे संग्रह किये। मैं दो तीन दिन उनकी कक्षामें सम्मिलित होनेपर समझ पाया कि वे संस्कृतज्ञ नहीं थे अतएव वे विषयको ठीक तरहसे समझा नहीं सकते थे। विशेषतः श्री श्रीठाकुर तब तीसरे पहरमें

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

वेदान्त पढ़ाना आरंभकरकर दिये थे अतएव साधुजीकी कक्षामें योगदानकी कोई आवश्यकता नहीं समझा। उस समय हमारे अन्तर-में साधनाका इतना प्रवल संवेग था कि वाजे कामोंमें एक मुहूर्त्त भी नष्ट करनेकी इच्छा नहीं होती थी। ध्यानकी गभीरता होतेपर पाठ नहीं करनेसे भी चल जाता इस वातको श्री श्रीठाकुर सहर्ष समर्थन करते। वे कहते—"पात्र (पानेवाला) मिल जानेपर फिर पत्र (चिट्ठी) का क्या प्रयोजन? जिसकी प्राप्तिके लिये शास्त्रा-दिका अध्यन उसका प्रत्यत्त अनुभव हो जानेसे स्वाध्यायका कुछ भी प्रयोजन नहीं रहता। किन्तु प्रथम साधुजीकी कत्तामें नहीं उपस्थित होनेके कारण वे हमारे ऊपर रुष्ट हो गये। परिणामतः उनकी कत्तासे थोड़े ही दिनोंमें सव चल दिये।

अव पुनः साधनाकी वात कहता हूँ। दो पहरमें आहारादिके परे थोड़ा विश्राम कर लेनेपर किसी गाछके नीचे वा वारामदे वा कमरेके कोनेमें वैठकर सत्यप्रतिष्ठा करता था। कभी आकाश, कभी वायु, कभी वृत्त, लतापत्रादि में। वड़ा जलाशय वा नदी प्रभृति वहाँ नहीं रहनेके कारण जलमें सत्यप्रतिष्ठा करनेका अवसर कम ही होता था। स्नानके समय कभी-कभी जलमें सत्यप्रतिष्ठा कर लेता। कल-कत्ता वा दूसरे स्थानकी नदीके किनारे वैठकर जलमें सत्यप्रतिष्ठा की थी। राँधनेके समय वा होम करनेके समय अग्निमें सत्य-प्रतिष्ठा करता था।

स्मरण होता कि पिछले वेलामें वहुत दूर मैदानमें जाकर धरतीको छातीसे लगा वा धरतीपर लोट-पोटकर अनेक दिन सत्य-

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

प्रतिष्ठा की थी। यह माटी नहीं 'माँ'। माँकी छातीपर ही लोटता हूँ ऐसी भावनाके फलस्वरूप शरीर पुलकित हो उठता—

"आधारभूता जगतस्त्वमेका, महीस्वरूपेण यतः स्थितासि।
अपांस्वरूपस्थितया त्वयैतदाप्यायते कृतस्नमलंघ्यवीर्ये॥"

इस श्लोकको अनेक समयमें पढ़ा करता था। पृथिवी रूपसे, धरित्री रूपसे तुम अवस्थित होकर समस्त पदार्थोंको अपने अंगमें धारण कर रखी है। तुम वंगमाता, तुम भारतमाता, तुम पृथिवी। माटी माटी नहीं—माँ, जल जल नहीं—माँ। तुम जलरूपसे अवस्थित होकर प्राणियोंके प्राणकी रक्षा करती, जगत्को परिपुष्ट करती। तृषासे जब प्राण ओष्ठागत होता तब तुम्हीं प्राणियोंके पानीय रूपसे प्राणदान करती। तुम्हारी जलमूर्त्तिमें यदि प्राणका धर्म नहीं रहता तो जल पीनेसे प्राणियोंके प्राण नहीं बच सकते। इसीसे मैं जलको साधारण जलरूपसे नहीं देख माँ रूपसे, प्राण रूपसे देखता था। संध्योपासनाके अपामार्जन मंत्रोंको इस समय पाठ करनेपर तृप्ति प्राप्त करता था।

खानेके लिये बैठकर भातमें सत्यप्रतिष्ठा करते समय बहुत ही तृप्तिका अनुभव करता था। अन्न प्राणकी ही घनमूर्त्ति—साक्षात् अन्नपूर्णा है यह पुनः पुनः विचार करता था। आश्रममें तब ऐसा नियम था—

ब्रह्मार्पणं ब्रह्महविर्ब्रह्माग्नौ ब्रह्मणाहुतम्।
ब्रह्मैव तेन गन्तव्यं ब्रह्मकर्म समाधिना॥

इस मंत्रका पाठ कर श्री श्रीठाकुरको भोग देना होता एवं हम

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

लोगोंके भी आहारके समय उक्त मंत्रका पाठकर 'भोक्ता देवो गुरुस्त्वयम्' बोलते-बोलते आहार करनेका विधान था।

गुरुके मुखमें ही अन्नका ग्रास डाल देता, भोक्ता रूपसे गुरु ही अन्नको ग्रहण करते ऐसा भाव लेकर आहार करते थे। अन्न साक्षात् प्राणस्वरूप, क्षुधाकी ज्वालासे प्राण ओष्ठागत होनेपर यह अन्न ही प्राणको बचा रखता। यदि अन्नमें अर्थात् खाद्य-पदार्थमें प्राणका धर्म नहीं रहता तो खाद्य-वस्तु प्राणकी रक्षा कर नहीं सकती। परवर्त्ती कालमें करमाटाँडमें—

'अन्नाद्ध्येव खल्विमानि भूतानि जायन्ते, अन्नेन जातानि।
जीवन्ति अन्नं प्रयन्त्यभिसंविशन्तीति, तद्ब्रह्म॥'

इत्यादि मंत्रोंके पाठ होते थे। खाद्य-सामग्रीके ऊपर सत्यप्रतिष्ठा करते समय कभी-कभी ज्योतिके मध्य कुछ क्षणके लिये थाली ढक जाती थी। वा किसी समय थाली ही जैसे ज्योतिके साथ मिलकर कहीं लुप्त हो जाती। फिर ज्योतिके ही साथ भसकर यथास्थानमें आ जाती। वस्तुतः थाली वहाँ ही पड़ी रहती थी, ज्योतिकी तरंगके कारण थाली लुप्त हो गई ऐसा तात्कालिक बोध होता था। 'यदश्नासि तत् कुरुष्व मदर्पणम्' इस मंत्रका स्मरण कर ही गुरुको भोक्ता रूपसे अपनेमें प्रतिष्ठित कर भोजन करता था। इस प्रकार शुद्ध भावसे आहार करनेके कारण वह खाद्य वस्तु पवित्र रस तथा रक्तमें परिणत होकर देह एवं मनको सात्विक बना देती थी। देहके काम प्रभृति अपवित्र भाव दबे रहते थे।

इसी तरह कभी खाद्य पदार्थमें, कभी जलमें, कभी अग्निमें,

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

कभी वायुमें, कभी आकाशमें, कभी मनमें, कभी इन्द्रिय-वर्गको अलग-अलग करके उनमें सत्यप्रतिष्ठा करता।

अग्निमें सत्यप्रतिष्ठा करने जानेपर बोलता—'अयमेव सः योऽयमात्मा इदं ब्रह्म इदं अमृतं इदं सर्वं स्वाहा।' केवल बोलता ही न था, उनको ब्रह्मरूप—मातृरूपसे देखता था। मंत्रका गूढ़ तात्पर्य पहले उपलब्ध नहींकर सकनेपर भी भासितरूपसे जितना समझ पाता उससे अग्निको माँ बोलते, ब्रह्म बोलते, विभु बोलते कोई बाधा नहीं उत्पन्न होती थी। अग्निमें आहुति देते समय ब्रह्म ही ब्रह्मरूप अग्निमें ब्रह्मरूप घृतकी आहुति देते यह पहले गंभीर भावसे विचार नहीं कर सकनेपर भी सत्ताबोधके संग-संग सूक्ष्म रूपसे एक अखंडत्वका अनुभव करता था। यह अनुभव सुस्पष्ट नहीं होनेपर भी पूर्ण तृप्ति एवं आनन्द प्रदान करता था। क्रमशः अनुभव गंभीर होता गया। वायुके स्पर्शसे पुलकित हो बोलता—

'मधुवाता ऋतायते। परिस्पृशतु सततं त्वंनः सत्यं ब्रह्म मधुमयम्' आकाशके स्पर्शसे पुलकित होकर बोलता—

'आकर्णयतु श्रोत्रंनः सत्यं ब्रह्म मधुमयम्।'

हे विराट् आकाश! तुम अपने विशाल वक्षमें शब्दसे प्रारंभकर अग्नि, जल, वायु तथा विश्वकी अनन्त रूपराशिको धारणकर रखा है। तुम कितने विशाल, कितने निर्मल हो। नद नदी, पर्वत समुद्र तुम्हारे ही वक्षमें जकड़े हुए हैं। हमलोग यह स्थूल शरीर लेकर तुम्हारे ही वक्षपर विचरण करते हैं। तुम इस प्रकार अपने

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

हृदयको शून्य नहीं कर देनेपर इस विशाल विश्वकी उत्पत्ति कहाँ होती वा हमलोग ही कहाँ विचरण करते। शब्द सब आकाशको अवलंबनकर ही गतिशील होते। हमलोगोंके कान मीठे शब्दोंको सुनें। अतएव मीठे शब्दोंको वहनकर लाओ तुम हमारे कानोंके पास।

समय-समय मनके विक्षेपके ऊपर, मनकी सु, कु, प्रवृत्तिके ऊपर सत्यप्रतिष्ठा करता था। सत्ताबोध जाग उठनेपर मन शान्त हो जाता था। कभी स्वाध्याय, कभी ध्यान, कभी जप, कभी सत्य-प्रतिष्ठा, कभी खुले मैदानमें जाकर माँ-माँ बोल आर्तनादकर इस वैचित्र्यमय विश्वके भीतर जो सत्ता अवस्थित है उसे पकड़नेकी चेष्टा करने लगा। रूपके भीतर जो सत्ता, नामके भीतर जो सत्ता वा उस सत्तासे ही उद्भूत ये नामरूप सत्यप्रतिष्ठाके प्रभावसे उनकी असत्यता अन्तर्हित होकर सत्ता जाग उठने लगी।

एक दिन मैदानमें एक बड़ा आमगाछमें सत्यप्रतिष्ठा करते-करते अर्थात् उसे जकड़के पकड़ 'माँ-माँ बोल रोते-रोते अनुभव करने लगा मानो वह गाछ कितने कोमल अणु परमाणुओं द्वारा गठित है। अणु परमाणु तो शक्तिके ही स्फुलिंग मात्र हैं। क्षण ही में अनुभवकर पाया कि वह पेड़ ज्योतिकी समष्टि है। कितनी ज्योति राशि जमकर गाछका आकार धारणकर ली है। क्षण ही क्षण अनुभव करता कि ज्योति राशि भी परमाणुकी समष्टि मात्र है; पुनः परक्षणमें ही अनुभव किया कि परमाणु भी अब वहाँ नहीं रहा, एक शक्ति जमावट बाँधकर गाछका दिव्यरूप धारणकर ली

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

है। गाछ बोलकर स्थूल वस्तु कुछ भी नहीं। क्षण ही क्षण ज्योति-से जो कुछ सत्ता जाग्रत होती थी वह भी लुप्त होती जाती थी। क्षण ही क्षण मनमें आता कि कहीं कुछ भी नहीं एक शक्ति प्रवाह मात्र प्रवाहित होता। उस शक्तिके बीच मेरा भी देहबोध विगलित हो मिल जाता है। अपनी सत्ता खो बैठता था। इससे कुछ भयका संचार होने लगा। देखते-देखते वह शक्ति प्रवाह न जाने किधर खिसक गया। मैं पुनः वर्तमान जगत्में लौट आया। इस प्रकारकी अनुभूति और भी कितने ही बार हुई थी। किन्तु पीछे समझ पाया कि वह भी साधनाकी गभीर अवस्था नहीं थी।

माघ महीनेमें सरस्वती पूजाके कई एक दिन पीछे मैं करमाटांड-में पहुँचा था। फाल्गुन मासमें चतुर्दशी तिथिमें शिवरात्रिकी पूजा होती। जो शिव वे ही शिवानी वे ही ब्रह्मविद्या स्वरूपिणी। जो महाकाल वे ही काली, जो हर वे ही हरि। हरि तथा हर, शिव एवं शक्तिके बीच भौतिक जगत्में, व्यावहारिक जगत्में पार्थक्य रहनेपर भी सत्ता जगत्में एकता है। उपादान एक ही, केवल नाम रूप एवं व्यवहारमें पार्थक्य है। व्यावहारिक जगत्में जब मन और इन्द्रिय लेकर उतर पड़ते तभी विभिन्न नाम रूपके बीच सत्ताका अनुभवकर पाते। सत्यप्रतिष्ठाके प्रभावसे नाम रूपकी धांधली दूर हो जाती। शिवरात्रि पूजाके पश्चात् चित्तकी चंचलता और भी दूर हो गई। सत्ताबोध इतना गंभीर और जमावट होने लगा कि मन उस सत्ताके जमावट भावको भेदकर दौड़ धूप करनेमें समर्थ नहीं हो पाता था। 'आँख मूँदूँ वा खोल देखूँ अथवा जिस ओर घुमाऊँ आँख'—

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

उसी ओर देखता, अनुभव करता विराट् सत्ताका। सत्ता तो एक ही मात्र, अनेक नहीं। सत्ता अखंड, खंड-खंड नहीं!

आज वैशाख महीनेकी पूर्णिमा तिथि, सायंकाल गौर निवासकी उत्तर ओरके बरामदेपर अकेले बैठकर सामने आकाश और दिगन्तप्रसारी मैदानको लक्ष्यकर सत्यप्रतिष्ठा करता था। प्रथम बढ़िया सुगंधका अनुभव करने लगा--धूप, कस्तूरी वा अतरके गंध जैसा। इस प्रकारका गंध इन तीन चार महीनेके अन्दर और भी कई बार पा चुका था। आजके दिन जो गंध पाता वह खूब स्निग्ध और मधुर था। देखते-देखते अनाहत नाद भी बज उठा। बूझता मानो शिवके डमरू तथा सिंगा बजते। नहीं-नहीं, वह मानों वीणा पाणिकी वीणा की झंकार वा मुरलीधरकी वंशीका मधुर सुर था। आकर्षण की, व्याकुल की उस दिनकी वह अनाहत ध्वनि। देखते-देखते नाच-नाचकर चला आता था विविध वर्णोंका ज्योतिस्तर। शुभ्र ज्योतिसे छा गया वह दिगन्त प्रसारी मैदान। छा गया विराट आकाश। पुलकित होने लगे हमारे अंग सब। उल्लाससे झुला देता था हृदय झूलाको कौन अज्ञात पुरुष। डोल गया हृदय, पुलकित हो गये शरीर और मन। इन्द्रियवर्ग प्रशान्त, निथर निष्कम्प। डोला देता था वह सत्ताबोध, वह चिन्मय पुरुष। आज जड़ प्रकृतिको प्रेमालिंगनसे निःशेष रूपसे मिला लेगा चिन्मय विभु अपने विराट वक्षमें। चुपके-चुपके आता था धीरे पगसे मेरे दहर आकाशसे इस चित्ताकाशमें भूताकाशमें। चुप ही चुप पगनूपुर बजा चुप ही बाँसुरी बजी, चुप-चुप आँखोंसे इंगित-

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

कर चिन्मय विभु आ रहे थे हमारे चित्ताकाश, भूताकाशमें। हृदय सिंहासन पर जहाँ वे इतने दीर्घ युगयुगान्तर लुके छिपे थे, वहाँसे उतर आये इस विश्वचराचरमें, खुले मैदानमें, आकाशमें। सहसा देख पाया—इसी नेत्रसे ही देखा कि मेरे अनाहत केन्द्रसे सर्च-लाइटकी ज्योतिकी नाईं एक विशाल कोमल ज्योति विकीर्ण होकर विश्वकी ओर निकलता जा रहा है। ज्योतिके अन्तर्हित होनेपर भासित होने लगे वे प्रान्तर तथा प्रान्तर स्थित वृक्ष लता, मिट्टी, जल, वायु, आकाश। जहाँ तक दृष्टि पहुँचती थी वहीं प्रकाश। दिव्य प्रकाश अथ च कोमल और शान्त। अनुभव किया कि मेरे अनाहत चक्रसे जो प्रकाश निकला है वह मेरी ब्रह्म चेतनाका ही प्रकाश है।

ब्रह्मके प्रथम पादमें जगत, 'एकांशेन स्थिजो जगत', द्वितीय पादमें नामरूपके साथ मिला हुआ सत्ताबोध। तृतीय पादमें उपादान संघटित वैचित्र्यपूर्ण चिन्मयबोध। चतुर्थ पादमें वैचित्र्य-विवर्जित निर्गुण स्वरूप बोध। 'सा काष्ठा सा परागतिः'। यही ब्रह्म चेतनाका पूर्वाभास। जीवत्वकी बेड़ीसे ब्रह्म चेतनामें प्रवेश करनेका यही दिव्य सोपान, विराट्का प्रथम आस्वादन इस दिव्य ज्योतिके उद्भासित होनेपर होता है। जीव चेतना एवं जीव चेतनाके साथ संलग्न रहती जो विषयवासना वह छायाकी जैसी अवस्थान करती रहती इस दिव्य चेतनाके जग उठनेपर! अमृतरस का—परम रसका आस्वादन पहले पाता दिव्य पुरुषके इस दिव्य

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

पदक्षेपसे। अवयव रहित यह पुरुष अथ च उसमें विद्यमान रहते समस्त अवयवके धर्म। रहती उसमें दया, प्रेम और प्यार।

आज जो मैं अनुभूतिकी बात लिख रहा हूँ वह ब्रह्मके द्वितीय पादकी है। सत्ताबोधके साथ ही नाम रूप संयुक्त चिन्मयका बोध होता। सत्ता जड़ नहीं—चिन्मय। अथच इस सत्ताके कलेजेपर जड़ और चेतन सम्मिलित होकर नामरूपका प्रभेद प्रगट करता। जो प्रकाश अनाहतसे विकीर्ण हुआ था उसी प्रकाशमें अवस्थित रहता यह नामरूपमय जगत्, यह नामरूपमय मेरा देह। मैं तो देह नहीं, इन्द्रिय वा मन नहीं मैं तो चैतन्यमय सत्ता हूँ। मैं तो उसी विराट् विभुका अंश हूँ। सारे नामरूप, प्रान्तर, आकाश वायु हमारे ही अभ्यन्तर अवस्थित हैं। इन अन्यान्य वस्तुके सदृश ही मेरा देह भी चैतन्यमय सत्तामें बँधा है। एक गाँठ तो छिन्न हो गया—खुल गया। जड़त्व दृष्टिका बंधन, जीवत्व बोधका छोटा बंधन छिन्न हुआ। मैं मैदानमें बिखर गया, उसके साथ एक हो गया। केवल मैदानके ही साथ नहीं, आकाश, वायु एवं वृक्ष-लताके साथ भी एकता पा गया। 'मय्येव सकलं जातं, मयि सर्वं प्रतिष्ठितम्'। जितने नामरूप देखे जाते सब हमारेमें ही उत्पन्न होते, हमारेमें ही अवस्थित हैं। कैसा महान् मैं, कैसा उज्ज्वल मैं, कैसा सरस मैं। मेरे अन्तरस्थित माधुर्यसे ही मानों सब सिंचित होते रहते। चाँदनी रातमें जैसे वृक्ष लता प्रभृति उस चाँदनी छटासे सराबोर हो जाते उसी प्रकार मेरी अन्तरस्थित कमनीय छटासे सभी सींचे जाते। वे कुल मेरे समीपस्थ हैं—समीपस्थ ही क्यों मेरे अन्तर ही हैं।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

पवित्र उजालेसे परिष्कृत होकर अवस्थित हैं। विजातीय भेदबुद्धि अब नहीं, वे सभी मेरे स्वजातीय हैं। मेरा मैं जिस उपादानसे निर्मित है वे भी उसी उपादानसे निर्मित हैं। नाम रूपका भेद रहनेपर भी उपादानमें कोई प्रभेद नहीं। यथार्थमें अनेक जन्मका एक कठिन गाँठ छिन्न हो गया। मालूम नहीं कितनी देर इस गंभीर अनुभूतिमें मग्न रहा। बरामदेपर आकर और दिनोंके जैसे अन्यान्य कौन कहाँ बैठा सो भी मालूम नहीं। भावकी गंभीरता जब निकल गई तब जान पाया कि रात दश बजेसे ऊपर हो गई थी। भोजन का समय व्यतीत हो चुका था। उठनेकी इच्छा नहीं होती थी। समस्त शरीर अवश जैसा हो गया, दुर्बलताके कारण नहीं, देहात्मबुद्धि शिथिलताके कारण अवश बोध हो रहा था। प्रेममयके स्पर्श पुलकसे विवश हो गये थे मेरे तन, मन और प्राण।

आज जीव चेतनासे विश्व चेतनामें नया जन्म लाभ किया। पक्षी शावक जैसे पहले अंडे की त्वचाके भीतर जन्म ग्रहण करता है, पीछे अंडेके भग्न होनेपर जन्म लेता इस संसारमें। अंडेके भीतर पक्षीका बच्चा संसारसे अलग रहता है। त्वचाके भंग होनेपर जिस दिन वह मुक्त आकाशमें आकर जन्म लेता उसी दिन वह विश्वको पूर्ण रूपसे प्राप्त करता। हमलोग मनुष्य उसी तरह पहले जन्म ग्रहण करते जीव चेतनाकी छोटी सीमामें। द्वितीय जन्म होता विश्व चेतना-ब्रह्म चेतनामें। हमलोग तभी द्विजत्वको प्राप्त करते। छोटी सीमा उत्क्रमण होनेपर विश्वमें तब विश्वेश्वरी चिन्मयीको देख पाता। अनन्तरूप धारणकर जो विश्वेश्वरी असंख्य जीव-चेतनाके साथ अनन्त रूपको अपनी गोदमें धारणकर रखी हैं उनको देख

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

पाता उस जीव चेतनाकी सीमा भंग हो जानेपर। सुखकी लालसासे जन्म जन्मान्तर जो जीव अनन्त नाम रूपके पीछे दौड़ रहा था वह जीवत्वकी सीमा भंग होनेपर देख पाता कि नाम रूप एकही शक्तिका लीला विलास है। पक्षीका बच्चा अंडेसे निकलकर ही आकाशमें उड़कर घूम सकता नहीं। उसकी चारों ओर आकाशके होनेपर भी वह आकाश उसका अपना होता नहीं। घोंसलेमें बैठकर अपनी माताके पंखपुटमें रहकर उसे आकाशमें विचरण करनेकी शक्ति संचय करना होता। जिस दिन वह आकाशमें विचरण कर पाता उस दिन उसे कितना आनन्द होता है। जीवचेतना भी जीवत्वकी सीमा अतिक्रमण कर ब्रह्म चेतनामें पहले प्रवेश करनेपर भी ब्रह्ममें उसकी स्थिति एवं गति प्रचुर होती नहीं। उसके लिये तपस्या द्वारा और भी शक्तिका संचय करना पड़ता है। सर्वत्र सब वस्तुमें ब्रह्म चेतनाका अनुभव करनेपर भी ब्रह्मप्रवेशद्वार एक दम खुल जाता नहीं। उसकी तृष्णा बढ़ जाती। जो एक बार ब्रह्म चेतनाका स्पर्श अपने जीवनमें पा जाता उसकी तृष्णा बढ़ जाती। उसे तब पार्थिव भोग तृष्णा वस्तुतः तुच्छ बोध होने लगता है। इतना सुन्दर, इतना रमणीय, इतना प्रिय वह ब्रह्म चेतना है।

'यो मां पश्यति सर्वत्र सर्वं च मयि पश्यति।
तस्याहं न प्रणश्यामि सच मे न प्रणश्यति॥

जो ब्रह्मको सर्वत्र देखता और सबको ब्रह्ममें ही देखता उसकी ओझल मैं नहीं होता और न वह मुझसे ओझल होता। ब्रह्ममें

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

विचरण करनेका पूर्ण सामर्थ्य प्राप्त नहीं करनेपर भी ब्रह्मको खोनेका भय दूर हो जाता है।

ब्रह्म ग्रन्थि भेदकी सूचना मिलती ज्योति दर्शन तथा नादश्रवण-की अनुभूति हो जानेपर। और यह ग्रन्थि सम्पूर्णरूपसे छिन्न होती चिन्मय सत्ताबोध होनेपर। नामरूप विशिष्ट चिन्मय सत्ताबोधके साथ होती रहती स्वजातीय बोधकी अनुभूति। भाव और भी गाढ़ होनेपर स्वगत बोधकी अनुभूति होती। नामरूपकी अवस्थिति रहनेपर भी जड़त्व बोध बिलकुल दूर हो जाता। वैचित्र्यके साथ होती अंगांगिबोधकी अनुभूति। इसी अंगांगिबोधकी दिव्य अनुभूति होनेपर विष्णुग्रन्थिका भेद होता। विष्णुग्रन्थिके भेद हो जानेपर वितर्क तथा विचारानुगत सम्प्रज्ञात योगकी समाप्ति होती। आनन्दा-नुगत एवं अस्मितानुगत सम्प्रज्ञात योगकी साधनाको रुद्रग्रन्थिकी साधना कही जाती। रुद्रग्रन्थिके भेद होनेपर असम्प्रज्ञात योग सम्पादित होता और वही निर्विकल्प समाधि है। पश्चात् काल 'साधन-समर' ग्रन्थ 'पातंजल दर्शन' प्रभृति पढ़कर ग्रन्थिका इस प्रकार विभाग समझ लिया। इस सम्बन्धमें यथा स्थानमें पीछे फिर कहूँगा।

सहसा याद आई कि जिसकी कृपा और आशीर्वादसे मेरी यह ग्रन्थि खुली उस पथ प्रदर्शकको अभी तक भी प्रणाम किया नहीं। उठा, पाँव अभी भी शिथिल, चलनेसे शरीर काँपने लगता था इसीसे धीरे-धीरे चला। वे तब भोजनकर अपने सोनेके कमरेमें चले गये थे। उनके चरण पकड़ साष्टांग प्रणाम किया। वे मेरे

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

शिरपर हाथ रखकर करुणार्द्र दृष्टिसे आशीर्वाद किये। यह आशीर्वाद किये—'इसी प्रकार दिनानुदिन छिन्न होगी तुम्हारी सारी ग्रन्थि'। देखा-सौम्य मूर्त्ति, करुणा एवं स्नेहाश्रु भरे नेत्रको। पुनः प्रणाम किया।

भोजन करनेकी स्पृहा आज नहीं। भूख भी नहीं लगी। जिस क्षुधाके उत्पीड़नसे नाम रूपके पीछे इस वहिंजगत्में दौड़ता था वह क्षुधा आज निवृत्त हो गई। आश्रमी लोग मेरी अवस्था देख प्राय कुछ समझ पाये इसीसे वे भी खानेका विशेष आग्रह नहीं किये, वरं एक आदमीने मेरा बिछौना बिछा दिया। मैं शय्याको चिन्मयीका वक्ष समझकर उसपर लेट गया। निद्रा भी चली गई। भवसागरमें सुखसे अवगाहन करते-करते रात्रिका अवसान हो गया। प्रभातमें शरीर कोमल और हलका बोध होता था।

'परससे तुम्हारे दूर होती ज्वाला,
शान्ति प्राणमें पाता जी।'

एक चिर नवीन दिव्य पुरुषके स्पर्शका अनुभव किया। केवल स्पर्श ही नहीं, प्रेमालिंगनका भी अनुभव किया।

'निविड़ परससे भरा भुवन,
अपूर्व यह तेरा प्रेम-आलिंगन।'

उनके निविड़ आलिंगनसे जहाँ तक दृष्टि जाती, जहाँ तक कल्पना पहुँचती तहाँ पर्यन्त प्रत्येक धूलिकणाका भी मेरे साथ सम्बन्ध है। वे ही आधार फिर वेही आधेय। वे अपने विशाल

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

प्रेममय उरको पसार मेरे जैसे प्रत्येक धूलिकणा पर्यन्त उसी वक्षपर धारणकर रखे हैं। वे ही हैं प्रत्येक रूप, प्रत्येक धूलिकणा। मेरा 'मैं', मेरा देह, मन इन्द्रिय उन्हींके विराट् वक्षपर अवस्थान करते हैं। अपूर्व यह प्रेमकी लीला, अपूर्व यह प्रेमालिंगन !

इस अमृतमय स्पर्शकी स्मृति भूल सकता नहीं। भावकी गभीरता क्रमशः क्षीण होती जाती थी किन्तु सुखस्मृति भूलता नहीं था। दो तीन दिन तक इस भावका नशा था। प्रत्येक दिन ह संध्या समय बरामदेके उसी स्थानपर जा बैठता था। फिर वैसे ही उनको पाऊँगा, फिर उसी तरह उनके चिर सुन्दर नवीन वक्षसे अभिस्नात होऊँगा उसीकी प्रतीक्षा करता रहता था। किन्तु उस प्रकार वे चिर नवीन फिर आये नहीं। शुभ्र ज्योति बार-बार नाच-नाच कर आती। अनाहत नाद-ध्वनि नाना ताल सुरसे बजती। स्मरण मननसे सिहरन होती। आँसू प्रवाहित होता था। किन्तु वह निविड़ स्पर्श फिर पाया नहीं।

समीपस्थ जिन मकानोंमें लोक जन नहीं थे उनके बरामदे पर बैठ वा कभी निर्जन मैदानमें बैठ ध्यान करने लगा। सत्ताबोध तव सहज ही में जाग्रत हो जाता किन्तु प्रत्येक दिन वह उज्वल एवं स्वच्छ नहीं होता था। वे ही चिर नवीन अपनी प्रेमघन विराट् मूर्त्तिसे क्षण ही क्षण आते। हृदयमें उनका स्पर्श पाता था। दिगन्त प्रसारित उनके दिव्य वपुका क्षण ही क्षण अनुभव करता था। खूब गभीर नहीं; खूब स्थायी भी नहीं। समझ पाया कि इसी

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

प्रकार धीरे-धीरे वे चिर सुन्दर आया करते। एक बार दिखाई देकर पीछे लुक जाते और तब धीरेसे अंगमें अंग मिला लेते थे।

अब गाछ लता मिट्टी पाथर प्रभृतिको अलग-अलग अवलम्बनकर सत्यप्रतिष्ठा करने नहीं पड़ता। साधनामें बैठते ही जिसमें ये नाम रूप अवस्थित हो रहा है उसमें वे ही चिर नवीन आकर हृदयको जकड़ बैठ जाते, 'व्याप्त येन चराचरम्'। उन्होंने अपनेमें ही इस विश्वचराचरको धारणकर रखा है। 'बोधः सर्व परिव्यापी'। हृदय (अनाहत) को केन्द्र बना जहाँ तक दृष्टि जाती वे चिन्मय विभु परिव्याप्त होकर रहते यह हृदयसे अनुभवकर पाता था। देख पाता था कि गाछ, पत्ता, प्रान्तर उसी चिर नवीनका स्पर्श पाकर आर्द्र हो गये हैं। उनके गात्रोंमें रस लगकर झरते जा रहा है। प्रत्येक धूलिकणासे प्रारंभकर वृक्ष लतायें खिल-खिलाकर हँस रही हैं। ऐसा सुन्दर विश्वतो पहले कभी देखा नहीं। नामरूप, चर अचर सब कुछ है, नहीं है उनकी कठोरता-उनकी जड़ता। जड़ कहाँ ? दिव्यरससे अभिस्नात हो सभी दिव्य स्वरूप धारणकर लिये हैं। सभी मुझसे बातचीत करने चाहते। सभी मुझे घेरकर नाचने चाहते। वायुकी सन् सन् ध्वनि मेरे अभ्यन्तर एक नवीन उन्माद ला देती थी। आकाशके सर्वांगमें जैसे अपूर्व आर्द्र-सुधा उनके कोमल निपुण हाथोंसे प्रलेपित किया हो। आकाश, वायु, तृण, लता, गुल्म प्रभृतिके अंगोंसे जड़त्व दूर हो गया। प्राणको मताने वाला है यह नवीन दृश्य। इसको देख नयन जुड़ाता। इस सुन्दर मधुमयको देख मन प्रशान्त हो जाता।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

'मधुवाता ऋतायते, मधुमत् पार्थिवं रजः मधुमां अस्तु सूर्यः'। पाता उस मधुमयको पाता। गँवाता उस मधुमयको पुनः पुनः गंवाता। किन्तु सुखस्मृतिकी कणाको गँवाता नहीं। फिर आयगा, फिर पाऊँगा, फिर जुड़ाऊँगा इसी प्रतीक्षासे मुहूर्त्तको गिना करता था। प्रलुब्ध किया मुझे वह चिर नवीन सुन्दर दिव्य पुरुष।

तब विशेष स्तवपाठ करना अच्छा नहीं लगता था। किसीसे बातचीत करना भी उतना अच्छा नहीं लगता था। सारे दिनमें प्रयोजनीय २५।३० से अधिक बातें नहीं बोलता था। रूटीन बँधा (नियमित) कर्त्तव्य कर्म कुछ-कुछ कर लेता था, जो नहीं कर सकता था वह राजेन करता था। राजेनने एक दिन मुझे कहा— भैया, मेरी तो साधनामें अग्रगति होती नहीं इसलिये तुम अपनी साधनाका कुछ भाग हमें देना, मैं तुम्हारे अतिरिक्त कामोंको कर दूँगा। चलते-फिरते उसी चिरसुन्दरको देख पाता था। स्मरण होता कि एक दिन नीमकी दतवन लाने जानेपर गाछ की डाल तोड़ते बहुत ही कष्टका अनुभव किया था, जैसे अपने ही अंगमें आघात लगता था। स्मरण होता कि एक दिन कागज फाड़ते जानेपर बहुत क्लेशका अनुभव हुआ था। राँधनेके लिये आलूका छिलका छिलते समय बहुत पीड़ाका अनुभव किया था। सब ही कोमल, सब ही प्राणवन्त जैसे। कठोरता वा जड़त्व कहीं कुछ नहीं। ग्रीष्मके पश्चात् समस्त वर्षाकाल भी उसी चिरसुन्दरके मध्य अवगाहन कर अतिवाहित होता गया।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

आश्रयतरुके नीचे आश्रय लाभकर आवेगमय चित्त बहुत कुछ शान्त हो गया। चातक सरीखे तब आकाश की ओर ताकते हुए वर्षाकी प्रतीक्षा करनी पड़ती नहीं। अब हंस जैसे विशाल मान-सरोवरमें विचरण करूँगा। शतदल (सौ पंखड़ी) से खिल उठेगा उस मानस सरोवरमें शुद्ध चित्तका शतदल (कमल)। जिस दिव्यसत्ताका अनुसंधान पा चुका हूँ उसमें अब विहार, विचरण, अवगाहन करना पड़ेगा। उनके साथ युक्त होना होगा। चराचर परिव्याप्त वह चिन्मय गुरु ही स्थूल गुरु रूपसे एवं गुरुके देहमें स्थित होकर पहले पहल कृपा करते। यह सत्ता तथा चिन्मयबोधकी अनुभूति होनेपर गुरुको पाता दिव्यचेतनाके बीच एक दिव्यलोक में। गुरु ब्रह्मा, गुरु विष्णु एवं गुरु ही परब्रह्म हैं यह उसी दिव्य-चेतनाके मध्य अनुभव होता रहता है।

ज्येष्ठ मासमें करमाटाँड़में भीषण गरम होता। पूर्वाह्न दश बजेके बाद घरसे निकसा जाता नहीं। इसीसे हमलोग दोपहरमें घरमें बैठकर ही तपस्या किया करते थे। कमरेके विभिन्न कोनेमें बैठकर प्रत्येक व्यक्ति अपने-अपने भावसे तपस्याकर समय बिताता था। गरमीकी तीव्रता तपस्याके समय अनुभव नहीं होती थी। उसी समय वे दो व्यक्ति साधु मौन रहकर गौर निवासके ही निकटवर्ती एक मकान (योगेन बाबूके मकान) में एक मासके लिये तपस्या-का व्रती हुए। ग्रीष्म एवं वर्षाकालमें करमाटाँड़में अधिकांश ही मकान खाली रहते। साधु दोनों श्री श्रीठाकुरको प्रणाम करने सबेरे और संध्याकाल आते थे। रातका भोजन उन लोगोंके पास ही

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

भेज दिया जाता था। उनकी सेवाका भार राजेनने ग्रहण किया। मैं दोनों बेला राँधने पकानेका भार ग्रहण किया। बीच-बीचमें ज्ञान बाबूके घरसे उषा माँ आकर मेरी सहायता करती थीं। साधु लोग ध्यान जप होमादि करते थे। किसी-किसी दिन उनका ध्यान विशेष गंभीर हो जाता था। आहारका समय अतिक्रमण होनेपर भी वे आहार करने आते नहीं थे। प्रायः एक डेढ़ बजे आकर भोजन करते। उस दारुण ग्रीष्ममें दोनों बेला रसोईकर भी कष्टका अनुभव किया नहीं। 'यत् करोमि जगन्मातरतदेव तव पूजनम्'। रसोई बनानेके कामको तपस्याका ही अंगरूपसे ग्रहण कर लिया था। देहधारी गुरु-नरनारायण गुरुकी सेवा करनेका सौभाग्य लाभ-कर अन्तरमें तृप्ति ही बोध करता था। तब प्रायः कॉलेज बन्द हो जानेपर अमर नामका एक युवक भी आ गया था। ब्राह्मण शरीर नहीं होनेके कारण अमर और राजेन किन्हींको रसोई करनेकी अनुमति नहीं मिलती। परन्तु वे अनेक कामोंमें मुझे सहायता करते थे। सवेरे ६।।, १० बजेसे लेकर १२ बजेके भीतर ही हम-लोगोंकी रसोई एवं श्री श्रीठाकुरको भोग देना इत्यादि सब समाप्त हो जाता था। साधु लोग जिस दिन ठीक समयमें आते थे उस दिन हमलोग एक साथ बैठकर भोजन करते थे। देरसे आनेपर उनके भोजनीय परोसकर नियत स्थानमें रख दिया जाता था। ठीक यंत्र (कल) के जैसे हमलोग सभी काम करते थे। इतने कामोंमें लगे रहनेपर भी चित्तकी चंचलता कम ही रहती थी। हमलोग भी प्रकारान्तरसे मौन ही रहते थे। कारण यह कि

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

सबसे अधिक बात जिस दिन बोलता उस दिन भी २५।३० बातोंसे अधिक नहीं बोली जाती थी। एक दिव्य चेतनाके बीचमें वास करता था। सत्ताका बोध कामोंमें लगे रहनेपर भी हलके भावसे अनुभव होता था। जैसे सत्ता-सागरमें भसता फिरता वैसा ही अनुभव होता था। संध्या होनेके पहले कुछ देरके लिये किसी दिन श्री श्रीठाकुरके साथ किसी दिन अकेले ही मैदानमें टहलने निकलता था। केवल टहलने-घूमनेके लिये ही नहीं, सारे पाँतर छाय कर, सारे आकाशको व्याप्तकर जो दिव्य चेतना परिव्याप्त हो रही थी उसमें अवगाहन करने बाहर निकलता था।

ज्येष्ठमास कट गया, साधुओंके मौनव्रतका समय भी अतीत हो गया। फिर यथा नियम प्रत्येक साधना और करने लगा। वर्षा आरंभ होनेसे श्रीश्रीठाकुरके परिवारके अनेक लोग वहाँ रहनेके लिये आये। कई एक बालक बालिका भी थी। छोटे बच्चे भी थे। बालक बालिकाओंके कोलाहल वा दौड़ धूपसे कितने दिनोंकी नीरवता भंग हो गई। समय असमयमें बच्चोंके चीत्कारसे वातावरण अशान्त हो उठा। विशेष आवश्यकता हो जानेके कारण काम काजका भी ताकीद बढ़ गया। रसोईका आडम्बर कुछ बढ़ जानेसे अनेक उपकरणकी भी आवश्यकता हुई। उपकरण संग्रह कर देते राजने तथा अमर। आवश्यकीय वस्तुओंके लिये समय-समयमें मैं भी बाजार जानेके लिये वाध्य होता था। खानेका सुख कुछ बढ़ा सही किन्तु मानसिक सुख बहुत घट गया। हम लोगोंकी अवस्था श्रीश्रीठाकुर समझ पाये। वे साधुओंके एक व्यक्ति एवं अमरको

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

शिव बाबूके मकानमें रहकर साधन भजन करनेकी व्यवस्थाकर दिये। ऊपर एक व्यक्ति साधु और मैं हृदय बाबूके मकानमें रहनेकी अनुमति प्राप्तकी। यह भी विचार हो गया कि यथा समय आवश्यक काम तथा आहारादि भी आकर कर लूँगा। अलग मकानमें व्यवस्था होनेसे हम लोग बहुत कुछ शान्ति प्राप्तकी। लौकिक कामके लिये एक दाई-मजूरनी रख ली गई।

हृदय बाबूके मकानके सामने बरामदेपर बैठ 'व्याप्तं येन चराचरम्' उसी चिन्मय विभुका ध्यान करता था। वर्षाके पानीसे सद्यस्नात शालवृक्ष सब अभिषिक्त तपस्वी जैसे उस चित् समुद्रके बीच अति सुन्दर एवं जीवन्त बोध होते थे। गाछ सब मानों चिदम्बर पहनकर उसी चिन्मयका ध्यान करते हों ऐसा अनुभव करता। क्षण ही क्षण अनुभव होता था जैसे गाछोंसे स्तर-स्तरपर ज्योति निकल रही थी। उनके अवयव निर्मल ज्योति द्वारा गठित थे। विराट् चिन्मय स्वरूपसे वे मालाके जैसे एक सूत्रमें गूँथे हों ऐसा भी अनुभवमें आता था। 'सूत्रे मणिगणा इव'। सूतमें जैसे माला गूँथी रहती उसी प्रकार एक चिन्मय सूत्रमें जितने नामरूप देखनेमें आते वे सभी गूँथे पड़े हों। एक ही दिव्य चेतना आकाशमें; पाँतरमें बिखरी पड़ी हो, पुनः सूतके आकारमें विचित्रताकी माला गूँथकर गलेमें धारण कर ली हो। जीवचेतना अर्थात् अहं बोध उस दिव्यचेतनाके साथ अच्छे प्रकारसे मिल सकती नहीं। जीवचेतना क्षीण होनेपर भी एकदम लुप्त होती नहीं थी। चिन्मय बोधके साथ नहीं मिल जानेसे अपने अन्तरमें तीव्र वेदना मालूम करने लगा।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

वह चिन्मय और मैं अभिन्न होऊँगा। उस चिन्मय सूत्रके आकारमें चिन्मय मैं चिन्मय नामरूपकी माला गूँथूँगा। दूसरा कोई अब रह पायगा नहीं यह अनुभूति पूरा उज्ज्वल नहीं होती थी।

'मत्तः पर तरंनान्यत् किंचिदस्ति धनंजय।
मयिसर्वमिदम्प्रोतं सूत्रे मणिगणा इव॥'

इस मंत्रका तात्पर्य समझने पर भी अनुभूतिमें जितनी उज्ज्वलता (परिष्कृति) होनी आवश्यक उतनी होती नहीं थी। और भी तीव्र संवेगसे तपस्या करने लगा। तब निद्रा भी बहुत कम ही होती थी क्षुधा तृषाकी ओर भी दृष्टि नहीं थी। शरीरके प्रति उपेक्षा भाव आया। मनमें होता था कि यह शरीर ही जंजाल है। इसको निर्यातित कर सकनेपर ही दिव्यचेतनामें और भी सावलील भावसे अवगाहन कर सकूँगा। वर्षाका ऋतु होनेसे मच्छर बहुत हो गये थे। साथकी मच्छरदानी न जाने कहाँ गँवा दी थी। इसीसे मच्छरके अत्याचारसे रातमें नींद नहीं होती थी। खद्दरका कपड़ा जोड़-जाड़कर मच्छरदानी जैसी बनाकर व्यवहार करता था। दिनमें उस कपड़ेको पहनता, रातमें डोरी बाँधकर मच्छरदानी बना लेता। वर्षाकालके गुमड़े गरममें इस खद्दरकी मच्छरदानीके भीतर रहनेसे कष्ट होता था। कपड़ा जो साथमें लाया था वह प्रायः फट चुका था। एक कपड़ेको बीचसे काटकर आधे आध कर वहिर्वास (लूंगी) जैसे पहनने लगा। उन्हीं कपड़ोंको लेकर रातमें मच्छरदानी बना लेता था। जो कुछ भी हो उन कष्टोंको कष्ट नहीं मानता था। किन्तु तब स्वास्थ्य बिगड़ने लगा। पीछे श्री श्रीठाकुर दो मच्छरदानी

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

तैयार कराके हमलोगोंको दिये, जिन्हें मच्छरदानी नहीं थी। पुष्टिकर भोजनके अभावसे मस्तिष्क भी कभी-कभी दुर्बल बोध करता था। मच्छर और गरमीके उत्पातसे नींद नहीं होनेसे शरीर और भी बिगड़ गया। शरीरके प्रति उपेक्षा भाव होनेसे शरीर भी विद्रोही हो गया। आहारका समय ठीक रख सकता नहीं था एवं जो मन शरीरमें रहकर परिपाक (हजम) करनेमें सहायता करता वह मन अधिकांश समयमें उस सुखप्रद चैतन्य समुद्रमें निमग्न रहता था। पहले स्वास्थ्यको ठीक रखनेके लिये जिन आसनोंका अभ्यास करता था, देहात्मबुद्धिको बिसार देनेके लिये उनको भी त्याग दिया था। आसनका अभ्यास करने जानेपर देहकी ओर मन देना पड़ता। किन्तु मन तो तब चैतन्य समुद्रमें अवगाहन करनेमें तृप्तिका अनुभव करता था। पीछे कदाचित् उस चैतन्यको खो बैठता इसीसे मनको एवं नयनको उस चैतन्यके पहरेपर नियुक्तकर तृप्त होता था।

शरीर वास्तवमें अस्वस्थ हो गया। जो कुछ भी खाता वह हजम नहीं हो पाता था। भातको छोड़ बार्लीका पथ्यसेवन करने लगा किन्तु वह भी ठीक तरहसे हजम नहीं होता था। तब श्रीठाकुर शरीरकी ओर पूरी दृष्टि रखनेका उपदेश दिये। इस प्रकार शरीर असक्त हो जानेसे तपस्यामें विशेष विघ्न उत्पन्न होगा यह मैं स्वयं समझ पाया। देहकी ओर विशेष दृष्टि देनेसे उस विराट्को एकान्त अपने स्वरूपमें पाता नहीं। विराट्को अपने अन्तरमें रखने जानेपर मन तथा इन्द्रियवर्ग शिथिल हो जाते। देह भी शिथिल हो

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

जाता। हजम (परिपाक) में व्यक्तिक्रम हो जाता था। श्री गुरुके आदेशसे फिर आसनादिका अभ्यास करने लगा। दो दिन अभ्यास करनेपर पुनः दो दिन आसन-अभ्यास करनेकी इच्छा नहीं होती थी। अथवा आसन करनेका समय उस दिव्य चेतनामें डूबे रहनेके कारण अतिग्राहित हो जाता था। कोई भी नियम ठीक नहीं रह सका, सब उलटपुलट हो गया।

श्री श्रीठाकुरके परिवार वालोंमेंसे कोई-कोई हमलोगोंके आचरणसे रुष्ट होते थे। केवल रुष्ट ही नहीं विरक्त होते थे। ध्यानकी अवस्था गभीर हो जानेसे भोजनका समय भूल जाता था। साधु दो व्यक्ति भी परिवार वालोंको कुपित करने लगे। किन्तु वे उनके पूर्व परिचित और अपने लोग होनेके कारण उनसे स्नेह भी यथेष्ट था। मैं तो परसे भी पर था अतएव मेरा वेताल चालको वे बढ़ा चढ़ा समझते थे। श्री श्रीठाकुर मुझे बहुत ही स्नेह करते इससे वे मुझे मुँहसे कुछ नहीं कहनेपर भी उनके आचरणसे समझ सब पाता था। किन्तु मैं तो जान बूझकर उनको कष्ट नहीं देता था। उस प्रियतमका आकर्षण जिस दिन गभीर हो जाता था उसी दिन स्नान भोजनकी तथा कर्त्तव्य कामोंकी बात भूल जाता था। अधिक विलम्ब होनेपर श्री श्रीठाकुर ही स्नेहशीला जननीकी नाईं अधीर हो दौड़कर हमलोगोंके पास चले आते थे। जंगला वा किवाड़के पास खड़े होकर बार-बार कातर कंठसे पुकारकर कहते—'अजी! बहुत बेला हो गया है' प्राय तीन वा चार बज गया है एक बार उठकर खाना पीनाकर लो।' तरल पदार्थ छोड़ कोई कठिन वस्तु

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

अर्थात् जो चबाकर खाने पड़ता ऐसा पदार्थ खानेकी प्रवृत्ति नहीं होती थी। चौ सब मानों अवश हो जाते थे। हां करने पर भी कष्ट होता था। इसीसे उस समय तरल वस्तु खानेकी इच्छा होती थी। किन्तु कोई दूसरा उपाय था नहीं। श्री श्रीठाकुर हमलोगोंकी अवस्था-को जानते थे किन्तु आर्थिक सुविधा नहीं रहनेके कारण कोई व्यवस्था कर नहीं सकते थे। परिवार वालोंके समक्ष वे बहुत अप्रतिभ होकर रहा करते थे। परिवार वाले लोग ही जैसे गृहिणी और श्री श्रीठाकुर जैसे उन गृहिणीयोंके सौतिन थे। हम लोग जैसे सौतेली माताका पुत्र। इन नाबालिग अक्षमपुत्रोंको लेकर श्रीश्रीठाकुर सौतिनके घरमें अपनेको बहुत ही विव्रत बोध करते थे। इसीसे वे सब ओर संभालनेके लिये स्वयं दौड़ जाते थे हमलोगोंको बोला लानेके लिये। तपस्यामें वे कभी हमलोगोंको निरुत्साहित नहीं करते थे वा यथा समय काम-काज नहीं करनेके लिये वा भोजनादिके नहीं करनेके कारण जो कुछ असुविधा होती उसके लिये भर्त्सना करते नहीं थे। हमलोग भी उनके मनका भाव समझ जिससे वे किसी प्रकार का मानसिक उद्वेग बोध न कर पाँय उसके लिये सर्वदा सचेष्ट रहा करते थे। किन्तु उस चिन्मयके प्रेमालिंगनमें जिस दिन विभोर हो जाता था उस दिन सब बात ही भूल जाता था।

हजम नहीं होनेके कारण शरीर तथा मस्तिष्क दुर्बल हो गया तो भी तपस्याका नशा भंग नहीं होता था। उस सुखमयको, प्रेम मयको, अपने आपको बिसारकर कैसे बचूँगा बोलो? कई जन्म

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

कई युग युगान्तर चक्कर लगाकर जो कुछ उनका स्पर्श लाभ किया है वह बहुत ही लोभनीय है। छोड़ देनेसे, भूल जानेसे कदाचित् उनको खो बैठूँ इसका भय सतत बना रहता था। सुखकी खान मेरे ये चिन्मय विभु। यद्यपि गभीर भावसे उनमें तब तक भी डूब सकता नहीं था तथापि जितना उनको प्राप्त किया था उसीसे देह, मन, प्राण शीतल हो जाता था। वर्षा काल इसी तरह बीत गया। काली घटाके फाँफड़से जैसे सूर्यका किरण चमक उठता वैसे ही मनकी चंचलता, मलिनताके व्यवधानसे वह दिव्य प्रकाश चमक उठता था। सूर्यका प्रकाश विश्वको देखनेका प्रदीप है और वह दिव्य प्रकाश अन्तरको देखनेका प्रदीप है। दिव्य प्रकाश अनन्त जन्मकी संस्कारराशि कहाँ एकत्रित हो गई है उसे दिखा देता।

'कित कलुष कित फाँकी,
अभी जो है बाकी मनके गोपन।
लगाके उसमें हमें फिर फिराओना,
लगाके आग उसे कर दो दहन।

अजी! अपने प्रेमाग्निसे कब तुम मेरे पुंजीभूत संस्कारको दग्ध कर दोगे? हे प्रिय, हे पवित्र, हे उज्ज्वल! तुम मुझे अपना लो। मेघकी आड़में छिपे न रहो। मेघके व्यवधानसे लुका-चोरी खेल खेलो नहीं। 'आवीरावीर्म एधि।'

पूजाके पूर्व ही श्री श्रीठाकुरके परिवारवाले लोक-जन कलकत्ता चले गये। हमलोग भी पूजाके समय जायँगे यह निश्चय हुआ।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

उसी बनिया टोला स्ट्रीटमें तिनकौड़ी बाबूके मकानके छतपर पूजा होगी।

द्वितीय दुर्गा पूजाके बाद पुरी धाम यात्रा

(१९२४ ई०)

श्री श्रीगुरुदेवके आदेशसे इस बार पूजाके कुछ मंत्र सिख लिया है। स्वस्तिवाचन, माँका आवाहन, ध्यान, अभिषेक तथा होमके मंत्र सिख चुका हूँ। पूजामें बैठ देखता कि वे सब मंत्र अभी भी हमें प्रयोजनीय होते नहीं। मेरे सामने ही उस चिन् समुद्रमें मेरी चिन्मयी माँ खड़ी हैं। माँ चिद्घन विग्रह। उनके सारे अंगोंसे ज्योति बिखर रही है। मुँहमें हँसी, आँखें प्रसन्नतासे भरीं। इस संसार सागरसे एक ही दिव्य नौकामें अपने साथ हमें चढ़ा ली हैं। मेरा पाषाण जीवत्वबोध, अहंबोध तब भी उनके स्नेह-सिन्धुमें गलकर मिल जाता नहीं। क्षणमें ही मैं अनुभव करता कि माँ द्रष्टा, मैं दृश्य। मेरे और माँके बीच एक चैतन्य समुद्र है। माँके हृदयसे, नेत्रसे चिन्मय ज्योतिकी तरंग आके हमें प्लावित करती। दिव्य स्पर्शसे मैं उद्वेलित होता, मंथित होता। माँ मेरे जीवत्वबोध-को मंथन करती हैं। कहाँ ! तो भी मिल जाता कहाँ ? पाषाण यह हृदय, पाषाण यह जीवत्वबोध। अगणित संस्कारके सुदृढ़ पहाड़।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

ये संस्कार ही तो असुर, यह अहंकार ही तो असुरका राजा। आज निर्माल्य दूँगा, अंजलि दूँगा, आहुति दूँगा इन संस्कार राशिको। जितना ही देता उतना ही फिर आ जाता। संख्यातीत ये रिपुकुल। आता आवरण, आता विक्षेप ढाँक देने चाहता मेरी माँको। आता उदग्र (दर्प) आता उग्रास्य (क्रोध) आता असिलोमा, आता महा हनु, आता चामर, चिक्षुर। इनके दल संख्यातीत हैं। अभया-की गोदीमें बैठे रहनेपर भी भयसे संत्रस्त रहता; अपने मनमें, अपने अन्तरमें इस रिपुकुलको देख। दिव्य राज्यभ्रष्ट मैं इन असुरोंके अत्याचारसे। माँकी चिन्मय सत्ताका अनुसन्धान पाकर भी उसमें स्थिति हो पाती नहीं। भ्रष्टराज्य पराजित। बार बार परा-जित होता, वार वार राज्यभ्रष्ट होता। माँकी गोदीका सन्धान पाके भी, माँकी गोदीमें पुनः पुनः बैठकर भी गोदीसे विच्युत हो जाता। अब मैं मातृहारा नहीं, किन्तु माँ और हमारे बीच बहुत बाधा (रुकावट)—चित् समुद्रमें अचित् तरंग। अन्तरमें पड़े हैं कितने निकम्मे कितने मलिन जीर्ण पाद्य अर्घ। केवल मलिन पाद्य अर्घ ही नहीं, सुन्दर तथा पवित्र पाद्य अर्घ भी हैं। उन्हींको चढ़ा दूँगा रँगीले चरणोंपर। सब कोई लाये हैं डाला सजाके विविध कुसुम-राशि तथा गंगाजल, सुरभित पुष्पोंकी माला, दूर्वा, चन्दन और भी कितने कुछ। फल लाये कोई ढेरका ढेर। खेद नहीं मनमें मेरे। मैं भी अबकी बार माला गूँथ ली है, दिव्य सूत्रमें रूपोंकी ग्रन्थि देकर 'मयि सर्वमिदं प्रोतं सूत्रे मणिगणा इव।' गूँथी पड़ी हैं असंख्य संस्कारराशि अन्तरमें, गूंथी पड़ी हैं असंख्य दृश्यराशि बाहरमें।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

ग्रन्थि दी है माला गूँथी है। यह माला पहनाऊँगा उनको, मेरी चिन्मयीको, मेरी राजराजेश्वरीको, मेरी हृदयविलासिनीको, मेरी उमाको, भैरवीको, शंकरीको, दुर्गाको, अनेकों जन्म बैठके इस माला-की पुष्पराशिका चयन किया है। कितना मलिन, कितना छिन्न। फिर कितना सुन्दर, कितनी सुवाससे मंडित विविध फूल। उन्हींको दूँगा यह मलिन छिन्न संस्कारराशिकी जीर्ण माला। होमाग्निमें आहुति दूँगा उस असिलोम, महा हनु, चामर और चिक्षुरको, बलि दूँगा महिषासुरको। साथी होंगे देवतावृन्द। वे भी मेरे ही साथ माँका अभिषेक करेंगे। अहा! कितने उपचार हैं आज हमें। इतने उप-चारोंका बोझ वहन करनेपर भी उपचारके लिये गतवर्ष अपनेको कितना दरिद्र कंगाल समझा था। ढेरका ढेर उपचार फूलोंके फलोंके डाला। अभिषेक करूँगा हृदय विगलित अश्रुवारि से। धो डालूँगा उस अश्रु नीरसे पुंजीभूत आसुरिक संस्कारको ये ही तो आसुरिक संस्कारको। ये ही तो आसुरिक संस्कारके विपक्षमें खड़े हो रहे हैं मेरे ही अन्तरमें कितने देवशिशु। आओ, आओ देववृन्द! मेरे अन्तरमें देवराज्य स्थापन करने जानेपर अनेक जन्म लौं विमर्दित हो चुके हो। आओ सिद्धिदाता गणेश, सौर्यदाता षडानन, देवराज इन्द्र, मनके अधिपति ब्रह्मा, प्राण-के अधिपति विष्णु, ज्ञानके अधिपति त्रिशूलधारी शिव। आओ वसु, आओ मेधा, पुष्टि, प्रभा, प्रेम-प्रीति, शान्ति और शुचि। दिव्य माला गूँथकर दिव्य राजराजेश्वरीके दिव्य गलेमें आज पहनाऊँगा। कितनी उन्मादना आज मेरे भीतर। अपने मनसे हँसता, अपने मनसे रोता। विराट् चित् समुद्रमें बैठ चिन्मयीको अन्तरमें रख

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

तीन दिन तक पूजा चली। देखते-देखते तीन दिन बीत गये। पूजाकी तिथि, वार नक्षत्र, अतीत हो गये किन्तु मेरी पूजा सम्पूर्ण हुई नहीं। पूजाकी अनेक डाली सजी रह गई। अनेक मालायें पड़ी रह गईं। मेरा अहं भी विसर्जनके बाजाके साथ विसर्जन किया गया नहीं। किन्तु माँ मेरे अन्तरमें रख गईं दिव्य अनुभूतिकी पवित्र स्मृति।

पूजाके बाद साधुलोग राजेनको लेकर काशी पधारेंगे ऐसी बात हुई। मैं इसबार अकेले ही पुरीधाम जानेकी अभिलाषा श्री श्रीठाकुरको निवेदनकी। वे अनुमति दे दिये। श्री जगन्नाथ एवं माता विमला देवीको स्मरण करते-करते, प्रणाम करते-करते पुरी-धामकी यात्राकी। ❀ भुवनेश्वरमें सवेरे ट्रेन पहुँचा। इस

❀ ट्रेनमें रामकृष्ण मिशनके एक मद्रासी साधुके साथ आलाप हुआ। वे भी पुरी ही जा रहे थे। एक पंडा मिशनके साधुको टानकर ले गये, मैं भी साधुका अनुगमन किया एवं एक धर्मशालामें जा टिका। साम.ी-सामान रखके मार्कण्ड सरोवरमें जाकर स्नान किया और श्रीजग-न्नाथजीका दर्शन करने गया। मन्दिरके फाटकपरसे ही पुनः पंडाओंका उत्पात आरंभ हुआ। मनका शान्त भाव वे विनष्टकर दिये। किसीने बासी फूलकी माला गलेमें डारकर पैसा चाहा, किसीने तुलसीदल खील लेकर कान नाक मुँहमें जहाँ सका घुसेड़कर पैसेके लिये हाथ पसारा। भौंरों सरीखे पाँच, सात, दश पहुँच गये। मेरे पास पैसे कम ही थे इसीसे थोड़ेमें ही रिहाई पाई। साधुको लेकर टानाटानी धक्का-धक्की

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

भुवनेश्वरकी स्मृति तिक्तमिश्रित थी। मन्दिरका शिखर दिखाई दिया। हरिहरको करजोड़ प्रणाम किया। आशीर्वादकी प्रार्थनाकी। भवाम्बुधिपार होनेके लिये नीलाम्बुधितीरको चला हूँ, चला हूँ आज जगन्नाथजीकी गोदमें। तुम यहाँपर हर और वहाँ हरि, एक

हो गई। साधुके दो रुपयेके पैसे निःशेष रूपसे खर्च हो गये। मिशनका पंडा बोलके जिसने अपना परिचय दिया था वह साधुजीसे सवा दो रुपये लेकर पहले जलपान (बालभोग) प्रसाद ले आ.के पीछे बारह बजेमें भोग प्रसाद ला देगा बोलकर चल दिया। वह एक दम ही चला गया, जब वह एक बजे तक भी लौटकर नहीं आया तब हमलोग आनन्द-बाजार जाके प्रसाद खरीद लाये। मिशनके साधु मिशनके अन्यान्य साधु जहाँ थे वहाँ पिछले बेलामें चले गये। मैं धर्मशालामें ही रह गया। धर्मशालामें तीन दिन रहनेका नियम था इसीसे मैं दूसरा आश्रयस्थल ढूँढ रहा था। किन्तु दूसरे ही दिनकी रातमें मैं अस्वस्थ हो गया। जिन सब स्थानोंमें आश्रय पानेकी इच्छासे गया—यथा एमार मठ, राधा किशोर मठ, उन स्थानोंमें जगह नहीं हुई अथवा वहाँका परिवेश हमें पसन्द नहीं। धर्मशालाके अध्यक्ष और दो दिन अधिक रहनेकी अनुमति प्रदानकी। पाँचवाँ वा अन्तिम दिनमें चक्रतीर्थमें सोनाके गौरांग जहाँ हैं उस आश्रममें जगह पा सकता यह एक वैष्णव व्यक्ति कह दिये। उस स्थानमें जाकर उत्पीड़ित हुआ, लांछित हुआ। बहुत कठिनाईसे एक जन मठाधीशसे भेंट होनेपर वे पहले पूछे—क्या भोजन चाहिये? सारा दिन मालूम कुछ जुटा नहीं? मैं विनीत भावसे उत्तर दिया—मैं खानेके

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

ही के दो रूप। तुम उदयगिरिको बगलमें रख हर मूर्त्तिसे यहाँ अधिष्ठित और नीलाम्बुधितीरमें तुम हरि मूर्त्तिसे विराजित। कितने तपस्वी सिद्धकाम हो चुके हैं इस नीलाम्बुधि-प्रेमाम्बुधि तीरमें बैठके। गुरुमुखसे सुन चुका हूँ कि सब अवयव विहीन

लिये नहीं आया हूँ। कोई साधन भजन करनेके लिये आश्रम स्थान चाहनेपर आपलोग उसे रहनेके लिये कोठरी दिया करते हैं। मेरी बात समाप्त होते न होते वे विकट अट्ट हँसी हँसकर बोल उठे —ओ, केवल भोजन ही नहीं एक दम चिरस्थायी बंदोबस्त। साधन—और भजन। व्यंग्य स्वरसे बोलते-बोलते विद्रुपकी हँसी हँसे। अवाच्य भाषामें गाला-गाली दे कह दिये कि यहाँ स्थान नहीं होगा। सूर्य तब अस्त हो चुके थे, शीत काल, चक्रतीर्थसे धर्मशाला प्राय तीन मील दूर। उस समय तक अच्छी सड़क तैयार नहीं हुई था। १०२।- डिग्रीज्वर शरीरमें, समस्त दिन निराहार, शरीर पूरा अवसन्न बोध होता था। तो भी पैदल ही धर्मशालाकी ओर चला। श्री जगन्नाथजीको निवेदन किया – तुम जब जगत्के नाथ हो। भुवनेश्वरसे अस्वस्थ होकर विदा हुआ था। यहीं कुछ काल रहने दो, तपस्या करने दो। मन्दिरमें जाके उनको प्रणाम किया, आश्रय चाहा। यदि तुम स्थान नहीं दोगे तो समुद्रतीरमें जाके कल आश्रय लूँगा। घरकी छत होगी अनन्त आकाश, शयन करूँगा सुविस्तृत तीर भूमिपर।

मन्दिरके ही पूरब द्वारपर नेपालीकी चायकी दूकान थी। उसे मैं अपना साबूदाना उबालने दिया था। वही नेपाली दो तीन दिन तक मेरा

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

अथ च सब अवयव गुण समन्वित है तुम्हारी यह जगन्नामूर्त्ति। 'सर्वेन्द्रियगुणाभांस सर्वेन्द्रिय विवर्जितम्'। सुना है कि दिगन्त प्रसारित तुम्हारे हाथ पाँव हैं, अकाशकी भाँति परिव्याप्त तुम्हारी दृष्टि, सब ओर तुम्हारा शिर, मुख और कान हैं। 'सर्वतः पाणिपादं तत् सर्वतोऽक्षि शिरोमुखम्'। तुम एक ही स्थानपर बैठ सर्वत्र गमनकर सकते। तुम लेटे रहनेपर भी सर्वत्र विचरण करते। "आसीनो दूरं व्रजति शयानो याति सर्वतः'। वही तुम अवयव

साबूदाना उबाल देता था। दूकानसे जब साबूदाना लाने गया तो हरनाथ आश्रमके एक जन भक्त उपयाचक हो के मेरा परिचयादि जिज्ञासा करने लगे। मेरा परिचय और उद्देश्य ज्ञात हो वे मुझे अपने आश्रममें एक कमरा छोड़ देनेकी इच्छा प्रकाशकी। कोठरी ता वे देंगे सही किन्तु भोजनकी व्यवस्था मुझे स्वयं करनी होगी। आश्रममें भूखा रहना भी चलेगा नहीं। उत्तरमें कहा कि सम्प्रति मेरे पास सामान्य कुछ है उसीसे चलेगा। दूसरे दिन सबेरे वे स्वयं धर्मशालेमें उपस्थित हो गये एवं एक मजूरा ठीक कर सामान सहित मुझे आश्रममें ले गये। आश्रम पाकर आश्रय दाता श्री जगन्नाथजीको कृतज्ञताज्ञापक प्रणाम किया। आश्रममें एक अच्छा ही कमरा मुझे दिये थे। समुद्रतटमें वह स्थान मिल जानेपर बहुत तृप्त हो गया। उस आश्रममें होम्योपैथी औषध भी देने जानते थे। मुझे भी कुछ औषध दिये। समुद्रके खुले वायु तथा औषध सेवनसे दो एक दिनमें ही मेरा शरीर सुस्थ हो गया।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

विवर्जित हो के अथ च अवयवका धर्म लेकर अर्ध अवयवविशिष्ट जगन्नाथ मूर्त्तिसे विराजित हुए। हाथ है कर नहीं; उरु है पद नहीं। अर्ध अवयव विशिष्ट तुम्हारी मूर्त्ति। कितने रंग भंगसे अपने विराटत्वको समझानेके लिये अवयव धारण किये हो। पूर्ण अवयवसे अर्ध अवयव, अर्ध अवयवसे लिंग मूर्त्ति धारण किये हो। पूर्ण अवयवसे अर्ध अवयव, अर्ध अवयवसे लिंगमूर्त्ति धारण किये। शालग्राम शिला हुए, शिव लिंग हुए। चिह्न है रूप नहीं। अवयवका धर्म है अवयव नहीं, फिर अवयव विशिष्ट भी तुम्ही हो गये। रूप अरूप दोनों ही में तुम्हारी अवस्थिति है इसको समझानेके लिये बाहर विश्वमें, मन्दिरोंमें तुम कितने रूप धारणकर अवस्थान करते हो। अन्तरमें धराई देने, बहिर्मुखजीवकी आँखें खोलनेके लिये तुम बाहर विश्वमें आकर खड़े हुए हो। बाहरमें एकबार देखनेसे, एक वार आत्मनिवेदन करनेसे, एकबार अश्रु-सिक्त अर्घ अर्पण करनेसे एक बार तुम्हारे विश्वरूपको माँ बोलकर जकड़ धरनेसे तुम जो अन्तर और बाहर एककर चिर दिन चिन्मय रूपसे अधिष्ठित हो इसीको देखनेका सौभाग्य प्रदान करते। करसाटांडके निर्जन प्रान्तरमें, आकाश बतासमें, महुआ, शाल और आमके पेड़ोंमें, कंकरमय मिट्टीमें तुम्हारा वह दिव्य रूप देखा है। देखा है अन्तरके साथ बाहरका संयोग। देखा है चित्‌के साथ अचित् योगायोग। देखा है शिवके वक्षपर श्यामाको। अनुभवकर लिया है—तुम जलमें रस, चन्द्र सूर्यमें प्रभा, आकाशमें वाक्, जीवके जीवन हो। तुम्हारेमें ही विधृत हैं जड़ और चेतन। तुम्हारा

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

वह दिव्य रूपको देखते-देखते अपने अन्तरमें देख पाया देवता असुरके नित्य युद्ध।

बाहरमें जड़त्व दृष्टि विनष्ट होनेपर भी, मधुकैटभके विनाश होनेपर भी अन्तरका देवासुर संग्राम मिटा नहीं। अन्तरका जगत् बाहरके जगत्की अपेक्षा अधिक विराट्, अधिक गहन है। उस गहन अरण्यमें छिपे हैं अनेक असुर अनेक हिंस्र पशु। श्रीजगन्नाथके चरणके नीचे, नीलाम्बुधिके तीरमें निवासकर उस असुरकुलका विसर्जन करूँगा। गौरांगदेव इसी दिव्य धाममें आकर अपने प्रेममयको गंभीर भावसे प्राप्त किये थे। प्रेममयके साथ, उनके चरणोंमें लुंठित हो, उनसे अलाप विलापकर, आत्महारी होकर रहते वे प्रेममय ठाकुर श्रीगौरांग। उनके सिद्ध पदरज पड़े हैं पुरी-धामके प्रत्येक धूलिकणाके साथ मिलकर। उनकी प्रेमवायु अभी भी बह रही है इस नीलाचलके नील आकाशमें। छुआऊँगा वह वायु, लोटूँगा उस धूलिकणामें। अन्तरमें अन्तर निधिको बैठाऊँगा। हा जगन्नाथ, हा जगन्नाथ बोलकर आर्त्तनाद करूँगा। सब स्थान में उनके कान आँख हैं। विश्व भुवनमें प्रसारित हैं उनके बाहु। वह बाहु मेरे शिर पर है, वह नेत्र मेरे अन्तरमें है। मेरे अन्तरके देवासुर संग्रामको वे देख रहे हैं। मेरे अन्तरके हा हाकारको वे सुन रहे हैं। इस बार वे अपने दिव्य बाहुके सुदृढ़ प्रेमालिंगनसे गह लेंगे इस द्वन्द्वसमन्वित, देवासुर युद्ध विड़म्बित निपीड़ित क्षुब्ध हृदयको।

आज आया हूँ नाथ! बहुत व्यथाहत चित्तसे तुम्हारे वक्षमें

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

जुड़ानेके लिये मेरा इस क्षुद्र हृदयकी सब ज्वाला। लौटाओं नहीं, अजी लौटाओं नहीं। पातकी बोलकर क्या पाँवसे ठेल देना अच्छा होता है। तब क्यों पापी तापी इतनी आशा किये रहते? कौन जानता था कि इतने पाप अन्तरमें छिपे पड़े थे। जिस दिन तुम्हारी ज्योतिका उजाला हुआ, जिस दिन तुम्हारे परससे चेतना जगी उसी दिन देख पाया कि अंतरमें कितने जंजाल लुके थे। उस पुंजीकृत जंजलोंके बीच लुक रही थीं अनेक हिंस्रभावापन्न वृत्तियाँ। उनके उत्पीड़नसे अकेला हो नहीं पाता। एकाग्र चित्तसे तुम्हारे चरणोंपर अपनेको ढाल दे सकता नहीं। आह, कितनी ज्वाला! आह कितना उत्पीड़न, निष्पेषण, दहन! दिन प्रति दिन दग्ध होता रहता हूँ। कहाँ जुड़ाऊँगा नाथ? वाहरकी ज्वालाकी अपेक्षा अन्तरकी यह ज्वाला शत दावानलकी नाईं प्रज्वलित होती है। करो प्रेमबारि सिंचन, केवल सिंचन नहीं, वर्षण, वर्षणी नहीं प्लावन। आओ प्रेमकी बाढ़ होकर, आओ नील घटाका फेनिल गर्जनसे हृदयके असुर दलको कंपितकर। संत्रस्त करो, भीत करो, प्रेमतरंगके आघातोंसे चूर्ण करो, विमर्दित करो। फेनिल गर्जनसे गरज उठो। 'भयानां भयं भीषणं भीषणानाम्, गतिः प्राणिनां पावनं पावनानाम्' बोलते-बोलते तुमको उठाकर अपने छातीपर रख लूँ। आओ जगत्के नाथ, पिता, पाता, धाता विधाता, आओ गति भर्ता प्रभु साक्षी निवास सुहृद। तुम अपने अव्यय रूपमें अपनी प्रेम बाढ़से भसा ले जाओ। मेरे अन्तरमें लुकी छिपी हैं जितनी असंख्य कामनाओंकी बीजराशि। दो आश्रय दो। तुम तो जगत्के पिता, माता एवं धाता हो। 'पिताऽ

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

हस्य जगतो माता धाता पितामहः'। आश्रय तुम, गति तुम, निवास तुम। मैं अतिथि नहीं; मैं निवासकी छातीपर वास करता हूँ। विराट् चित् समुद्रकी छातीपर अवस्थित है मेरी जीव चेतना। वह असुर भी तो तुम्हारी ही तामस मूर्त्ति है। तुम कल्याणमय मूर्त्ति होके खड़े हो जाओ, अपनी तामसी मूर्त्तिको समेट लो। मै तो तुम्हारा आश्रित हूँ। अब हे नाथ! मेरे साथ आपकी चुहल सोहती नहीं। धरो, मुझे धरो, अपने प्रेमाम्बुधि स्वरूपमें निमज्जितकर लो।

बड़ी आशा लेकर, बड़ी आकांक्षा आवेग लेकर आया हूँ इस जगन्नाथ धाममें। हृदयमें बहुत कोलाहल है। रसमयको और भी गाढ़े भावसे नहीं पा लेनेसे, उस परमको नहीं देख लेनेसे वह कोलाहल रुकेगा नहीं। 'रसवर्जं रसोऽप्यस्य परं दृष्ट्वा निवर्तते'। इसीसे प्रेममयको, रसमयको, विराट्को इस अगाध समुद्रके तीरमें पाऊँगा सोचकर अनन्त आकाशके नीचे आकर खड़ा हुआ हूँ मैं। मेरे घर नहीं, परिजन नहीं, कोई बंधु-बान्धव नहीं। अकेला ही आया हूँ उस एकको पानेके लिये।

मन्दिरमें आया किन्तु यहाँ बहुत ही कोलाहल रहता है। पंडा सब बहुत तंग करते। अर्थ लोभसे परमार्थकी चिन्तना करने देते नहीं। मनके भावको व्याहत करते। आँखोंकी दृष्टिमें बाँधा देते। अन्तरके भाव समुद्रमें ढेले फेंकते। शिवके साथ तो भूत रहता है यह जानता, किन्तु यहाँ देखता कि श्री जगन्नाथजीके साथ भी भूत रहते। दरिद्र कंगाल मैं हूँ तो भी धनकी लालसासे वे कितनी बाधा देते। कितनी बातें कानोंमें डारते। घर कहाँ, कौन थाना, कौन

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

जिला, पिता पितामहके क्या नाम। गृहहीनके गृहकी खोज, जनहीन के स्वजनकी खोज यह कैसा परिहास तुम्हारा हे जगन्नाथ ? बचाओ इनके हाथोंसे। हे माता विमला ! हटा दो रास्तेके इन कंटकोंको।

'तुम्हारे चरण पूजनेके अभिलाषसे आया घर छोड़।
कंटकवनमें घसीटता कौन लेता पाथेयको छिन-छोर ॥'

साथी तुम, तुम्हारी दृष्टि रहती हुई फिर पाथेय क्यों लेता काढ़ ? पद-पदमें बाधा, टूटी माला पहनाके, तुलसीदल, खील मुँहमें ठूँस वा कानोंमें नाकोंमें ठूँसके हाथ फैलाकर कहता धन दो धन दो। कैसे अंधे हैं वे। तुम्हारी गोदमें बैठकर भी तुमको चीन्ह सकते नहीं। 'जिस धनको पाके धनी मणिको मणि नहीं समझता, वही अमूल्य धन तुम यहाँ विराजित हो। तो भी पार्थिव धनके लोभसे वे मुझ सरीखे दरिद्र कंगाल बच्चेको क्यों तंग करते। श्री गौरांगके प्रेमकी बाढ़ क्या उनके अन्तरको स्पर्शकी नहीं ?

श्री जगन्नाथजी दर्शन दिये। चैतन्यघन विराट् मूर्त्ति, विस्फारित नेत्रयुगल। उच्च मंचपर विराजमान होनेसे दूरसे ही देख पाया। साष्टांग प्रणाम किया। कृपाकी याचनाकी। किन्तु आज उनके समीप जा नहीं सका। माता विमलाके मन्दिरमें जाके अपने दुखड़ेकी माला माँके चरणोंमें अर्पण किया। तुम्हारा नाम विमला है इस लिये अबकी बारी मेरा मल (मैल) धोना होगा। मैं तत्त्व जानता नहीं। पुराण, भागवत वा तंत्र जानता नहीं। अविधिके राज्यमें बैठ तुमको पाया हूँ मैं। तुम्हीं मेरी विधि, मेरी निधि। किस विधानसे तुम्हारे पास पहुचूँ वह जानता नहीं। सब

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

कुछ छोड़कर केवल तुम्हारी पताकाको लक्ष्यकर आया हूँ। 'मातेव पुत्रान् रक्षस्व श्रियश्च प्रज्ञांच विधेहिनः।' तुम प्रज्ञारूपसे, धीरूपसे प्रज्वलित हो जाओ, हे सविता, प्रसवित्रा, ब्रह्मजननी ? 'ब्रह्मयोनि नमोऽस्तुते।' लुंठित होकर चरण धरने गया। पंडा हठात् आके बाधा दी। छूना नहीं छूना नहीं कहके चिल्ला उठा।

छू लिया हूँ मैं अपनी माताको। रूपको केन्द्रकर जो अरूप शक्ति मन्दिरमें भरी है, विश्वमें व्याप्त है, मेरे हृदयमें परिपूर्ण है अपनी उसी माँको छू ली है। अरूपका ही रूप, ब्रह्मका ही विश्व-रूप, विश्वकी ही मूर्त्त छटा। मेरी माँ वहीं ब्रह्मजननी, विश्व प्रसविनी। छू-ली है—जिनसे जन्म लिया है, जिनकी गोदीमें हूँ, जो मुझे आकर्षणकर अपने मन्दिरमें लायी हैं तिनको मैं छूली है। निविड़ स्पर्शसे भरा भुवन, अपूर्व है उनका प्रेमालिंगन। इस करुणा घनविग्रह विश्व भुवनको अपने अदृश्य प्रेमालिंगनसे बाँध रखी है। आज उनको छू ली है। माँके मुखमें प्रसन्नताकी हँसी देखी। अन्तर जुड़ा गया। सिद्ध हो गया मनोरथ यह जान-कर फिर प्रणाम किया। धीर पदक्षेपसे मन्दिरसे निकल आया। माँ मेरे अन्तरमें जाग्रत रहीं। किन्तु रात होनेपर शरीर अस्वस्थ हो गया।

अब नीलाम्बुधि तीरमें स्थान पा लिया है। अशेष कृपा उनकी। अपने कर्मफलके दोषसे कई दिन लांछना पायी। धर्म-शालामें असुस्थ शरीर लेकर चार-पाँच दिन अयत्न, निराहार एवं अनिद्रासे रहना पड़ा था। कितने लोगोंके कहनेसे आश्रय पानेकी

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

आशासे जिस तीस मंदिरमें भटक चुका था। देहको लेकर ही इतनी ज्वाला। निर्लज्ज उदरको लेकर ही इतनी लांछना। एक एक कुत्सित खांचेमें प्रवेशकर क्यों यह कौतुकका खेल? भाग्य चमका। एक देववांछित स्थानमें आश्रय मिला। अब समुद्रके किनारे किनारे घूमता फिरता। प्रेम समुद्रका प्रतीक समझ इस नील समुद्रमें अवगाहन करता। नील आकाशके अंग अंगमें परिव्याप्त देखता इन जगन्नाथ एवं विमलाको। देखता अपने अंतर में निरंजनके बाजाके साथ साथ जिस महिषासुरको बलि दे सका नहीं, भसा दे सका नहीं, पूजाके उपचार अर्पणके साथ साथ जिन विक्षेप एवं आवरण राशिको माँकी माला रूपसे पहना सका नहीं, पुष्परूपसे चरणपर चढ़ा सका नहीं इस नीलाम्बुधि तीरमें बैठ उस पूजाको सम्पन्न करूँगा। हे जगन्नाथ संकल्पसिद्ध होने दो, पूर्ण होने दो मनोरथ।

तपस्या चलने लगी। नवीन पड़ोस, नवीन स्थानमें मेरे उसी पुराने चिन्मय बांधवको पाया। करमाटाँडमें जिस ब्रह्मचेतनाकी अनुभूति प्राप्त की थी, जिस ब्रह्मचेतनाके मध्य गंभीर भावसे अव-स्थितिके लिये समस्त वर्षा ऋतु वहाँ तपस्या की थी उसी ब्रह्म-चेतनाको यहाँ आकर भी प्राप्त की। 'सुखेन ब्रह्मसंस्पर्शमत्यन्तं सुखमश्नुते'। उनके मीठे परससे शरीर शीतल होता, पुलकित होता, इन्द्रियवर्ग शान्त हो जाते हैं। मन चंचलता त्याग करता, वृत्तियों, के अन्तरके पशुभाव सब शक्तिहीन हो जाते हैं। जितना ही उनका स्पर्श पाता, जितनी ही उनमें अवस्थिति कर पाते उतना ही आनन्द-

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

से गद्गद् हो जाता है मेरा प्राण। समुद्रके तीरमें बैठ उस ब्रह्म-चेतनामें समाधिस्थ होनेका प्रयासी हुआ। ब्रह्मचेतनाके प्रथम स्तरमें अन्तर तथा बाहर परिव्याप्त एक चिन्मय सत्ताका अनुभव होता यह मैं पहले भी कह आया हूँ। यह सत्ता चराचरमें व्याप्त है। सत्ताके अभ्यन्तर असंख्य नामरूप हैं किन्तु विजातीय भेद नहीं रहता। एक प्रकांड पाथरको यदि कोई काटकर एक बड़े आयतनका थाल तैयार करते समय उसके साथ अनेक कटोरे गिलासादि भी तैयार कर ले तो उनमें नामरूपके भेद रहनेपर भी उनका उपादान पाथर एक ही रहता। उसी प्रकार चिन्मय सत्ताके अभ्यन्तर जो नानरूप देखते वे एक ही उपादानसे बने जसे अनु-भव करता। पहले पहल जब उस चिन्मय सत्ताका अनुभव किया था तब ऐसा प्रतीत होता था कि उससे मन बिलकुल शान्त हो गया। किन्तु कुछ काल उस स्तरमें अवस्थित रहनेपर देख पाया कि मनके क्षीण होनेपर भी वह अपना चंचल स्वभावका एकदम त्याग किया नहीं। बाहरके नामरूप लेकर चिन्मय सत्ता उद्-भासित होनेपर भी अन्तरमें रह जाता आसुरी वृत्तिका उत्पीड़न।

चिन्मय सत्तामें एक दिनमें ही अवस्थान किया जाता नहीं। दीर्घकाल निरन्तर उस सत्तामें ठहरनेका अभ्यास करते-करते पकड़े जाते भीतरके मलिन चित्र सब। नेत्रोंसे जो सब दृश्य देखे जाते वे चिन्मय होनेपर भी स्मृति वा कल्पना जगत्में जो सब वस्तु तथा भाव रहते उनको भी चिन्मय नहीं कर सकनेसे साधनाके बहुत कुछ बाकी रह जाते हैं। व्यष्टि चिन्मय बोधमें गंभीर भावसे अवस्थान

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

करनेपर वह स्मृति और कल्पनाका जगत् उद्भासित होता रहता है। तब उस स्मृति और कल्पनाकी वस्तुओंको चैतन्यबोधमें विकसित करना पड़ता। सत्तामें उन वस्तुओंको हवन कर देना पड़ता है। अन्तरकी भी वृत्तियोंको इसी तरह प्रत्येकको ब्रह्माकार वृत्तिमें परिणत करना होता है। वृत्तियोंकी स्वतन्त्र कोई सत्ता नहीं, वे उस चिन्मय सत्ताकी ही तरंग विलासमात्र हैं इस भावको लेकर पुनः पुनः समाधिका अभ्यास करना पड़ता है।

'प्राणस्येदं वशे सर्वं त्रिदिवे यत् प्रतिष्ठितम्।' त्रिभुवनमें जो कुछ है—स्थूल, सूक्ष्म, कारणमें जो कुछ है वह इस चिन्मय सत्ता-का ही लाला विलास मात्र है, इस बुद्धिसे पुनः पुनः अवस्थितिकी चेष्टा करने लगा। कभी सत्तामें वृत्तियोंको हवन करता, कभी वृत्तियोंको सत्ताका विलासरूपसे देखता था। कभी निरपेक्ष द्रष्टारूपसे वृत्तिकी गतिविधिका लक्ष्य करता था। 'यत् करोषि यदश्नासि, यत् जुहोसि ददासिय यत्। यत्तपस्यसि कौन्तेय, तत् कुरुष्व मदर्पणम्' शयनमें, भोजनमें, स्नानमें, गमनमें एवं प्रत्येक कर्ममें विराट् सत्तामें अधिष्ठित हूँ ऐसा अनुभव करने लगा। यह भी अनुभव करने लगा कि सत्तासे मैं पृथक् नहीं हूँ। विराट् सत्ताका ही एक स्फुरण हुआ मेरी यह जीव चेतना। व्यष्टि चेतना अर्थात् इस जीव चेतनाको अवलम्बनकर उनकी लीला चल रही है। वे हमारे माध्यमसे देखते, सुनते वा बोलते हैं। पहले स्नान भोजनके समय अपना देहको गुरुके देहरूपसे कल्पना करता था, अब उस कल्पनाका प्रयोजन होता नहीं। अब सतत देख पाता, अनुभव

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

करता कि उस चिन्मय सत्ताकी ही कौतुकमयी लीला चल रही है मेरी जीवचेतनाके समस्त कार्योंके अभ्यन्तर। मेरा शरीर उस सत्ताका ही मूर्त्त चित्र है। मेरे इन्द्रियवर्ग उस सत्ताके ही विविध छन्द हैं। मेरा मन उस विराट् मनका ही अंश है। इस प्रकारकी अनुभूति जब जाग उठती तब अपूर्व आनन्द रससे अभिषिक्त होते रहते मेरे शरीर, मन और प्राण। 'अत्यन्तं सुखमश्नुते' इस सुखकी तुलना होती नहीं। किसी सुस्वादु खाद्यके खानेपर इस सुखकी अपेक्षा विशेष सुख पाता यह कहा नहीं जा सकता। किसी सुखकर वस्तुको स्पर्शकर इसकी अपेक्षा अधिक सुख पाता यह मान नहीं सकता। किसी सुखकर पदार्थ प्राप्तकर इसकी अपेक्षा अधिक प्रीतिकर पदार्थ लाभ किया यह मनमें उदय होता नहीं। 'अत्यन्तं सुखमश्नुते,' इस सुखमयका स्पर्श पाकर ही ऋषिगण कहे थे—यह विश्व आनन्दका कुतूहल है। आनन्दसे यह विश्व उत्पन्न हुआ है, उसी आनन्दमें विश्व अवस्थित है। 'आनन्दाद्ध्येव खल्विमानि भूतानि जायन्ते, आनन्देन जातानि जीवन्ति, आनन्दं प्रयन्त्यभिसंविशन्तीति।' गीतामें संस्पर्श जन्य भोग-सुखकी अपेक्षा उस ब्रह्मानन्दको उत्तम सुख, परम सुख कहा है। कविगुरु रवीन्द्रनाथ ब्रह्मचेतनामें अवगाहनकर ही उच्च स्वरसे यह गान किये थे—

पाके संग तेरे सुन्दर हे सुन्दर।
धन्य हुआ अंग मेरा, पूर्ण हुआ अन्तर।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

और भी गान किये थे—

भरके इन तन मन प्राण।
सुधा कवन चाहे तू करने पान॥

इस दिव्य चेतनाके अभ्यन्तर जब जीव चेतनाकी अवस्थितिका अनुभव करता तब उस जीव चेतनाके मध्य होता उनका अवतरण। वे उस जीव चेतनाको अपनी दिव्य अंगकान्तिसे, अपने प्रेमालिंगनसे वेष्टितकर, रमणीय करते, सुन्दर करते, उज्ज्वल करते हैं। स्वामी जैसे अपनी प्रणयनीको विविध वेशभूषासे सजाता है उसी तरह यह हृदय स्वामी अपने दिव्य भावसे विभूषित करते इस जीव चेतना-को। अपने भाव एवं प्रेमसे रंजित करते। तब आरंभ होता है उनके साथ गंभीर प्रेमका खेल। जीव चेतना तब भी विलुप्त होती नहीं, वह निर्निमेष लोचनसे अवलोकन करती रहती अपने प्रियतमकी ओर, उस ब्रह्मचेतनाकी ओर। वह प्रियतम भी निमेष रहित दृष्टिसे हेरता रहता इस जीव चेतनाकी ओर। कभी सख्य भावसे कभी दास्य भावसे और कभी कान्ताभावसे साधना चलती रहती है।

अन्तर तथा बाहरमें तब चलता उस दिव्य पुरुषका खेल। आत्मरति, आत्मक्रीड़ा—विरतिहीन क्रीड़ा। उल्लाससे भर जाते तन मन और प्राण। भावसे विह्वलकर देता। रह-रहके ऐसा भाव भी आता मानों यह शरीर इतना सुख वहनकर सकेगा नहीं। मानों मेरा मन इस सुख समुद्रमें गलके मिल जायगा। किन्तु मिलता कहाँ? इस आल्हादमयको लेकर, इस प्रेममयको लेकर, इस दिव्य

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

चेतनाको लेकर चली मेरी साधना। जहाँ कहीं जाता—गृहमें, मन्दिरमें समुद्रतटमें उसी जगह अपने इस जीवनेश्वरको अपने साथ साथ देख पाता। मैं उसे भूलनेपर भी वह मुझे भुलता नहीं, मैं उसे छोड़ने चाहनेपर भी वह मुझे छोड़ता नहीं। वह तो है महाप्रेमिक, प्रेममें आत्मभोला। ये प्रेममय जिसको एक बार वरण करते, जिसको एक बार स्पर्श करते उसको क्षणकालके लिये भी अंगच्युत करते नहीं। आह! कैसा आकर्षण है उनका, चुम्बक जैसे लोहाको आकर्षणकर लेता है, मध्याकर्षण जैसे सेव फलको आकर्षणकर लेता उसकी अपेक्षा शत सहस्रगुण अधिक आकर्षण है उस प्रेममय चिन्मयका। वे तो प्रेमकी खान हैं, आल्हादकी खान हैं। प्रेम ही उनका स्वरूप, आनन्द ही उनका अवयव, चैतन्य ही उनका शरीर। वे सदा जाग्रत, सदा ज्ञानमय, सदा उज्ज्वल, निर्मल, निष्कम्प। वे चल भी अचल भी, निकट तथा दूर भी हैं।

"तदेजति तन्नेजति तद्दूरे तदन्तिके।
तदन्तरस्य सर्वस्य तदु सर्वस्यास्य बाह्यतः ॥"

अन्तर भरने लगा प्रेममयके दिव्य स्पर्शसे। उनके दुलार चुम्बन आलिंगनसे विवश हो जाता। विवश होते देह, नेत्रकी दृष्टि, चरणकी गति। भरे हैं सब, भरे हैं सब। शरीरके अणु परमाणुमें भरे हैं वे ही प्रेममय। भरे हैं आकाश, वायु, मेरे इन्द्रिय वर्ग, मन और प्राण। हिलने डोलनेका तनिक सा अवकाश भी नहीं। आँख खोलने पर उन्हें देखता, हाथ बढ़ानेपर उनको धर लेता, चलने

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

जानेपर उन्हींमें चलता। उन्होंने तो सब ओरसे घेर रखा है। वे तो हमारेमें अनुप्रविष्ट हो गये हैं। क्या ही आनन्दका खेल उनके साथ ! ऐसे साथी, बांधवको छोड़ कहाँ था मैं इतने दिन ? तुम्हारा जब मेरा इतना स्नेह था तो क्यों ढकेल रखे थे विदेशमें, विपाकमें, महा हलाहल विषमें ? तुमतो अमृतमय हो तब किस कौशलसे तुम उस हलाहलकी सृष्टि करते ? कहाँ पाते उस हलाहलके उपकरण ? किस तरह ढाँप लेते तुम अपने अंगको ? इतने विराट् अंगको ढाँपने के लिये कहाँ पाते माया वस्त्र ? आश्चर्य तुम, आश्चर्य तुम्हारी यह विश्व लीला एवं आश्चर्य मेरा यह जीव बोध !

जो सब तुम्हारे अभ्यन्तर सम्यक् प्रकारसे अपनेको गँवाने चाहते नहीं, तुम्हारेमें विलीन होने चाहते नहीं वे रहें पड़े। मैं तो अब मिलन विरहकी चतुराई चाहता नहीं। सालोक्य चाहता नहीं, सारूप्य चाहता नहीं, चाहता हूँ सायुज्य। नदी जैसे समुद्रमें मिलती, जल जैसे दूधमें मिल जाता, बर्फ गलगर जैसे जल होता, जलने वाली वस्तु जैसे आगमें दग्ध होती, मैं ठीक उसी तरह तुम्हारे अभ्यन्तर सम्यक् रूपसे मिलने चाहता हूँ। किन्तु मिलता कहाँ ? अनेक जन्म जीवत्वका बोझ जैसे वहन किया है उसी तरह और भी प्राय अनेक जन्म घूमना पड़ेगा तुम्हारे इस प्रेमके रंगमंचपर अभिनय करनेके लिये।

हाट बाजार करना, रसोई बनाना, स्नान भोजन करना इत्यादि काम भी प्रतिबंधक रूप मालूम होने लगे। केवल गभीर भावसे उनको लेकर ही रहना अच्छा लगता। इच्छा होता कि

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

दिनरात उनको लेकर ही रहूँ। एक वेला उदरपूर्त्तिके लिये रसोईं बनाता दूसरी वेला सतुआ वा चीउड़ा खाकर दिन काटता। मनमें विचारता कि रसोई करने जानेपर वह प्रेमकी गभीरता कम हो जायगी। प्रेममयके घने स्पर्शसे वंचित हो जाऊँगा इस भावनासे भी कष्ट वोध होता। किन्तु शरीरके ऊपर जो प्रकृतिके विधान हैं उसे तो वह छोड़ती नहीं। भावकी गभीरता तनिकसी कमनेपर समय-समयमें अनुभव करता कि क्षुधाकी ज्वालासे शरीर दुर्बल होता जा रहा था। तृषासे कंठ सूख रहा था। इस शरीरको स्नान नहीं करानेके कारण मस्तिष्क गरम होता जाता। बहुत अड़चन मालूम होती थी। किसी-किसी दिन क्षुधा तृषाकी उपेक्षा कर जाता, किन्तु अज्ञात रूपसे शरीर अत्यन्त अवसन्न होता जाता रहा। धारणावती मेघाको खो जाता। मेधाके विना प्रज्ञाको धारण कर रखी नहीं जा सकती। मस्तिष्क तथा शरीर दुर्बल होनेसे मेधा भी दुर्बल हो जाती इसीसे भूख प्यासके लगनेपर उस प्रेममयको कहना पड़ता था—तिष्ठ-तिष्ठ, अजी थोड़ी देर ठहरो तुम्हारे भोगायतन इस शरीरको तुम्हारे प्रेमको वहन करने योग्य कर लूँ। इन्द्रिय सुखके लिये आहार करूँगा नहीं, जलपान करूँगा नहीं। तुम्हारे ही प्रेमको वहन करनेके अभिप्रायसे इन देह, इन्द्रियों एवं मनको जरा सुस्थ कर लेता हूँ।

यह देख चुका हूँ कि शरीरके ऊपर अधिक उत्पीड़न करनेसे शरीर अस्वस्थ हो जाता है, जिससे तपस्यामें विघ्न होता है। गीतामें पढ़ा है—

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

नात्यश्नतस्तु योगोऽस्ति नचैकान्तमनश्नतः।
न चाति स्वप्नशीलस्य जाग्रतोनैव चार्जुन॥

अतिशय भोजन करने वालेकी योगसाधना होती नहीं निराहारीकी भी साधना नहीं होती। अत्यन्त निद्रालुकी योग साधना होती नहीं एवं अनिद्राके अभ्यासीकी भी योग साधना नहीं होती।

युक्ताहार विहारस्य युक्तचेष्टस्य कर्मसु।
युक्त स्वप्नावबोधस्य योगो भवति दुःखहा॥

परिमित आहार तथा विहार जो करते, नियमित भावसे जो कर्म करते और जो परिमित निद्रा तथा जागरणमें अभ्यस्त रहते उनके ही योग सर्वदुःख नाशक होते।

खाद्यका संग्रह करने जानेपर जैसे योगकी अवस्था नष्ट होती है वैसे ही निराहार रहकर भी दुर्बल मस्तिष्क लेकर योगयुक्त हुआ जाता नहीं। अधिक दिन निराहार रहनेसे शरीरमें नाना व्याधियोंकी उत्पत्ति होती। व्याधिस्थ शरीरमें प्रेममयका स्पर्श गभीर भावसे मिलता नहीं। इसीसे इच्छा नहीं रहनेपर भी किसी-किसी दिन प्रेममयको बोलना पड़ता था—तिष्ठ, तिष्ठ, अजी तुम थोड़ी देरके लिये ठहर जाओ, तुम्हारे ही लीला—निकेतन इस शरीरको तुम्हारी लीलाके उपयुक्तकर लेता हूँ।

देह मन एवं इन्द्रियाँ प्रकृतिके अधीन हैं। प्राकृतिक उपादानसे ही ये संघटित हैं। इसी कारण प्राकृतिक विधान जो सब हैं,

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

यथा—स्नान भोजन इत्यादि उनका सम्पादन ठीक समयसे नहीं करने पर प्राकृतिक निर्यातनसे शरीर असुस्थ हो जाता है। अन्तर हुआ उनके प्रेमका निकेतन। अन्तरके साथ है देहका निकट सम्बन्ध। देह असुस्थ होनेसे अन्तर भी उस प्रेमका भार वहन कर सकता नहीं। अथच प्रेममयका स्पर्श जब प्राप्त होता तब उनको छोड़नेकी बिलकुल इच्छा होती नहीं। अन्तर्जगत् एवं प्राकृतिक जगत्के ये द्वन्द देह त्यागके पूर्व पर्यन्त चलते ही रहते हैं।

श्री श्रीठाकुर उन दिनों दाक्षिणात्य तीर्थ दर्शनके लिये जानेवाले थे। मेरा पता—ठिकाना वे नहीं जानते, मैं भी उनका पता नहीं जानता था, इसीसे उनके साथ पत्राचार नहीं था। खोज खबर लेनेवाला दूसरा कोई था नहीं। मैं तो गृह हीन था। मैं बास्तविक अपनेको प्राप्त करूँगा यह विचार कर स्वजनको त्याग दिया था, इसीसे पत्रका आदान प्रदान बहुत दिन तक किसीसे रह पाया नहीं। हाथमें जो समान्य कुछ पैसे थे वे खर्च हो चुके थे। दो पहरके समय साथमें जो सत्तू था वह खा लिया। रातके लिये आश्रमके भद्र लोक मेरी परिस्थितिको समझ अपनी परिचित दूकान से उधारी सामान लेनेकी व्यवस्था कर देंगे ऐसा कहे। मैं किन्तु विनीत भावसे निवेदन किया कि देह धारणके लिये मैं कर्जा नहीं करूँगा। ऋण चुकानेका कोई उपाय भी हमें नहीं। जिनकी पताका को लक्ष्यकर सब छोड़कर आया हूँ वे यदि मुझे इस जगत्में रखनेका प्रयोजन समझें तब वेही मेरी व्यवस्था भी करेंगे। इस पार्थिव संसारमें देख पाता कि पिता माता कितना कष्ट उठाकर

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

कितनी लांछना अपमान सहकर कितनी चोरी डकैती भी कर अपने सन्तानका प्रतिपालन करते हैं। मेरी विश्वेश्वरी जननी मुझे निश्चय ही प्रतिपालन करेंगी। इस बार मेरे जीवनकी गाढ़ी परीक्षा है। आश्रमके भजे सानुपको और भी कहा कि आपके आश्रमका नियम अर्थात् भूखा रहके इस आश्रममें कोई रहे नहीं—इस नियमका भी उल्लंघन करूँगा नहीं। आगामी २४ घंटेके भीतर श्रीजगन्नाथजी यदि कोई व्यवस्था नहीं करेंगे तो मैं समुद्र तीरमें जाकर आश्रय लूँगा। रातमें वे मुझे कुछ खोई खानेको दिये। वे अपने दायित्व पर दूकानसे कुछ सामान ला देनेको तैयार हो गये किन्तु मैं विनीत भावसे उन्हें मना किया।

आज रसोई बनाने होगा नहीं क्यों कि घरमें कोई सामान नहीं। खानेके झंझटसे बच गया। धिक् निर्लज्ज जठर तुमको। मनुष्यके सबसे प्रधान दो शत्रु हैं—एक जठराग्नि दूसरा कामाग्नि। जठराग्निकी पूर्णाहुति कभी होती नहीं वैसे ही कामाग्निकी भी पूर्णाहुति नहीं होती है। मनुष्य निर्लज्ज होता पेटकी ज्वालासे तथा पशु होता कामके ताड़ना से। कामाग्निको बुताना संभव है किन्तु जठराग्नि, शरीर त्यागके पूर्व तक बुतने चाहता नहीं। आज जठराग्निको धिक्कार देकर अपने चिन्मय विभुके ध्यानमें निमग्न हो गया।

'तेषां नित्याभियुक्तानां योगक्षेमं वहाम्यहम्।' तुममें युक्त रहनेसे तुम्हीं सब भार वहन करते। यही तो तुम्हारी प्रतिज्ञा है, तो उसी प्रतिज्ञाकी आज परीक्षा होगी। 'आजा माँ साधन समरमें, देखूँ

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

माता हारती कि पुत्र हारता है। विश्वको प्रसव कर उसका पालन करेगी नहीं ? तुमने प्रतिज्ञा की है अतः दूसरे किसीका पालन नहीं करनेपर भी तुझमें जो युक्त रहेगा उसका पालन तू अवश्य करेगी। जो तुझमें युक्त रहता वह तेरा प्रियपात्र होता है। मैं जानता कि अभी तक भी मैं तुममें गंभीर भावसे युक्त नहीं हो सका हूँ, किन्तु युक्त बिलकुल हुआ ही नहीं, तुम्हारे लिये सब छोड़ बाहर निकला नहीं यह बात कोई शत्रु भी बोल सकेगा नहीं। अस्तु, छोड़ो अभी उस बातको। मैं सब बातोंको भूल उस विराट् विभुके अन्तर्गत त्रिपुटी भावसे अवस्थित रहता था। विशेष गंभीर भावसे ही आज मैं ध्यानमें निमग्न हो गया।

हठात् दरवाजेकी कड़ीमें वज्राघात जैसे जोरसे शब्द हुआ। मेरे शान्त भावमें एक शब्दकी तरंग उठी। सहसा निश्चय नहीं कर सका कि वह शब्द कैसे और कहाँसे आता था। मालूम हुआ कि कोई कड़ी खटखटा रहा था और किवाड़में धक्का दे रहा था। हाथ-पैर विवश हो गये थे, उठनेमें कष्ट होता था, तो भी उठा। दरवाजेको खोलनेपर देखा कि डाकिया (पोस्टमैन) के पोशाकमें सामने एक आदमी खड़ा था। पुलिस विभागके लोगोंको देखनेमें ही मैं विशेष अभ्यस्त था। अंग्रेज सरकार हमें भयकी दृष्टिसे देखती थी इसीसे गोयन्दा पुलिस सतत मेरी खोज लिया करती थी। कोई गोयन्दा पुलिस ही डाकपियनके वेशमें उपस्थित तो नहीं है ? अच्छी तरह निहारके देखा—वह पुलिस नहीं, डाक विभागका पियन था। वह मेरा नाम पूछा। नाम बोलनेपर वह एक मनीआर्डरका फारम

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

निकालकर कहा—आपके नामसे २५) रु० है। रुपये देकर डाकिया चल दिया। कृतज्ञताका आँसू आँखमें आ गया। हृदय विगलित हुआ। यह क्या आशीर्वाद, कैसी कृपा तुम्हारी! हाय, हमें लेकर कितने दाय तुम्हारे! अनन्त विश्वके पिता तुम, असंख्य जीव हैं तुम्हारे इस विश्वमें। उसीके अभ्यन्तर त्रसरेणुकी जैसी है मेरी यह जीव चेतना। क्षुद्रसे भी क्षुद्र मैं हूं। तो भी हाय, मेरे लिये कितना दाय है तुम्हारा हे प्रेममय पिता!

'अपनेसे भी होते तुम अपना, जिसके कोई नहीं उसके तुम अपना'। ये कितनी बातें बारंबार मनमें आती थीं। कृपाकी बात, स्नेहकी बात स्मरण कर बहुत देर तक अश्रुजलसे भीजता रहा।

बहुत दिनके लिये निर्लज्ज जठराग्निमें आहुति देनेकी व्यवस्था श्रीजगन्नाथजीने कर दी। उनको फिर अच्छी तरह देखनेके लिये समुद्रमें स्नानकर मन्दिरको चला। जो इस प्रकार भार लेते, इस प्रकार गंभीर भावसे प्यार करते उन्हें आज भर आँख देखूँगा। आज प्रत्येक मन्दिरमें कुछ-कुछ प्रणामी चढ़ाके विमला तथा लक्ष्मी माताओंको प्रणामकर कुछ प्रसाद लेकर उस आश्रम-डेरेपर लौट आया। आश्रमी मित्रको आज प्रसाद पानेका निमंत्रण किया। प्रसाद पाते समय वे मुझे सलाह दिये—रसोई करनेमें जब आपको असुविधा वा विरक्ति बोध होता तो एक प्रकारकी व्यवस्था करनेपर आप रसोईकी असुविधासे बच सकते हैं। पौष मासमें श्रीजगन्नाथजी-को भोग खूब शीघ्र-शीघ्र लगता है। महीने भरके लिये ५।६ रु० जमा कर देनेसे ही वहाँ प्रसाद पा सकते हैं। प्रत्येक दिन

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

श्रीजगन्नाथजीका दर्शन भी कर सकेंगे और लौटते समय टिफिन-केरियर (जलपानकी डिब्बी) में प्रसाद भरके ला सकते हैं। यह युक्ति अच्छी मालूम हुई।

अब एक नवीन समस्या उपस्थित हो गई। प्रत्येक दिन तो ठीक समयपर मन्दिर जा सकता नहीं। आश्रमसे मन्दिर एक मील-से अधिक दूर था। जिस दिन साधना जम जाती, भावकी गंभीरता आती उस दिन तो समयका भ्रूक्षेप रहता ही न था। और एक असुविधा यह हुई कि जिस दिन मन्दिरमें यात्री अधिक आते थे उस दिन प्रसादका दाम भी अधिक हो जाता था। पंडा लोग मेरा पावना प्रसाद अधिक दाम पानेपर विक्रीकर डालते थे। दूसरी बारके प्रसादके लिये एक या दो बजे तक प्रतीक्षा करनी पड़ती थी। पन्द्रह दिनके लिये ३) रु० जमा किया था, उतने दिन बीत जानेपर पुनः रसोई बनाकर खाना ही निश्चय किया। इससे कुछ स्वाधीनता रही। जिस दिन जब इच्छा होती रसोईकर लेता, नहीं तो किसी दिन निराहार, किसी दिन चीऊड़ा सतुआ केला इत्यादि खाकर दिन कट जाता था। बाहरका कोई उद्वेग न होनेपर भले शान्त मनसे ध्यान करनेका सुयोग लाभ किया।

पुरीमें व्याप्तिबोध सहज ही जग उठता। व्याप्तिबोधमें चिन्मय-बोध भी जागता, प्रेमकी बाढ़ अन्तरमें आ जाती। किन्तु ध्यान गभीर होता नहीं। इच्छा होती कि अतल तलमें और डूब जाऊँ, किन्तु डूब सकता नहीं। सभी चिन्मय बोध होता, किन्तु उस

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

चिन्मय सत्तामें सब मिलके एक हो जाता नहीं। वह वास्तविक शुद्ध अद्वैतकी अनुभूति नहीं, स्वगत भरे प्रतीति रहती एवं समय समयमें स्वगत भावके साथ स्वजाति बोध भी चित्तके सूक्ष्म स्तरमें रहता। वृत्तियाँ सब—अन्तरके भाव सब ठीक द्रष्टाके साथ मिलकर एक हो जाता नहीं। अखंड सत्ताके मध्य अनेक खंड खंड भावोंकी तरंग रहती। कभी ८।१० घंटा एक ही आसनसे बैठ ध्यान करता, कभी उदयसे अस्त तक बैठकर ध्यान करता कभी वा १८।२० घंटा तक एक आसनसे बैठकर ध्यान करता था। ध्यानकी गंभीर अवस्था सब समय रहती नहीं, तो भी उस विराट् चिन्मयके स्पर्शमात्रको बिलकुल भूल जाता नहीं। अधिक देर ध्यान करनेपर मस्तिष्क कभी काल दुर्बल बोध होता था। ध्यानसे उठकर आनेके बाद शरीर भी कभी-कभी क्षुधा तृषाके कारणसे दुर्बल बोध होता था। अनेक समय चीऊड़ेका जल खाकर क्षुधाकी निवृत्ति करता, पीछे रसोई बनाकर भोजन करता था।

सदा विचार करता कि ठीक समयपर स्नान भोजन कर एवं पूरे नियमसे साधन भजनकर शरीरको कष्ट नहीं दूँगा। किन्तु दिव्य जगत्का प्रलुब्धकर-आकर्षण ऐसा तन्मय कर देता कि आहार-विहारका ज्ञान ही नहीं रहता था। तन मन प्राणमें मानों अमृतकी झरना प्रवाहित होती रहती थी। जब ध्यानकी गंभीरता अतिक्रम कर जाती तभी समयकी बात याद आती थी। लगातार आठ दश घंटा तक ध्यानमें बैठे रहनेपर भी मनमें होता मानों दो-एक घंटा ही ध्यान किया गया है।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

समुद्रमें जिस दिन ढेऊका गर्जन कम रहता वा बतास कम रहता तो उस दिन समुद्र तटमें हो बैठकर ध्यान करता था। ढेऊका शब्द गभीर साधनाका प्रतिबन्धक होता, प्रबल बतासमें बैठनेपर भी गभीर ध्यान हो पाता नहीं। इसीसे बीच-बीचमें किवाड़ जंगलाओंको बन्दकर बैठके ध्यान करता था। विराट् सत्ताको लेकर ही ध्यान होता। अब सत्ताके ऊपर नाम रूपको लेकर विचित्रताका खेल कम ही होता। तैलधारावत् निरवच्छिन्न भावसे प्रत्ययका प्रवाह चलता रहता। प्रत्यय ही—बोध ही कभी शब्द कभी भावके आकारमें विराट्सत्ताके मध्य नाना भावसे उद्भासित हो जाता।

भाव, भाषा और रूप—ये तीन हुए बोधकी भंगिना (क्रम)। पहले अन्तरमें भाव रूपसे बोध उद्गत होता, भाषा उसको प्रकाशित करती, अन्तमें वह रूपमें परिणत होता है। जलकी पिपासा होनेपर प्रथम प्यासका भाव अन्तरमें उत्पन्न होता। उसके निरावरणके लिये जल शब्दका उच्चारण करते, पीछे वास्तविक जल पाते हैं। बाहरमें ऐसा कोई रूप नहीं, अन्तरमें ऐसा कोई शब्द नहीं जो पहले भाव रूपसे अन्तरमें उदित नहीं होता है। अन्तर देशमें जितने दिन दृष्टि नहीं पड़ती उतने दिन मनमें होता कि रूपके साथ शब्द तथा भावका कोई सम्बन्ध ही नहीं। अन्तर्जगत्में अवस्थित होनेसे अर्थात् विराट् चिन्मय सत्तामें अवस्थित होनेपर उस भाव तथा शब्दकी गति परिलक्षित होती है। कितनी बातें, कितने भावोंका आलोड़न होता इस अन्तर राज्यमें। इस भाव राज्यमें सत्, असत्, सु, कु, दोनों प्रकारके स्पन्दन हुए करते हैं। अनेक समय विपर्यय

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

तथा विकल्प भावके भी उदय होते। भाव उत्पन्न होते ही मनके साथ मिल जाता है, इसीसे कौन मनका वा कौन हृदयका भाव है इसको विलगाना कठिन होता है। अन्तः करण अतिशय निर्मल तथा सात्त्विक होनेसे यह भेद पकड़ा जाता द्रष्टा रूपसे भाव और शब्दकी गति विधिको लक्ष्य करते-करते निर्मल बोधमें अवस्थानका सामर्थ्य प्राप्त होता।

जो कुछ हो, जो नाम रूपमय विश्व चिन्मय सत्तासे चित् धर्मसे धर्मी होकर अनेक आकारसे सत्ताके ऊपर अवस्थान करता था वह नामरूप अब साधनाकी गभीर अवस्थामें रहता नहीं। रूप रहता नहीं, रहता शब्द। पदार्थ रहता नहीं, रहता पदका अर्थ-शब्द। इस शब्दका द्रष्टा होकर निर्मल बोधमय क्षेत्रमें अव-स्थान करते करते पकड़े जाते भावके स्पन्दन सब। रूपकी अपेक्षा भावकी संख्या अधिक हैं। चित्त प्रथम उद्वेलित होता भावकी ही तरंगोंसे। इसी कारण भावका द्रष्टा जितना दिन नहीं हुआ जाता उतना दिन शब्दतरंग एवं रूपतरंगसे अव्याहति पानेका कोई उपाय नहीं है।

नेत्र खोलकर ही साधना करता तो भी कोई दृश्य देख पाता नहीं। मन तो अन्तर राज्यमें प्रविष्ट हो चुका था, इसीसे रूपोंकी तरंग तब चित्तमें आ नहीं सकती थी। तब शब्द और भावको लेकर ही अधिक समय ध्यानमें निमग्न रहनेकी चेष्टा करता था। यही हुआ वितर्कानुगत तथा विचारानुगत संप्रज्ञात योग। इस प्रकार

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

बोधमें अवस्थान करते-करते आती आनन्दानुगत तथा अस्मितानुगत संप्रज्ञात योगकी अवस्था ।

अन्तरके दिव्य राज्यमें बैठ उस पुरुषके साथ वार्त्तालाप होता इसी संप्रज्ञात योग द्वारा। किन्तु समस्या यह उपस्थित होती कि कौन अन्तरकी वाणी है वा कौन मनकी बात है उसका निर्णयकर लेना। मनकी बातें अनेक समय ऐसे छद्म वेशमें आतीं कि उनको उस समय मनके खेल बोलकर उपेक्षा करनेका साहस होता नहीं। मालूम होता कि यह दिव्य पुरुषकी ही दैववाणी है। इसीसे अनेक भूलभ्रान्ति आ पड़ती इस वितर्क तथा विचारानुगत संप्रज्ञात योगकी भूमिकामें भी। धीर एवं शान्त पदक्षेपसे इस भूमिकामें चलना होता है।

और एक विपद् यह होती कि संप्रज्ञात योगकी साधना कालमें अन्तरकी आसुरी वृत्तियाँ सुयोग पानेसे ही खूब प्रबल हो जातीं। योगमें जितनी देर आरूढ़ रहा जाता उतनी देर वृत्तियाँ नत हो के रहनेपर भी दिव्य भूमिसे उतर आनेसे अनेक समय प्रबल रूपसे आक्रमण करतीं। वे मानों घात लगाकर बैठी रहतीं आक्रमण करनेके लिये। ब्रह्मग्रन्थि भेदके पहले बाह्य जगत् ही विघ्न मालूम होता, सांसारिक आत्मीय स्वजनगण ही प्रधान अन्तराय मालूम होते थे एवं इनसे दूर रहनेकी इच्छा होती थी। उनसे कुछ दूर हट जानेसे बहुत कुछ सुविधा भी हो जाती इसमें सन्देह नहीं, किन्तु विष्णु ग्रन्थिका उत्पीड़न अन्तर देशमें अधिक होता है। वनके

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

बाघको हटा देना सहज है किन्तु मनके वाघको हटाना बहुत ही कठिन है। बाहरके दृश्य वा वाहरका जगत् बोध विष्णु ग्रन्थिके क्षेत्रमें अति क्षीण आकार मात्रसे रहता है। अन्तर जगत्का विप्लव स्पष्टरूपसे धराई पड़ता इसी प्राणमय क्षेत्र विष्णु ग्रन्थिके क्षेत्रमें। सभी प्राणवन्त अथ च अनुकूल वा प्रतिकूल, मित्र वा शत्रु दोनों ही यहाँ, विद्यमान रहते। देववृत्तियाँ अनुकूल वा मित्र भावापन्न, तथा आसुरी वृत्तियाँ प्रतिकूल वा शत्रु भावापन्न। जब जो वृत्ति आती वह अति प्रबल भावसे ही आती। विराट् चिन्मय बोधसे एवं चिन्मय बोधके साथ द्रष्टित्व भावसे कुछ नीचे उतरनेपर असद् वृत्तियाँ प्रवल भावसे आक्रमण करतीं। सद् वृत्तियाँ अर्थात् देववृत्तियाँ भी अनेक समय शत्रुकी नाईं आचरण करतीं। इसीसे कहा ज.ता कि इस विष्णु ग्रन्थिके क्षेत्रमें केवल आसुरी वृत्तियाँ ही शत्रु नहीं होती, देववृत्तियाँ भी किसी-किसी समय शत्रुकी जैसी आचरण करती हैं। विष्णुग्रन्थिके क्षेत्रमें साधना करते-करते यदि किसी साधककी मृत्यु हो तो वह स्वर्गादि लोकमें किसी श्रेष्ठ देवताका पद ग्रहण करता।

'ते पुण्यमासाद्य सुरेन्द्र लोकम्।
अश्नन्ति दिव्यान् दिवि देवभोगान्॥'

इसी कारण देवगण अपनी पदच्युतिके भयसे साधकके साथ शत्रुके सरीखे आचरण करते हैं। किन्तु जब देवगण समझ पाते कि यह तपस्वी स्वर्ग राज्य प्राप्तिके लिये तपस्या करता नहीं वह मुक्ति लाभके लिये तपस्या करता तब शत्रुभाव त्याग कर देते। ग्रहोंका

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

उत्पीड़न इस विष्णुग्रन्थिमें विशेषरूपसे अनुभव होता नहीं। ब्रह्म-ग्रन्थिके साधना कालमें ही ग्रहोंका उत्पीड़न विशेष रूपसे अनुभव होता है। इसीसे ऋषिगण कहे हैं—साधनाका पथ सुगम नहीं है, दुर्गम है।

'क्षुरस्यधारा निशिता दुरत्यया।
दुर्गम पथस्तत् कवयो वदन्ति॥'

क्षुरके तीखे धारके समान यह पथ अति दुर्गम है। गीतामें श्रीकृष्ण भगवान कहे हैं—

मनुष्याणां सहस्रेषु कश्चित् यतति सिद्धये।
यततामपि सिद्धानां कश्चिन्मां वेत्ति तत्वतः॥'

हजारों मनुष्योंमें कदाचित् कोई आत्मज्ञान लाभके लिये यत्नवान् होता है। और इस प्रकार यत्नशील साधकोंमें भी कदाचित् कोई मुझे वास्तव (आत्मा) रूपसे जान पाता है—इसीसे ब्रह्मज्ञान अतिशय दुर्लभ है।

विष्णु ग्रन्थिके क्षेत्रमें ही तत्वकी साधना अधिक होती। यहाँ जैसे स्थूल जगत् नहीं रहता वैसे ही स्थूल मूर्ति वा अवयव विशिष्ट देवदेवियाँ भी रहती नहीं। यहाँ होती तत्वकी साधना, विज्ञानमय क्षेत्रमें होती तत्की साधना। तत्वको आयत्तकर तब तत्में पहुँचना होता है। चित्त बुद्धि मन अहंकार इन चारों अन्तर्वृत्तियाँ एवं पंचज्ञानेन्द्रिय तथा पंचतन्मात्राओंकी साधना होती विष्णु ग्रन्थि

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

क्षेत्रमें। अष्ट प्रकृतिकी साधना विषयमें जो गीतामें उल्लेख है वह भी इसी प्राणमय क्षेत्रमें होती है।

'भूमिरापोऽनलो वायुः खंमनो बुद्धिरेव च।
अहंकार इतीयं मे भिन्ना प्राकृतिरष्टधा ॥'

इसके परे होती परा प्रकृतिकी साधना विज्ञानमय क्षेत्रमें। साधकोंकी रुचिके भेदसे शास्त्रकार गण विभिन्न भावोंसे तत्वको समझनेकी चेष्टा किये हैं। वास्तविक रूपमें तत्व विभिन्न नहीं है। पाँच तन्मात्राओंके अतिरिक्त कोई तन्मात्रा नहीं है। पाँच ज्ञानेन्द्रियोंके अतिरिक्त और कोई ज्ञानेन्द्रिय नहीं है। पाँच कर्मेन्द्रियोंके अतिरिक्त दूसरा कोई कर्सेन्द्रिय नहीं है। पंचभूतके अतिरिक्त कोई भूत नहीं है। एकसे अधिक दो मन नहीं है। अहंकार (चिन्मय जीवबोध) एवं महत्तत्वको विलगकर देनेपर निर्विकल्पमें पहुँचनेका कोई रास्ता नहीं है। और त्रिगुण (सत्व, रज, तम) के अतिरिक्त कोई गुण नहीं है। यही हुई साधारण बात। इन्द्रियके साथ विषय वा तन्मात्राका जब संयोग होता, गुणके तारतम्यके अनुसार तब इन्द्रिय वर्ग उसी प्रकार धर्मको प्राप्त करता है। देव वा आसुर भाव गुणके ही तारतम्य अनुसार होता है।

लक्ष्य करना पड़ता है कि रजोगुण एवं तमोगुणके संयोगसे अन्तरकी वृत्तियाँ अन्तर राज्यमें किस प्रकारकी क्रिया करती हैं। सत्व मिश्रित रजोगुणका अथवा रजोगुण मिश्रित तमोगुणका प्रभाव इस विष्णुग्रन्थिके क्षेत्रमें ही विशेष रूपसे अनुभव होता है। इसी

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

कारण सात्त्विक परिवेश न होनेसे एवं सात्त्विक आहार नहीं करने से साधनाके पद पदमें बाधा पड़ती है। शरीर तथा मनमें अत्यधिक रजोगुण तथा तमोगुण रहनेसे अन्तरमें भी उन रजतमोगुणोंकी क्रिया होती रहती है। उसके साथ अन्तर भी यदि पवित्र न रहे एवं आहार भी सात्त्विक न हो तो साधनामें अग्रसर होना अतिशय कठिन होता है। यदि दीर्घ काल पवित्र परिवेशमें रहा जाय एवं सात्त्विक आहार ग्रहण किया जाय तो शरीर और मनके रजोगुण तथा तमोगुण बहुतायतसे नष्ट हो जाते हैं। वास्तविक पक्षमें शरीर एवं मनके रजोतमोगुण नहीं कमनेसे ब्रह्मग्रन्थिका भेद होना दुरूह होता। यदि वा ब्रह्मग्रन्थिका भदे हो जाय तो भी ब्रह्मग्रन्थिकी साधनाके उच्चस्तरमें उस साधककी अवस्थिति होना केवल कठिन ही नहीं, असंभव कहा जा सकता है। विष्णुग्रन्थिका उच्चस्तर हुआ वितर्कानुगत तथा विचारानुगत संप्रज्ञात योग। देह और मन शुद्ध रहनेपर इनको अवलंबनकर अन्तरमें जो भाषा तथा भाव उदय होते वे भी शुद्ध हो जाते अर्थात् देवभावापन्न हो जाते हैं। देह तामसिक रहनेपर अन्तरमें उदय होते तामसिक भावापन्न आसुरी वृत्ति सब। इसीसे ऋषि गण प्रार्थना किया करते—'ॐ मनो वाक् काय कर्माणिमें शुध्यन्ताम्'। मेरे मन वाक्य शरीरादि शुद्ध हों। और भी बोलते—'त्वक् चर्म मांसरुधिरमेदो मज्जास्नायवोऽस्थीनि में शुध्यन्ताम्।' केवल मन तथा वाक्यादि ही नहीं, चाम, हाड़ मांस रक्तादि भी पवित्र हों। बाहरके साथ भीतरका एवं भीतरके साथ बाहरका एक घनिष्ट सम्बन्ध है। हमलोग बाहर जगत्में विचरणकर

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

अत्यन्त रजतमोगुणपन्न हो जाते हैं। वाहर जगत्की अपेक्षा अन्तर जगत् सात्विक भावसे विशेष पूर्ण रहता है। अशुद्ध आधार अर्थात देह और मन लेकर इस अन्तर जगत्में प्रवेश करना वहुत ही कठिन है। शुद्ध आधार न होनेसे अनुकूल देव भाव नहीं आकर आसुरी भाव ही अधिकतर आते। साधनाके ऊर्ध्व जगत्से नीचे उतार देता है।

एक दिन वा एक वर्षमें ही ये देह तथा मन सात्विक होते नहीं। जिनके माता पिता सात्विक भावापन्न रहते उनके देह मनमें सहज ही सात्विक भाव आता है। जिनके माता पिता अत्यधिक राजसिक तथा तामसिक भावापन्न होते एवं वाल्यकालसे जो अच्छे परिवेशमें लालित पालित होते नहीं उनमें देव भाव आनेमें देर लगती। राक्षसी और आसुरी भाव ही अधिक आते। कुछ दिन साधनाकर ऐसे ही लोग संसारमें प्रतिष्ठा लाभके लिये चेष्टा करते और अनेक प्रकारकी सिद्धाई (करामात) दिखाने जानेपर अपने भी हीन होते एवं साधना जगत्में कलंक लेपन करते हैं। अस्तु, अब रहे यह बात।

पुरीमें अनुकूल परिवेश पाकर वितर्कानुगत तथा विचारानुगत संप्रज्ञात योगकी साधना करनेका विशेष सुयोग मिला। भावकी साधना, प्राणकी साधना पुरीधाममें खूब अच्छी होती थी। विज्ञान-की साधना अच्छी होती विंध्याचलमें वा हिमालयकी तराई स्थित हरिद्वार, हृषीकेश, लछुमन भूला प्रभृति स्थानोंमें; यह बात कुछ

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

काल पीछे समझमें आया था। कभी अन्तरको बिलकुल शून्य (खाली) कर अन्तरके गुप्त कक्ष होकर क्या भाव वा भाषा उद्भासित होती उसको लक्ष्य करता था, एवं उन भाव भाषाओंको अवलंबनकर विराट् चिन्मय सत्तामें भावका प्रच्छर्दन तथा विधारण करनेकी चेष्टा करता था। कभी चिन्मय बोधमें अवस्थानकर अन्तरमें जो वृत्ति वा भाव आता था उसके द्रष्टारूपसे अवस्थित होता था। प्रच्छर्दन एवं विधारणके द्वारा चंचल भाव सब प्रभाहीन हो जाते। केवल द्रष्टारूपमें रहनेसे वृत्तियोंके हीनप्रभ होनेमें अधिक समय लगता है। इसीसे चिन्मय क्षेत्रमें अवस्थित होनेपर भी जो सब भाव अन्तरमें आते उनको समय-समयपर अवलंबनकर प्राणायाम अर्थात प्रच्छर्दन विधारण करता था। यह किन्तु श्वासरोध करने जैसा वाह्य हठ प्रणायाम नहीं है। भावको चिन्मय बोधके साथ एक बार बिखेर देना पुनः केन्द्रमें आकर्षणकर लेना यही हुआ अन्तर देशका प्राणायाम। विष्णुग्रथिके संधान नहीं पानेपर इस प्रकारका प्राणायाम करना संभव नहीं है।

कोलाहल रहित निर्जन स्थान ही इस प्रकार साधनाका अनुकूल स्थान होता है। किसी पक्षीका शब्द भी तब अच्छा नहीं लगता था। शीतकालके अधिकांश समयमें समुद्र भी शान्त ही रहता था तो भी उसका गर्जन जिससे कानमें नहीं पड़े उसके लिये किवाड़ जंगलाको बन्दकर घरमें बैठता था। घरमें शरीर बन्द रहनेपर भी अन्तर्जगत्का व्याप्ति बोधमें उस रुद्ध कक्षके प्राचीरोंसे कोई भी अन्तराय होता नहीं था। कारण यह कि मेरा शरीर एक विन्दुके

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

समान बोधकी विराट् परिधिके मध्य तब अवस्थान करता था। घर बाड़ी तथा समुद्रके मध्य बिन्दुकी नाईं तब अवस्थान करता था। व्यष्टि चिन्मय बोधकी एक परिधि रहनेपर भी समष्टि चिन्मय बोधकी कोई परिधि नहीं। व्यष्टि चिन्मय बोधमें अवस्थान करते-करते समष्टि चिन्मय बोधकी भी अनुभूति क्षण-क्षणमें जगती इस विष्णुग्रन्थिके साधनकालमें। जीव चेतनासे हमलोग पहले जागते विश्व चेतनामें, विश्व चेतनासे जगते ईश्वर चेतनामें। ईश्वर चेतनाकी भी परिसमाप्ति होती ब्रह्मकी निर्गुण सत्ताकी अनुभूतिसे।

कोई-कोई योगी ईश्वरको स्वीकार नहीं करते, किन्तु हमलोग ईश्वरको स्वीकारकर साधना क्षेत्रमें अधिक लाभवान ही हुए हैं वा होते हैं। ईश्वरके ऊपर निर्भर रहके भक्ति भावसे साधना करनेसे अनेक विघ्न तथा विपत्तिसे परित्राण पाया जाता है। हृदयमें भक्ति-भाव रहनेसे भीतर सरस मालूम पड़ता है। मरुभूमि जैसे शुष्क पथमें चलना वास्तवमें बहुत क्लेश कारक होता है। ईश्वर प्रेममय दयामय हैं। उनपर निर्भर रहके चलनेसे, आश्रय आश्रित भाव लेकर चल सकनेसे अति दुर्गम पथमें भी हताश होना नहीं पड़ता है। समष्टि चेतनाको हमलोग ईश्वर कहते हैं। अनन्त जीवोंकी अनन्त व्यष्टि चेतनाको युगपत् धारणकर रखे हैं वे ही ईश्वर। ईश्वरके क्लेश, कर्म, विपाक तथा आशय नहीं हैं। व्यष्टि वा जीव चेतनामें संप्रज्ञात योगकी शेष अवस्था पर्यन्त क्लेश रहता है। अविद्या, अस्मिता, राग, द्वेष एवं अभिनिवेश (मृत्युका भय) ये पाँच क्लेश हैं। अपनी सत्ताकी विलुप्तिकी आशंका दूर होती चिन्मय बोधमें

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

गंभीर भावसे अवस्थानकर सकनेसे। और उसीसे राग और द्वेष भी कम हो जाते हैं। रह जाती अविद्या तथा अस्मिता, जिनकी विलुप्ति होती निर्विकल्प भूमिकामें अवस्थान करनेपर। ईश्वरकी कृपासे ही सविकल्पसे निर्विकल्पमें सुगमतासे पहुँचा जाता है। इस अविद्या तथा अस्मिताको ही शुंभ निशुंभकी आख्या दी गई है श्रीश्रीचंडी माहात्म्यमें। अस्तु, उस बातका अभी प्रयोजन नहीं।

कलम्बस जैसे अमरिकाके अविष्कार निमित्त अनिर्दिष्ट पथसे यात्रा किये थे, भगवानके पथमें हम लोगोंकी यात्रा ठीक उसी प्रकारकी नहीं है। पूर्वाचार्य गण इस पथसे यात्राकर अपने पदचिह्न को रख गये हैं। ईश्वरपर निर्भर होनेसे हम लोग ईश्वरसे शक्ति एवं प्रेरणा लाभ करते। पथमें पाता ऋषियोंके पदचिह्न, अन्तरमें पाता ईश्वरकी प्रेरणा एवं आशीर्वाद। इसीसे अपने पथमें जितनाही अग्रसर होता उतना ही सुगम मालूम पड़ता है। बाधा और विपत्ति तो है ही तो भी शरीर और मनमें जब सात्विक भाव रहता तब हम प्रेममय ईश्वरका स्पर्श पाकर इस पथसे उड़ चलते हैं। भक्ति तथा श्रद्धा दिनानुदिन प्रगाढ़ होती रहती। निन्दा वा स्तुतिको निरवछिन्न रूपसे उपेक्षाकर चलते रहते।

पुरषोत्तमको अर्थात् जगन्नाथ देवको ईश्वरका प्रतीक मानकर बीच बीचमें दर्शन करने जाता था। अन्तरमें उससे प्रेरणा ही प्राप्त करता था। जगन्नाथ जी की ओर हेरकर अनुभव करता कि चैतन्य ही घन होकर श्रीजगन्नाथ मूर्त्ति धारण किये हैं। जगन्नाथ चैतन्य

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

घन विग्रह हैं। चैतन्य बोध गभीर एवं व्यापक होनेपर जगन्नाथकी मूर्त्ति गलकर उसी चैतन्यघनके साथ मिलके एक विराट् चिमन्य सत्तावोध जाग उठता था। विराट् चिन्मय सत्ताके मध्य क्षणहीमें जगन्नाथ मिलके विराट् हो जाते थे पुनः त्तणहीमें विराट् सत्ताके ऊपर चैतन्यघन विग्रह रूपसे अवस्थान करते थे। अपूर्व उनके ये आनन्दके खेल। किसी किसी दिन तो जगन्नाथको छोड़कर आनेकी इच्छा ही नहीं होती थी। किन्तु मन्दिरमें यात्रियोंकी भीड़के कारण अनेक वाधा उत्पन्न होती थी।

आज पौष मासकी संक्रान्ति होनेसे सवेरे उठ ब्राह्ममुहूर्त्तमें नीलाम्वुधिमें अवगाहन स्नान किया। 'आपः शुंद्धन्तु मैनसः, उशतीरिव मातरः' प्रभृति मंत्र सव पुनः पुनः पाठ करता था। 'आप्यायन्तु ममां गानि वाक् प्राणश्चत्तुः श्रोत्रम्' इन मंत्रोंको भी बार बार पाठ करता था। भगवानकी विगलित करुणा मूर्त्ति तुम स्नेह शीला जननीकी नाई मेरे तनको शुद्ध करो। तुम्हारी विगलित करुणामूर्त्तिमें अवगाहनकर मेरे कंठ, प्राण, चत्तु, आदि शुद्ध हों। करुणाघन विग्रह हैं श्री जकन्नाथ और तुम हो करुणा विगलित रस समुद्र। मनमें होता था जैसे सव तीर्थोंके जल आके सम्मिलित हुए हैं इस नीलाम्वुराशिके वीचमें। लवण, इत्तु, सुरा, घृत दूध दही ये सभी मिल गये हैं इस विराट् सिन्धुमें। देहमें रहते सात रस, सिन्धुमें भी वे सात रस रहते हैं। विराट् सिन्धुके स्पर्शसे आज शुद्ध हो जाय यह रसनिर्मित त्तुद्र शरीर। त्तुद्रत्वका मोह दूर

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

हो जाय। इस प्रकार दिव्य भावसे अनुप्राणित हो समुद्रमें स्नान किया। उस समय समुद्र शान्त निस्तरंग था इसीसे निविष्ट चित्त से अवगाहन किया। सूर्यदेव तब तक भी उदित नहीं हुए थे किन्तु पूरब दिशामें लालिमा आ चुकी थी। इसीसे स्नानकर समुद्रतीर ही में सविताके अरुणोदयके प्रकाशमें बैठा था। तब मनमें महामंत्र गायत्रीका स्फुरण हुआ—'तत् सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि'। सविताके प्रकाश, क्रिया तथा स्थितिको मैं अपने अन्तरमें अनुभव करता हूँ। अध्यात्ममें जो ब्रह्म-सविताविश्वप्रसविता हैं वे ही अधिदैव में सूर्य—सविता हैं। ब्रह्मसे ही जगत्की उत्पत्ति, स्थिति तथा लय होता हैं; प्रकाश क्रिया तथा स्थिति होती है। ये प्रकाश, क्रिया तथा स्थिति धर्म अधिदैव सूर्यमें रहते हैं। अधिभूतमें वे ही अग्नि हैं। इसीसे सूर्यको अवलम्बनकर साधना करते हैं। और इसी कारण अग्निका आश्रयणकर हम आहुति प्रदान करते। आज मैं सूर्यके प्रकाशमें बैठ उनके रंगीनरागसे रंजित होके अपनी जीव चेतनाके बीच देखता था उत्पत्ति स्थिति लयकी तरंग भंगिमा। मन होकर कितने रूपसे उदय होता मेरी जीव चेतनामें यह सविता, प्राण होकर संभोग करता कितने विचित्र भोग समाग्रियोंको मेरा यह सविता। मेरी विलुप्ति संघटित होती मेरी जीव चेतनाके मध्य दिन रात कितने नामरूप तथा भावराशियोंके इस सविताकी ज्ञान मूर्त्तिके प्रकाशके साथ साथ। मनसे उत्पत्ति, प्राणसे संभोग ज्ञानसे परिसमाप्ति। उत्पत्तिकी साधना अनेक दिन यावत् कर चुका हूँ। इस जन्ममें उसकी समाप्ति संघटित हुई है। संभोग भी अनेक जन्म घूम घूमकर किया

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

है, किन्तु इस जन्ममें उसकी परिसमाप्तिका संघटन करना होगा। जो भाव तथा भाषा अव्यक्तकी कुक्षिसे मेरी जीव चेतनामें रात्रिन्दिव आ रही है उसे ज्ञान सूर्यके प्रकाशसे परिसमाप्ति करनी पड़ेगी।

ब्राह्ममुहूर्त्तमें सूर्यरूप ब्रह्मके प्रकाशका अवलंबनकर ध्यानमें निमग्न होने लगा। बाहरके विश्वबोध, सूर्यबोध, प्रकाश बोध धीरे धीरे विलुप्त होने लगा। अवस्थितिकी बात भूल गया। देहकी स्मृति भी विलुप्त होने लगी। मैं दिग् दिगन्त बिखर गया भाषाकी तरंग स्तब्ध हो गयी। भावकी तरंग निरुद्ध होने लगी। 'चिन्मयं व्यापितं सर्वं त्रैलोक्यं सचराचरम्' चर एवं अचर कोई भी वस्तु रह गई नहीं। त्रिलोककी स्मृति भी विलुप्त हो चली। चिन्मय अद्वैत विराट् सत्तामें जीवनके जो कुछ भी थे वे विलुप्त हो चले। भाषा नहीं, भाव नहीं। है केवल आनंदकी लहरी। है केवल अस्मि अस्मिकी प्रत्यय धारा। यह अस्मि-आनन्दमय-ल्हादमय। एक और भी ग्रन्थि छिन्न हो गई। 'नमस्ते चिते विश्वरूपात्मकाय' बोलते बोलते अपने विराट् चिन्मय रूपको प्रणाम किया।

पूण्य दिन उस पौष संक्रान्तिमें नीलाचलकी तीरभुक्त भूमिमें बैठकर मेरे जीवत्वकी और एक ग्रन्थि छिन्न हो गई। जब आसनसे उठा तब देख पाया कि पूर्वदिशामें जो सूर्य उदय हो रहा था वही सूर्य वैसा ही रंगीन रागसे रंजित होकर पश्चिम दिशामें समुद्रके गर्भमें अस्त हो रहा है। समयका ज्ञान बिलकुल ही न था। जब ध्यानसे व्युत्थित हुआ तब कुछ देरके लिये दिग्भ्रान्ति भी हुई थी।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

मनमें आया कि अभी प्रभात हुआ नहीं; उस पूर्व दिशामें ही मानों सूर्य उदित हो रहा है। पीछे समझ सका कि मेरी बायीं ओर सूर्य उदय हो रहा था अब दाहिनी ओर अस्त हो रहा है। तन मन प्राणमें आनन्दकी धारा बह रही थी। सहस्रारसे अदृश्यरूपसे अमृत-धारा क्षरित हो रही थी। इसीसे क्षुधा तृषाकी ज्वाला भी नहीं थी। मेरे विराट् अन्तर राज्यमें, मेरे ही दिव्य अन्तरमें सूर्य देव डूबे और हँस-हँसके चन्द्रमाका उदय हुआ। अनुभव किया—ज्योतिषां रविरंशुमान्, नक्षत्राणा महंशशी। मैं अपने सूर्य तथा चन्द्ररूपको प्रणाम किया। प्रणाम किया नीलाम्बुधिको, प्रभु जगन्नाथको, माता विमलाको तथा श्रीगुरुको। मैं अपने अनेक रूपोंको प्रणाम किया। बहुत देर तक रहा उस अनुभूतिका नशा। धीरे-धीरे शरीरको वहन-कर डेरेपर लौट आया। तब रात हो गई थी। कार्यालय (आफिस) से लौटकर आश्रमवासी वही बन्धु चुपके मेरे कमरेमें आकर पूछे—'आज रसोई भोजन किया या नहीं ?' मैं आन्तरीय भावको छिपा-कर उनको उत्तर दिया—'आज अब रसोई करनेकी इच्छा होती नहीं, घरमें चीऊड़ा, केला इत्यादि जो कुछ है उसीसे क्षुधाकी निवृत्ति करूँगा।' नौकर नटवरने आकर अपने मालिकसे बोला कि ये (मैं) आज दोपहरमें भी रसोई नहीं बनाये, समुद्रतीरमें बैठे रहे थे। आश्रमवासी बन्धु बोलने लगे—अब तो आपको अर्थका अभाव नहीं है तब वृथा शरीर को इस प्रकार कष्ट देनेसे क्या लाभ ? बहुत बोलना तब मुझे अच्छा नहीं लगता था, अथ च उनके ममता-पूर्ण व्यवहारकी भी उपेक्षा नहींकर सकता था। मैं धीरे-धीरे अपने

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

विस्तरेसे उठकर कुछ चीऊड़ा एक कटोरेमें भिजा लिया। केला और चीनी भी पासमें था यह देखकर वे समझ सके कि मुझे विशेष असुविधा नहीं होगी। इसीसे वे धीरे-धीरे खसक गये। भोजनकर मैं सो रहा। किन्तु मेरे शरीर मन प्राणमें इतना आनन्दका प्रवाह चल रहा था जिससे कि नींद फिर आई नहीं। निद्राके आनन्दकी अपेक्षा यह आनन्द शत सहस्रगुण अधिक तृप्तिदायक था। कवि-गुरुका गान याद पड़ा—

आमार चित्ते तोमार सृष्टिखानि,
रचिया तुलिछे विचित्र एक वाणी।
तारि साथे, प्रभु, मिलिया तोमार प्रीति,
जागाये तुलिछे आमार सकल गीति।
आपनारे तुमि देखिछ मधुर रसे,
आमार माझारे निजेरे करिया दान।
हे मोर देवता भरिया ए देह मन प्राण,
की अमृत चाह तुमि करिवारे पान।

श्री श्रीठाकुर दाक्षिणात्य जानेके पहले अपने एक शिष्य रिटायर्ड सब जज विरजा बाबूको मेरी जरा-सी खोज लेनेके लिये लिखे थे। विरजा बाबू उस समय पुरीमें थे। वे बहुत खोज करनेपर भी मुझको पाये नहीं। कारण यह कि मैं तब घरके बाहर कम ही निकलता था। कभी घूमने जानेपर भी मैं पश्चिमकी ओर घूमने जाता था, जिस ओर लोकजन नहीं रहते थे। मैं था स्वर्गद्वारकी पश्चिम ओर शेष प्रान्तमें; और वे थे कचहरीके समीपस्थ एक मकानमें। एक दिन

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

उनके किसी आदमीसे मन्दिरके फाटकपर भेंट हुई। वे हमें बूढ़े विरजा बाबूके पास ले गये। इसके कुछ ही दिनके बाद श्री श्रीठाकुर कलकत्ता लौट आकर विरजा बाबूसे मेरा पता ठिकाना पाके हमें सरस्वती पूजाके पूर्व ही कलकत्ता जानेके लिये लिखे। श्री श्रीदुर्गा पूजा तथा श्री श्रीसरस्वती पूजाके समय अधिकांश भक्तगण ही इकट्ठे होते थे कलकत्तेमें श्रीगुरुके चरण प्रान्तमें पुनराय नवीन प्रेरणा लाभकी आशासे।

कलकत्तेमें सरस्वती पूजा तथा पुनः करमाटाँड़।

बाल्यकालसे ही सरस्वती माताको अंजलि देते आया हूँ। दवात कलम पुस्तक श्रीसरस्वती माताकी मूर्त्तिके चरणके नीचे रखनेसे अधिक विद्या लाभ होती है ऐसी भावना रहती थी। सरस्वतीकी पूजा नहीं करनेसे परीक्षामें उत्तीर्ण होना कठिन होगा। अतएव विशेष भक्तिभावसे सवेरे उपवासकर पूजाके लिये फूल माला का संग्रह करता था। प्रचुर विल्वपत्र भी लाता था। अधिक वेलामें अँजलि प्रदान करनेपर भी क्षुधासे कातर नहीं होता था।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

सरस्वती केवल वर्ण परिचयकी ही देवी नहीं हैं। वे ब्रह्म विद्या प्रदायनि हैं, यह पहले पहल श्री श्रीब्रह्मर्षिके मुखसे ही सुन पाया था। सरस्वतीका वर्ण शुभ्र, उनका वस्त्र शुभ्र, वे स्वेत पद्म आसनपर विराज मान हैं। ब्रह्मा, विष्णु, महेश्वर उनकी आराधना करते हैं। सरस्वतीके ध्यानमें यही मंत्र पढ़ा। ब्रह्मा, विष्णु, महेश्वर जिनके ध्यानमें निमग्न रहते वे ही हुई साक्षात् ब्रह्मस्वरूपिणी। वे स्नेहसे द्रवित होकर विविध नाम तथा रूपसे विश्वसाजसे सज्जित हुई हैं। उनको देखनेपर जड़त्व दृष्टि दूर होती है। अर्थात् नाम तथा रूपके मध्य सर्वशुक्ला ब्रह्मविद्या स्वरूपिणी सरस्वतीको देखने से यह समग्र विश्व चेतना रूपसे प्रतीत होता है। सरस्वतीकी सत्व-गुणमयी होनेके कारण उनका वर्ण शुभ्र है। इस ब्रह्मस्वरूपिणी सरस्वतीकी आराधना करने पर हम लोगोंका अन्तर शुभ्र—सात्विक होगा। हम लोग ब्रह्म चेतनामें अवगाहनकर सकेंगे। जडत्व दृष्टि दूर नहीं होनेसे ब्रह्म चेतना जगती नहीं। इसीसे सरस्वतीके ध्यानमें ऋषि कहे हैं—'निःशेष जाड्यापहा'।

बच्चोंके जो वर्णपरिचयकी देवी हैं बड़ोंकी वही ब्रह्म चेतनाकी देवी हैं। वर्णपरिचय है ज्ञानका पूर्वाभास। वर्णका परिचय होनेपर ही भाषाका परिचय होता है। भाषाके परिचयसे ही विविध ज्ञान-तत्त्वका संग्रह होता है। शिशुओंके अन्तरमें अंकुररूपसे इस ज्ञान का उन्मेष होता है। और विज्ञोंके अन्तरमें ज्ञानकी परिपूर्णता प्राप्त होती है। हंस अर्थात् विज्ञव्यक्तिही देवीके वाहन हैं। हंस जैसे जलमिश्रित दूधसे दूधमात्र ग्रहणकर सकता, जलको त्यागकर देता,

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

इसी प्रकार विज्ञव्यक्ति भी व्रजचेतना मिश्रित जगत्को त्यागकर ब्रह्मचेतनाको ग्रहणकर लेते हैं। हम लोग भी श्री श्रीठाकुरके साथ पूजाकर उस ब्रह्मचेतनामें और भी गभीर भावसे अवगाहन करनेका सौभाग्य लाभ किये।

श्रीसरस्वती पूजाके पश्चात् श्रीश्रीठाकुरके संग करमाटाँड जाऊँगा यह निश्चय हुआ। परिवारका कोई जायगा नहीं इसलिये सांसारिक कोलाहल भी रहेगा नहीं। इस बार साथमें कौन-कौन गया था वह ठीक स्मरण नहीं है, डायरीमें भी लिखा नहीं है। आसनसोलके बाद ही भोर हो गई। सूर्य किरणके साथ-साथ बंगालकी शेष प्रान्त स्थित कठोर भूमि मानों हँस रही थी। धीरे-धीरे ट्रेन आकर प्रवेश किया सौंताल परगनेकी निर्जन कठोर भूमिमें। जन मानव विरल होनेपर भी जो जनताकी जननी हैं वही विश्वेश्वरी मानों आकाश वायुमें अपना चिन्मय अंग ढालकर अपनी स्निग्धतासे स्वयं विभोर होकर बैठ रही हैं। जैसे आशीर्वादकी डाली सजाकर हमलोगोंके शिरपर मंगल आशीर्वादकी वर्षा करेंगी इस अभिप्रायसे प्रतीक्षा करती हों। कैसी सरसता कैसी माधुरी आज विखरी हुई है इन विटपलता तथा मेघमुक्त आकाशमें। चिन्मयी जैसे ठौर-ठौरपर जमावट बाँध ली हैं। पहले जिसको जड़रूपसे देखता था अब वह चिन्मयका ही जमावटरूप अनुभव करने लगा। प्रत्येक धूलिकण कितना स्निग्ध, कितना निर्मल। प्रत्येक प्रस्तर खंड कितना स्निग्ध, कितना निर्मल। वृक्षकी शाखा प्रशाखा एवं प्रत्येक पल्लव कितना स्निग्ध, कितना निर्मल। रह-रहके स्मरण पड़ता था एक मंत्र—

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

'निःशेष जाड्यापहा'। कहाँ जड़, यह तो केवल प्राण, प्रेमसे अचेतन महान चैतन्य है। आशीर्वाद करते चिन्मय दृश्य सब, मानों सहस्त्र बाहु बढ़ाकर छातीमें टान लेने चाहते हों। मानों सहस्त्र आँख खोलकर प्रेमसे विभोर होकर देखते हों। मानों सहस्त्र मुखसे मस्तक ललाटका चुम्बन करते हों। करमाटांडमें उस चिर परिचित जननी-की गोदमें आकर बहुत ही तृप्तिका अनुभव करता था। अब अनु-सन्धान करता नहीं; अनुसन्धानकी दृष्टि चिरकालके लिये बन्द हो गई। वह चिर परिचित अब निकटसे भी निकट हैं। देहके अणु-अणुमें उनका स्पर्श पाता। मनके ताल-तालमें छन्द-छन्दमें केवल उन्हींको पाता, तो भी कुछ अतृप्ति ही रह जाती। उस अतृप्ति कंटकसे बोधित होकर बहुत वेदना पाता था। क्षण ही क्षण व्यथा जाग उठती थी। कहाँ ? मेरे उस प्रेममयको अपना सब कुछ अब तक दे सका नहीं। मेरा 'मैं' (अहं) रूप जंजाल तो निःशेष रूपसे मिट जाता नहीं।

गौरनिवासके प्रत्येक कमरे, बरामदे, आंगन, एवं चारों ओरके प्रान्तमें चिन्मयीको देखने लगा। सहज दृष्टिसे ही उनको देखता, पहले गाछ लता पत्ता फूल फल बाड़ी घर मनुष्य पंछी प्रभृति देखता पीछे ब्रह्म चेतनाको देखता था। अब प्रथम दृष्टिमें ही देख पाता चिन्मय विभुको, पीछे देखता उस चिन्मयके वक्षपर ठौर-ठौर जमावट बाँधकर खड़े हुए वृक्ष लता फल फूल बाड़ी घर पशु पक्षी तथा मनुष्य। आकाश चिन्मय वायु चिन्मय। हृदय और सर्वांगमें आनन्दका प्रवाह चलता रहता था। 'अत्यन्तं सुखमश्नुते।' चिन्मय

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

बोध जब कुछ हलका रहता था तब साधारण जीवनके अभ्यस्त कामोंको करनेमें उतनी असुविधा नहीं होती थी। भाव गंभीर हो जानेसे अभ्यस्त कामोंको करनेकी इच्छा नहीं होती थी। तब आती वितर्कानुगत एवं विचारानुगत संप्रज्ञात योगकी अवस्था। क्रमशः आती आनन्दानुगत एवं अस्मितानुगत संप्रज्ञात योगकी दिव्य अनुभूति।

वैशाख मासमें श्री श्रीठाकुर अपने स्थान नवग्राम (जिला बरिसाल) जायँगे ऐसी बात हुई। किसी-किसी कौलिक शिष्यके भी घर जायँगे। साथमें पाँच सात जन जायँगे। मैं, असर, राजेन तथा एक और भी व्यक्ति करमाटाँडमें ही रहेंगे ऐसा स्थिर हुआ। पुस्तक विक्रीकर हमलोगोंका खर्च चलाना होगा। पुस्तक वेचनेकी चेष्टा असर करने लगा। कभी स्टेशन जाकर प्रत्येक ट्रेनमें विक्री करनेकी चेष्टा की। गाड़ी तो मात्र दो मिनट ठहरती थी। सामान्य कुछ विक्री होनेपर भी खर्च चलानेके लिये यथेष्ट नहीं था। दोपहरमें डूमरका झोल और भात एवं रातमें रोटी और गुड़ आहार करते थे। क्रमशः ऐसी अवस्था हुई कि घरमें आटा भी नहीं रही। तीन चार दिन तो गेहूँकी भूसी अर्थात् चोकरकी रोटी बनाकर जठराग्नि-को देने पड़े। किन्तु इससे भी कोई विचलित नहीं हुए। सुना था कि श्रीरामकृष्ण देवके भक्तगण भी किसी समयमें अशेष कष्ट भोग किये थे। शरीरके खाद्यका अभाव होनेपर भी मन एवं प्राणके खाद्यका अभाव नहीं था। परन्तु अल्पाहार प्रयुक्त शरीर अवसन्न होने लगा। दुर्वलताके कारण साधनाकी उच्च भूमिकामें अवस्थित होना क्लिष्टकर बोध होता था।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

दो महीनेके भीतर ही श्री श्रीठाकुर लौटकर चले आये। वे दो व्यक्ति साधु भी आये, एवं और भी दो एक व्यक्ति आये। सब असुविधाएँ दूर हो गईं। हमलोग अपने मनमाना तपस्या करने लगे। किन्तु फिर वही पुरानी समस्या उपस्थित हो गई।

किसी विशेष कारणसे नं० १०० वनिया टोला स्ट्रीटका मकान उस समय छोड़ देना पड़ा। वराह नगरका मकान तब तक किराये पर लिया नहीं गया था, इसीसे ठाकुरके परिवारके अनेकही १९२५ ई० जुलाई महीनेमें कारमाटाँड आये। गौर निवासके छोटे मकान में सबोंके स्थानका समावेश नहीं होते देखकर श्री श्रीठाकुरने 'हृदय कुञ्ज' नामके मकानमें मेरा तथा नं० २ साधुजीके रहनेकी व्यवस्था कर दी। और शिव बावूके मकानमें रहनेकी व्यवस्था हुई नं० १ साधुजी, अमर, वलाइ राजेन तथा अन्यान्य दो एक व्यक्तिकी। आहारकी व्यवस्था गौर-निवासमें ही रही। यथा समय आकर कुछ कामकर देना पड़ेगा इस प्रकारका रुटीन (कार्यक्रम सूची) तैयार किया गया। नाना प्रकारकी अप्रिय घटना घटने लगी। सत्य होनेपर भी अप्रिय होनेके कारण सब बातोंको लिखना संगत बोध होता नहीं। कड़वी बात सत्य होने पर भी सब जगह कहते बनता नहीं। यथा संभव संयमित होकर सामान्य दो चार घटनाओं को लिखता हूँ।

अधिक लोक होनेके कारण अधिक जलका प्रयोजन होता था। हम लोगोंमें से कोई कुआँसे जल भर लेगा, कोई बालटी ढोकर २०–२५ हाथ ले जायगा उसके बाद दूसरा कोई २०–२५ हाथ ले

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

जायगा इस प्रकारसे हम लोग ५-६ व्यक्ति मिलकर पानी हौजका भर देंगे इस प्रकारकी व्यवस्था हुई। किन्तु कोई कोई नियत समय पर आते नहीं। या कोई कोई अवहेला करते अर्थात् कायिक परिश्रमसे बचनेकी चेष्टा करते थे। रुटीन तो कागजमें लिखा रहता है, किन्तु कागज तो काम करता नहीं। काम तो मनुष्यको ही करना पड़ता है। मनुष्य यदि कर्तव्यनिष्ठ न हो, सहानुभूति-सम्पन्न न हो तो ऐसी परिस्थितिमें समवेत भावसे काम करने जानेपर अशान्ति ही विशेषतया होती रहती है। किसीके विरुद्ध कोई अभियोग नहीं लाके मैं श्री श्रीठाकुरसे निवेदन किया—'प्राय ७०–८० बालटी जल ५-६ व्यक्ति मिलकर हम लोगोंको भरना पड़ता है, इससे १५–१६ बालटी जल प्रत्येक व्यक्तिके हिस्सेमें औसतन पड़ता है। तो यदि मैं अपने भागका जल स्वतंत्र रूपसे भर लूँ तो दूसरे किसीकी प्रतीक्षामें बैठे नहीं रहना पड़े। इस विषय में आपकी अनुमति चाहता।' उन्होंने कुछ सोच विचारकर सम्मति प्रदानकी। किन्तु इस हेतुसे मैं कुछ समालोचनाका पात्र हो गया। विशेषतः एक नम्बर साधु हमसे विरक्त हुए, क्योंकि वे दैहिक परिश्रमसे विमुख थे।

मैं अपनेही मन-माना रहता था, किसीके साथ बेशी मिलता जुलता नहीं था इसीसे मुझे अहंकारी इत्यादि सब कोई कहने लगे। इसी अवसरमें और एक घटना घटी—श्री श्रीठाकुरकी प्रतिवेशिनी एक भक्त महिला एक दिन आकर श्री श्रीठाकुरसे 'अडी-कलन' माँगी। मैं उनके पासही खड़ा था, इसीसे श्री श्रीठाकुरने

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

उक्त महिलाको अडी-कलनकी शीशी देनेकी मुझे आज्ञा दी। नारी वर्गको हाथों-हाथ कोई चीज देनेसे नारीका स्पर्शही माना जा सकता इसी भावनासे अडी-कलनकी शीशी मैं उक्त महिलाके समीप नीचे फरश पर रख छोड़ी। महिला हाथ पसारे थी किन्तु मैं हाथमें दिया नहीं। इस बातको सुन साधुजी को समालोचना करनेका और भी अवसर मिल गया। मैं अहंकारी, संयम तथा तितिक्षाका विशेष अहंकार करता इत्यादि अनेक बातें करने लगे। श्री श्री ठाकुर मुझे प्रश्रय देते इसीसे मेरी स्पर्धाकी सीमा नहीं इत्यादि बातें समलोचनाका- ब्योरा हुआ। एक दिन पाठ समाप्त होने पर श्री श्रीठाकुर के सामने बैठे ही कुछ समालोचना शुरू होनेपर वे मुस्कराकर बोले—'तामसिक निर्भरताकी अपेक्षा सात्विक अहंकार अधिक भला है। इससे समालोचकों ने सुविधा नहीं पायी।

स्त्रियोंका मुख नहीं देखना वा उनको स्पर्श नहीं करना यह मैं अपने जीवनके व्रत लेखे ग्रहण किया था। २८ वर्ष वयस पर्यन्त इस व्रतका मैं कठोर भावसे ही पालन किया था। ३२ वर्ष वयस पर्यन्त मैं माथे वा शरीरमें तेल मालिश की नहीं। कोमल बिछौनेपर सोया नहीं। २८ वर्ष वयसमें एक बार कठिन रोगसे अक्रान्त होने के समय मातृ स्थानीय दो एक जनि मेरी परिचर्याके समय स्पर्श की थीं। ३२ वर्ष वयसमें भी एक बार कठिन शिरोरोगसे आक्रान्त हुआ था। दरभंगाका एक भक्तके घर गया था। उस घरके पास ही में एक लोहेकी दूकान थी। सुबह छै बजेसे रात नौ दश बजे तक वहाँ लोहेको काटने पीटनेकी विकट आवाज होती थी। बड़े बड़े

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

लोहेका बीम (शहतीर—धरन) जब छेनीसे काटता तब बड़े हथौड़ेकी विकट आवाज मेरे मस्तिष्क तथा स्नायुमें अघात पहुँचाती थी। हथौड़े जैसे मेरे कलेजे वा माथेमें चोट देता हो ऐसा अनेक समय ज्ञात होता था। जिनके घर गया था उनसे विदाई माँगी। वे और दो चार दिन ठहरनेका अनुरोध किये। किन्तु उस विकट आवाजसे मेरा शरीर अस्वस्थ हो जानेके कारण दूकानदारको अनुरोधकर स्थानीय कई विशिष्ट व्यक्ति दो एक दिनके लिये लोहा काटने पीटनेका काम बन्द करवाए। मुझे निर्जन स्थानमें ले जाकर सुचिकित्सा करानेकी व्यवस्थाकी गई। बंकिम एवं डाः तारक हावड़ेमें आन्दूल—मौड़ीके एक उद्यान-भवनमें मुझे ले गये॥ बंकिम तथा उसके भाई लोग सुश्रुषा एवं चिकित्साका भार ग्रहण किये। मस्तिष्ककी ऐसी अवस्था हो गई थी कि उस निर्जन स्थानमें आनेपर भी ३२ दिन तक पाँच मिनटके लिये भी निद्रा नहीं हो पायी थी। माथेमें प्रचुर वर्फ देते देते तथा माथेमें ठंढा तेल व्यवहार करनेसे क्रमशः आरोग्य लाभ किया। चिकित्सकोंके ही परामर्शसे उस समय माथे वा शरीरमें तेल लगाना पड़ा था। तेल मालिश नहीं करनेका व्रत उसी समय भंग करना पड़ा। अब उस बातसे क्या प्रयोजन।

करमाटाँड़में और एक घटना लेकर मैं विशेष समालोचनाका पात्र बना। वस्तुतः सबोंके समक्ष नहीं किन्तु मात्र दो तीन व्यक्तियोंके समक्ष। पिछले पहर वेदान्त पाठके समय अनेक विषयोंको परिष्कार भावसे समझनेके अभिप्रायसे श्रीश्रीठाकुरके साथ

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

हमें बहुत कुछ तर्क वितर्क करना पड़ता था, जिससे वे सन्तुष्ट ही होते थे। किन्तु एक नम्बर साधुजी मेरे इस आचरणको दुर्विनीत एवं गर्वित जैसे समझते थे। वे एक दिन अपने कक्षमें बोलवाकर मुझे गुरु तथा श्रद्धेय व्यक्तियोंसे विशेष नम्र होकर बातें करना उचित है इत्यादि उपदेश दिये। केवल उपदेश ही नहीं मेरे गर्वित आचरणके लिये भर्त्सना भी की। मैं जो साधनामें अग्रसर हो रहा था वह बात श्रीश्रीठाकुर बहुतोंको कहा करते थे किन्तु वे बातें भी उनके पक्षमें असह्य हुए थे। इसीसे वे हमें भर्त्सनाकर समझा दिये कि साधनासे मेरी विशेष कुछ उन्नति हुई नहीं थी—प्रत्युत ठाकुरके आश्रय एवं प्रश्रयसे दुर्विनीत ही बेशी हुआ था। मैं कुछ भी प्रत्युत्तर किया नहीं, आँखमें आँसू भर आया, उठकर चल दिया। ठाकुर परिवारके छोटे बच्चोंमें से एकने जाकर ठाकुरको सूचित किया कि मैं रोते-रोते शिव बाबूके मकानसे हृदय कुंज चला गया था। दूसरे दिन श्रीश्रीठाकुर मुझे रोनेका कारण पूछे। मुझसे सब बातें सुनकर एक नम्बर साधुको बोलाकर मेरे साथ अच्छा व्यवहार करनेको कहे। वे लोग गेरुआ वस्त्र पहननेपर भी अपने परिवारके वेष्टनमें ही रहते थे तथा मैं संसार सुख एवं स्नेहशील परिजनका परित्यागकर संपूर्ण अपरिचितोंके बीच विदेशमें चला आया था इस कारण मेरे वैराग्यका मूल्य उन लोगोंकी अपेक्षा बहुत बेशी था। वे फालतू बात बोलने, अड्डा जमानेमें बहुत समय नष्ट करते किन्तु मैं एक मुहूर्त्त भी समय नष्ट नहीं करता था इत्यादि वाक्य भी स्पष्ट रूपसे श्रीश्रीठाकुर उस दिन बोल बैठे। मेरे प्रति

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

अतिशय स्नेहके कारण वे इन बातोंको कहे किन्तु उससे परिस्थिति और भी बिगड़ गई। ठाकुरके परिजनोंके अनेक मेरे प्रति रुष्ट हुए एवं १ नं० साधु तो अत्यधिक रुष्ट हुए। मैं किंकर्त्तव्यविमूढ़ हो गया।

सोचा कि करमाटाँड छोड़कर अन्य किसी जगह चला जाऊँ। किन्तु वर्षा काल होनेसे तथा हाथमें कुछ नहीं रहनेसे, विशेषतः करुणामय श्रीश्रीठाकुरको छोड़कर जानेमें भी प्राणमें व्यथाका अनुभव करता था। और उस समय वेदान्तादि पाठ भी होता था। ऐसे समयमें गोपालपुर (बर्धमान जिला) के श्रीयुक्त गोविन्दलाल भैया करमाटाँड आये। वे श्रीश्रीठाकुरके पास कुछ दिन रहनेकी इच्छासे आये थे। वे पंडित, बुद्धिमान तथा विचक्षण लोक थे। तीन चार दिनके अभ्यन्तर ही वे समझ पाये कि मेरी परिस्थिति बहुत ही विषमय थी। बोलनेमें प्राय कोई दोष नहीं—मेरे प्रति नाना प्रकारसे यहाँ तक कि खाने पीने पर्यन्तमें परिवारके लोग दूसरे ही प्रकारके व्यवहार आरम्भ कर चले। गोविन्दलाल भैयाकी तीक्ष्ण दृष्टिमें कोई भी विषय छिपा नहीं रहा। वे मुझे एकान्तमें बोलाकर कहे—'तुम्हारा अब यहाँ ठहरना उचित नहीं। तुम मेरे साथ हमारे मकानपर चलो। वहाँ तुम्हारी साधना एवं शान्ति पूर्वक रहनेकी व्यवस्था मैं कर दूंगा। इस परिवेशमें किसी भी साधककी साधना चल सकती नहीं।'

शत उपेक्षा करनेपर भी उन लोगोंके आचरणसे मैं आघात पाया नहीं यह बात बोल सकता नहीं।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

'आघात से ये परश तव ।
सेइ त पुरस्कार ॥'

इस बातको विचारकर मनको बार-बार सान्त्वना दी थी। 'दुःखेष्वनुद्विग्नमनाः सुखेषु विगतस्पृहः' होना होगा, यह भी तो साधकके जीवनकी बात है। किन्तु मैं तो अब तक भी स्थित भी हुआ नहीं, इसीसे ब्रह्म चेतनासे जब उतरके जीव चेतनामें आकर रहता तब तीता परिवेश एवं तीता वाक्य आघात देता, मनको विचलित कर देता।

उन्होंके बीचमें रहकर भी अनेक बार माँको नारायणको देखनेकी चेष्टाकी थी किन्तु पूर्णतया कृतकार्य हुआ नहीं, समय-समयपर आंशिक कृतकार्यता मात्र हुई। मनमें आता—समाज तथा राष्ट्र क्षेत्रमें तो कितने ही प्रकारके लोग रहते हैं, किन्तु हाय! धर्म जगत्में भी एक मनुष्य दूसरे मनुष्यको कष्ट देनेके लिये दलबन्दी करे यही आश्चर्य है। इतनी हिंसा द्वेष उनके अन्तरमें भी रहते। उस समय करमाटाँडमें जितने साधक थे उनमें मैं ही सबसे वयसमें छोटा था। जो कुछ हो, गोविन्दलाल भैयाके सहानुभूति सूचक वाक्यसे मैं बहुत भरोसा पाया। उनको श्रीश्रीठाकुरकी अनुमति लेनेको कहा। वे मेरी ओरसे ठाकुरको सब बात कहेंगे यह कहे थे किन्तु मैं उनको विनीत भावसे निषेधकर कह दिया कि आप केवल मुझको कुछ दिनके लिये अपने घर ले जाने चाहते यही बात मात्र श्रीश्रीठाकुरको कहें और दूसरी कोई बात नहीं।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

याद आती कि श्रीकृष्ण जन्माष्टमीके बाद अगस्त महीनेके शेष भागमें मैं गोविन्दलाल भैयाके घर गया था। वास्तविक वे स्नेहवश परम बान्धवकी भाँति अति यत्नसे ही मुझे अपने मकानमें रखे थे। श्रीश्रीठाकुर अनुमति प्रदानकर यह बोल दिये थे—'श्रीदुर्गापूजाके कई एक दिन पहले ही उसको (मुझको) वराह नगर भेज देना।' मैं अनधिक एक मास काल स्नेहवान् गोविन्दलाल भैयाके निकट रहकर ठाकुरके निर्देशके अनुसार महालयाके बाद वराह नगर आश्रममें पहुँचा। गोविन्दलाल भैया लोग पूजाके अव्यवहित पूर्व पहुँचकर पूजामें योगदान किये थे। श्रीश्रीठाकुर तथा उनके परिवार वाले सब एवं तदानींतन करमाटाँडके सब कोई मेरे पहुँचनेके कई दिन पूर्व ही वराह नगर आश्रम चले गये थे इसी साल वराह नगर आश्रमके प्रांगणमें विराट् पंडाल (मंडप) निर्माणकर श्री श्रीदुर्गा माताकी पूजा हुई थी।

गंगाके समीप ही यह आश्रम (भाड़ेका) वाला मकान प्रासाद समान प्रकांड आयतनका था। ऊपर तथा नीचे अनेक कमरे थे। वनिया टोला वाला मकान वहुत ही छोटा था। इसीसे यहाँ आकर इस प्रकांड मकानमें सब कोई स्वस्ति (खुलासा) बोध करने लगे। किन्तु दुःखका विषय यह कि वराह नगरमें नल जलकी व्यवस्था न रहनेपर वहाँ तब अधिकांश लोगके ही स्वास्थ्य अच्छा नहीं रहता था। ड्रेन (नाली) प्रभृति भी परिष्कार नहीं रहनेके कारण भीषण मच्छरका उपद्रव एवं मलेरिया ज्वर अधिक होता था। विशुद्ध जलके अभावसे पेटकी बीमारी बहुतोंको होती थी। स्मरण होता कि उस

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

बराह नगरमें मैं कई बार ४८ घंटेके अभ्यन्तर ही मलेरिया ज्वरसे आक्रान्त हो गया था। जो कुछ हो, वहाँ माँकी पूजा अति सुचारु रूपसे ही सम्पन्न हुई। पूजाका वर्णन यहाँ लिखे जानेपर पुस्तकके आयतनकी वृद्धि नहीं करूँगा। मैं पूजासे नवीन प्रेरणा लाभकी। मेरा पथ और भी सुगम हो गया, यह मैं माँकी कृपासे ही समझ पाया।

प्रतिक्रिया एवं प्रतिबंधकता

"जे नदी मरुपथे हारालो धारा,
जानी गो जानी ताउ हयनि हारा"।

वाधा तो पद पदमें हैं। कभी पर्वत प्रमाण वाधा आकर तपस्याके प्रखर स्त्रोतके सामने प्रतिबंधक होकर खड़ी होती, कभी मरुभूमिकी भाँति शुष्कता आकर तपस्याकी सर्वांग गतिको नीरस एवं शुष्ककर डालती। यह वाधा आती दो कारणोंसे। एक तो पूर्व पूर्व जन्मोंके कुसंस्कार तथा कर्मफल, दूसरा राजसी तामसी आहार ग्रहणके कारण शरीर तथा मनमें राजसी तामसी भावका प्रावल्य। पूर्व जन्मके कर्मफलसे ही उत्तम वा अधम पिता-माता लाभ होते

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

उत्तम वा अधम परिवेशमें जन्म भी होता पूर्व जन्मके कर्मफलके प्रभावसे। उत्तम संस्कार रहनेसे पूर्व जन्मके पुण्यफलसे पवित्र माता-पिताके घरमें पवित्र परिवेशमें जन्म होता। माता-पिता तथा परिवेश यदि अनुकूल हों तो जीवन यात्राका पथ सुगम होता। इस में सन्देह नहीं। कोई रोगी माता पिताके गृहमें जन्म ग्रहणकर बाल्यकालसे अशेष दुःख भोग करता, कोई दरिद्र वा चांडाल समान माता पिताके घर जन्म ग्रहणकर बाल्यकालसे अशेष लांछना भोग करता फिर कोई कोई धनी संभ्रान्त तथा विज्ञ पिता माताके घर जन्म ग्रहणकर बाल्यकालसे ही सुखसे लालित पालित होता। एवं भविष्य जीवन उनके गौरमय होते। इसका कारण पूर्व पूर्व जन्मोंके कर्मफलके अतिरिक्त और कुछ नहीं। भगवान बुद्ध देवने कहा है कि 'वासनासे ही कर्मकी उत्पत्ति होती कर्म ही जन्मका कारण होता, इस लिये वासनाका, निरोध करो उससे जन्मका निरोध होगा, शान्ति मिलेगी। जन्म धारण करनेसे ही पंचक्लेशके कवलमें पड़ना होगा। यह जगत् अनित्य तथा दुःख पूर्ण है। इसके अन्तरालमें एक नित्य वस्तु है। वह वस्तु है चिन्मय-आनन्दमय चिन्मय-आनन्दमय वस्तुको लाभ करनेपर फिर पार्थिव क्षुद्र वस्तु लाभकी वासना रहती नहीं। अनेक जन्मोंकी सुकृतिके परिणामसे उत्तम पिता माताके घर उत्तम परिवेशमें जन्म धारणकर भी अनेक प्रतिबंधकोंके संम्मुख होना पड़ता। इसीसे गीताकार जैसे एक ओर कहे हैं—

'नहि कल्याणकृत् कश्चित् दुर्गतिं तात गच्छति'

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

हे तात (अर्जुन) शुभ कर्म करने वालोंकी कभी दुर्गति नहीं होती। वैसे ही दूसरी जगह ऐसे कहे हैं—

मनुष्यष्याणां सहस्त्रेषु कश्चित् यतति सिद्धये।
यततामपि सिद्धानां कश्चिन्मां वेत्ति तत्वतः।'

हजारों मनुष्योंमें कदाचित कोई आत्मज्ञानके लिये यत्न करता है। यत्न करनेवाले सिद्धोंमें भी क्वचित् व्यक्ति ही मुझे—आत्माको तत्त्वतः (यथार्थतः) जानता है।

फिर भी कहा गया है—

'बहूनां जन्मान्ते ज्ञानवान् मां प्रपद्यते'।

उपनिषद्के आत्मज्ञ ऋषि भी कहे हैं—

'कश्चिद्धीरः प्रत्यगात्मानमैक्षत्
आवृत्तचक्षुरमृतत्वमिच्छन्।'

कोई कोई विवेकी पुरुष मोक्षकी अभिलाषासे अन्तर्दृष्टि रखकर प्रत्यगात्माको देख पाते हैं।

विवेगी गण अमृतत्व (मोक्ष) के अभिलाषी होकर इन्द्रियोंको नियन्त्रित कर आत्माके ध्यानमें निमग्न होते हैं। किन्तु अल्प बुद्धि-वाले मूढ़ व्यक्तिगण भोग्य विषयोंमें लिप्त रहते हैं। विषयोंके चिन्तनसे वासनाकी पूर्त्ति नहीं होनेसे रजोगुणकी उद्दीप्ति और भी हो जाती है। रजोगुणकी उद्दीपना प्रयुक्त कर्मोंकी सिद्धि प्राप्त नहीं होनेसे, वासना चरितार्थ नहीं होनेसे मिथ्या एवं अन्यान्य पथका आश्रयण करता जिससे वह तमोगुणसे आच्छन्न होकर एकदम

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

विनाशको प्राप्त होता है। उस आत्मघाती अवस्थासे ऊपर उठनेमें बहुत ही विलम्ब होता है।

साधना क्षेत्रमें आकर दो चार वर्ष तनिक जप ध्यान कर लेनेपर जो कोई मान लेता कि मैं तो बहुत तपस्या की लेकिन उससे भगवानका कहाँ कुछ पता लगा। ये लोग वास्तविकमें कृपाके पात्र हैं। कोई दरिद्र यदि राजमहलके प्राचीरके पास बैठकर 'मैं राजा होऊँगा, मैं राजा होऊँगा' ऐसा जप करे एवं दो चार सालके बाद लोगोंको कहे कि देशमें राजा बोलकर कुछ है नहीं एवं राजा होना कोई चीज नहीं तो लोग उसे मूढ़ वा पागल समझकर उसे कृपापात्र ही मान लेंगे। अज्ञानी मनुष्य कितना हूँ चीत्कारकर बोले कि ईश्वर नहीं हैं तो उससे ईश्वरकी कोई हानि-लाभ नहीं। कतिपय अंधे यदि पूर्णिमाकी निर्मल चाँदनी रातमें चाँदनीमें बैठकर घोषित करे कि कहाँ कोई चाँद वा उसकी चाँदनी है तो उससे चाँद वा चाँदनीका कुछ भी नुकसान होता नहीं। कोई एक चक्षुष्मान् व्यक्ति यदि उस चाँद वा चाँदनीको देख परितृप्त होता तो उससे चन्द्रमाकी महिमा विघोषित होती है। अज्ञानी जीव ईश्वरको देख पाता नहीं तथापि ज्ञानी लोग ईश्वरको कभी अस्वीकार करते नही। दरिद्रोंको पायस भोजन जैसे नसीब नहीं होता वैसे ही अज्ञानियोंके भाग्यमें भी ईश्वरभजन संभव नहीं। मैं वास्तवमें यहाँ अज्ञानियोंकी बात कहता नहीं, किन्तु ईश्वरलाभके पथमें जो निकसे हैं, जो उसके लिये सर्वस्व त्याग किये हैं उनके जीवनमें कैसी बाधा, विपत्ति आती वही बात मैं कहने जा रहा हूँ। विषयतृष्णा त्यागकर ब्रह्मलाभकी

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

तृष्णा जिनके अन्तरमें जाग्रत हुई है उनके भी पथमें कितनी बाधा या विपत्ति आती वही कहता हूँ।

(१) आत्मीय स्वजन प्रतिवेशी एवं बंधुगण प्रथम अन्तराय।

(२) राजसी तामसी आहार तथा चिन्ता दूसरा अन्तराय।

(३) आलस्य, निद्रा, दीर्घसूत्रता तपस्याके अन्तराय हैं।

(४) काम, क्रोध, मोह, लोभ तथा अहंकार ये विशेष अन्तराय हैं।

(५) निन्दासे विचलित होना वा प्रशंसासे विगलित होना ये साधना जगत्‌के विशेष अन्तराय हैं।

प्रभात समयमें जो सोकर उठ सकता नहीं, ब्राह्म मुहूर्तमें जो तपस्या कर सकता नहीं उनकी भी तपस्या होना कठिन है। बार-बार जिनके मत वा पथका परिवर्तन होता रहता उनकी भी तपस्या कठिन है। विवाहित जीवन होनेसे भी जो संयमित नहीं रहके अतिरिक्त कामवृत्तिका सेवन करता उससे भी तपस्या होना कठिन है। दलके प्रभावसे वा देखा-देखी भेड़िया-धसान जो दीक्षा ग्रहण करता पीछे गुरुमें श्रद्धा रख सकता नहीं उसकी भी तपस्या बनती नहीं। विषय-लोलुपोंकी तपस्या हो नहीं सकती। अनेक शास्त्र पढ़के जो अपनेको पंडित मान लेता एवं सर्वदा तर्क (वाद-विवाद) करना पसन्द करता उसकी भी तपस्या नहीं होती। शुचि एवं पवित्रता नहीं रहनेसे तपस्या होती नही। अति दांभिक, कुटिल, कृतघ्न वा निष्ठुरकी तपस्या नहीं होती।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

गीतामें भगवान श्रीकृष्णने कहा है—

'श्रद्धावान् लभते ज्ञानं तत्परः संयतेन्द्रियः'।

जिनको गुरु एवं वेदान्तादि शास्त्रवाक्योंमें विश्वास है, जो भगवानको प्राप्त करनेके लिये अपने जीवनका उत्सर्ग करनेमें व्रती हुए हैं जिनकी इन्द्रियाँ संयत हुई हैं एकमात्र वे ही ब्रह्मज्ञान लाभ-कर सकते हैं। भगवान श्री शंकराचार्य कहे हैं—जिसकी मुक्ति प्राप्तिकी अभिलाषा जगी नहीं, जिसकी इह लोक वा परलोक (स्वर्गादि) की वितृष्णा जगी नहीं, जो अंगोंकी वेशभूषाको वमन वा विष्टाकी नाईं त्याग कर सकते नहीं उनको आत्मज्ञान लाभ दुरूह है।

किन्तु हाय मनुष्य! तुम्हारी गति अर्थात् जन्म मृत्युके प्रवाह का विराम नहीं, सुख दुःखके हाथसे भी अव्याहति नहीं जब तक कि तुम उस परम आनन्दमय धाममें नहीं पहुँचते।

आलस्यके आनेपर उसको अतिक्रम करना होगा। रोग शोकके आनेसे उसको सहनकर चलना होगा। अविश्वासके आनेपर पुकार कर उसकी करुणाकी भिक्षा माँग उस अविश्वास रूपी पिशाचको दूर करना होगा। कोई भी साधक सहज सुगम पथसे आत्मज्ञान लाभ नही कर सके हैं। रोग आकर बाधा दे, शोक आकर बाधा दे, संशय आकर बाधा दे, अर्थाभाव आकर बाधा दे तो भी चलना ही पड़ेगा। कुछ दिन प्राय साधनाका विशेष संवेग रहता फिर कुछ दिन अत्यन्त जड़ता वा आलस्य आता तो भी निष्ठाके साथ तपस्या

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

में बैठना होगा। जब श्रद्धा और भक्तिसे मन उछल पड़ता तब हम वायु जैसे उड़ चलते। किन्तु जिस दिन भक्ति कम हो जाती, श्रद्धामें भी शिथिलता आती तब हम पाथरके जैसे अचल हो जाते। इस अविश्वासके दिनमें, इस अश्रद्धाके दिनमें भी हम लोगोंको शिथिल होनेसे नहीं चलेगा। निष्ठाके साथ यथा समय प्रत्येक दिन आसनपर जाकर बैठना होगा। बैठनेपर तंद्रा आएगी, मनमें अतिशय चंचलता आकर विक्षुब्ध कर देगी तो भी आसनपर बैठना ही होगा। जीवनके इन दुर्दिनोंमें निष्ठा ही होती परम बांधव।

हम लोगोंके जीवनमें भी, हम लोगोंके क्यों मेरे भी जीवनमें अनेक बार संशय अविश्वास अश्रद्धा आलस्य प्रभृति आकर बाधा देनेके प्रयासी हो चुके हैं। उन दुर्दिनोंमें निष्ठा ही हमें रक्षा की है। शत बाधा विपत्तियोंके बीच, रोग शोकके बीचमें भी मैं निष्ठाके साथ प्रतिदिन अपने आसनपर बैठा करता था। ध्यान धारणा गभीर न होनेपर भी कर जोड़ कर प्रणाम किया है। श्रद्धासे अन्तर विगलित न होनेपर भी पाद्य अर्घ उनके चरणोंमें अर्पण किया है। मंत्रके अर्थका स्पष्ट बोध न होनेपर भी जप किया है एवं गीता तथा सद्-ग्रन्थादिका पाठ किया है। दुर्वाक्य तथा दुर्व्यवहारसे निष्पेषित होनेपर भी एक हाथसे आँखका आँसू पोंछते पोंछते दूसरे हाथको उनकी ओर बढ़ाकर रखा है। रोगशय्यामें पड़कर औषध पथ्य पाया नहीं, कुछ सान्त्वनका वाक्य भी सुन पाया नहीं, विदेशमें दुर्दशामें पड़कर कितना रोया है, तथापि निष्ठा ही एकमात्र इस प्रकारके दुर्दिनोंमें मुझे वहन करती चली आई है। तप्त मरुभूमिका पथवाहक

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

जैसे ऊँट है उत्तप्त साधना जगत्का पथवाहक वैसी ही यह निष्ठा है। निष्ठा दुर्दिनका बाँधव, बहन, माता एकान्त सुहृद है। श्रान्त पथिक.की तरुछाया हुई यही निष्ठा। तप्त मरुभूमिके तृषातुर पथिकका मरुद्यान हुई यही निष्ठा। निष्ठाको भी जो खो देता, प्रतिदिन आसन पर बैठनेका समय नहीं है बोलकर जो अपनेको ठगता है वह वास्तवमें बहुत भाग्यहीन है।

वे इस तरहसे हाथ पकड़ लिये थे, इस प्रकारसे स्नेहमय वक्षमें खींच लिये थे कि मेरे अभिशप्त जीवनमें सैंकड़ों बाधा आनेपर भी इस निष्ठाके हाथसे छीना नहीं जा सका। भगिनी निष्ठा, प्रिय सुहृद निष्ठा मुझे दिग्भ्रान्त होने नहीं दी। जिस दिन चित्त अत्यन्त जड़ वा मूढ़ होता उस दिन भी वह कानके पास आकर कहती—छि, तुम इस संसाररूप तप्त मरुभूमिमें आलसी होकर बैठ जानेसे चलेगा कैसे ? वही तो सामने मरुद्यान देखा जाता है। मेरे कानके पास अपना एकतारा लेकर निष्ठाने गाई थी—

'जे नदी मरुपथे हारालो धारा,
जेनोगो जेनो ताहा हयनि हारा'।

साधना जगत्में एकनिष्ठ बांधव होती निष्ठा। जिसे निष्ठा नहीं तो यह समझा चायगा कि उसे गुरु तथा शास्त्रके वाक्यमें पूर्ण विश्वास भी नहीं है।

किसी किसी समय मनमें भावका अत्यधिक आवेग आ जाता। उस आवेगको नियंत्रित नहीं कर सकने पर अनेक समय विपरीत फल

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

भी होता है। आवेगके वशमें जो दिन दूना रात चौगूना बहुत कुछ होना चाहता उसका अतिशीघ्र ही पतन हो जाता है। देखा जाता है कि आवेग वश घर बाड़ी छोड़ एवं वेशभूषाको बदलकर जो हठात् अपनेको योगी सजता है वही फिर कई एक दिन बादमें उक्त वेशभूषाका परित्यागकर घोर संसारी हो जाता है। आवेग तो एक प्रकारका उन्माद है। मद्यपायी मदिरा पीकर जो कुछ बोलता वह नशाके उतरनेपर, मस्तिष्क ठीक होनेपर अपनी बोली बातोंका पालन नहीं-कर सकता है। केवल आवेगके वश जो चलता वह सत्य मिथ्याका निर्णय नहींकर सकता। अनेक अवांतर लम्बी चौड़ी बातें बोलता, अनेक अवांतर कल्पना भी करता किन्तु कार्य क्षेत्रमें उनके चिंतन तथा कार्य कोई भी फलीभूत होते नहीं। अथ च आवेगको जो निरोधकर रखता उसके भी अन्तरके भाव सब परिस्फुट हो पाते नहीं। भावको रोकते रोकते हृदय हो जाता शुष्क। और शुष्क हृदयसे प्रेममय भगवानको लाभ करना भी कठिन है। आवेगके साथ जिसकी विचार शक्ति रहती, जो सत्य मिथ्याका निर्णयकर चलता अथवा जो गुरुके निर्देशसे चलता वही भविष्यमें जयी हो सकता है।

साधकके जीवनका और एक बांधव विश्वास है। गुरु एवं गुरु वाक्यमें जिसका प्रगाढ़ विश्वास नहीं उसको निष्ठा कहाँसे और कैसे होगी। निष्ठा तो उसीकी होती जो गुरु तथा गुरु वाक्यपर एकान्त भावसे निर्भर रह सकता हो। वैदिक युगमें अनेकों ही इस ब्रह्मविद्याको लाभकर चुके हैं, गुरु एवं गुरु वाक्यके बलसे। कोई तो खेतकी मेंड़पर लेट अपने जीवनको विपद्में डालकर भी

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

गुरु वाक्यका पालनकर देशको बाढ़से रक्षाकी थी। कोई फिर वन-वनमें गौ चराया था गुरुके वाक्यका प्रतिपालन करनेके लिये। शास्त्रका अध्ययन नहीं कर एवं तपस्या भी न करके आत्मज्ञान लाभ होगा या नहीं यह प्रश्न उनके मनमें उठा नहीं। इसी कारण विश्वास मात्रके प्रभावसे वे ऋषि बालकगण आत्मज्ञानी हुए थे।

साधना जगत्में शीघ्र फल लाभकी आशासे जो अनेक गुरु करते उनका परिणाम अत्यन्त अशुभ होता है। इस प्रकार संशयी साधक-की ऊर्ध्वगतिके बदले अधोगति ही घटती है। जिसको गुरु एवं गुरु वाक्यमें विश्वास नहीं रहता वही अनेक गुरु करता है। अनन्य-भाक् होकर जो तपस्या करता उसीका जीवन सुखी देखा जाता है। गुरुके सान्निध्यमें वेशी दिन रहनेसे व्यावहारिक जीवनमें मतविरोध होना असंभव नहीं है। जीवनमें इस प्रकारका अभिशप्त समय उपस्थित होनेपर कुछ दिनके लिये गुरुसे अलग ही रहना उचित है। गुरुके निकट रहकर औद्धत्य प्रकाश करनेकी अपेक्षा उनकी अनुमति लेकर कुछ दिन दूर जाकर तपस्या करनेसे अपना भूल एवं त्रुटिको पकड़नेका अवसर मिलता है। सन्यासाभिमानी शिष्यका गृहस्थ गुरु होना ठीक नहीं। गृहस्थ गुरुके परिजनोंके साथ सामंजस्य रखकर चलना उसके लिये बहुत ही कठिन होता है। वे बात-बातमें खोट धरके विगड़ जाते और उनकी कड़ी बातें दिलमें चुभती। सन्यासाभिमानीके आन्तरिक वैराग्यकी बात गृहस्थ लोग सहसा समझ सकते नहीं। इसीसे सन्यासाभिमानियोंके सन्यासी गुरु होने पर उनका पथ विशेप सुगम हो जाता है। पूर्व जन्मकी

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

सुकृतिके प्रभावसे ही इस प्रकारका शुभ संयोग घट पाता है। संयोग-वश सन्यसाभिमानीके गृहस्थ गुरु होनेपर भी उस गृहस्थ गुरुके परि-वार वर्गके साथ अधिक दिन रहना उचित नहीं है।

मैं अपने जीवनके परीक्षित तथ्यसे इन बातोंको लिख रहा हूँ। इसमें कल्पनाका बिलकुल स्थान नहीं। शिवके साथ जैसे भूत पिशाच रहते ब्रह्मनिष्ठ गृहस्थ गुरुके साथ भी वैसे ही उनके परिजन-वर्ग रहते। शिवकी श्रद्धा करनेपर भी भूतको कोई शिवकी भाँति श्रद्धाकर सकता नहीं। अथ च भूत सब शिवके समान ही पूजा चाहते। पूजा नहीं पानेसे वे रुष्ट होते एवं नाना प्रकारसे उत्पीड़न करनेकी चेष्टा करते हैं। देवताके कोपकी अपेक्षा अपदेवताके कोपसे अधिक अनिष्ट होता है। इसीसे शनि और राहुके कोपसे सब डरते और उनसे अव्याहति पानेकी चेष्टा करते हैं। यह देखनेमें आया है कि गृहस्थ गुरुके परिजनोंमें कोई-कोई साधारण लोगोंकी अपेक्षा वेशी स्वार्थी और संकीर्ण होता है। इसीसे कह आया हूँ कि वैराग्यवान् साधकोंके गृहस्थ गुरुके परिवार वर्गके साथ अधिक दिन तक रहने जानेपर नाना प्रकारकी कटुताकी सृष्टि होती है। इस तरहके परिवेशसे आत्मरक्षाके लिये दूर ही रहना ठीक होता है। दूरमें रहने-पर भी गुरुके प्रति श्रद्धा और विश्वास रखना ही होगा।

———

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

कॅक्स बाजारमें

अक्तूबर मास १९२५ ई० श्रीश्रीदुर्गा पूजाके पश्चात् श्रीश्रीठाकुरके मध्यम भ्राता श्रीयुक्त अविनाश बाबू (जिनको हमलोग मँझला भाई कहके सम्बोधन करते थे) के संग चट्टग्राम जिलाके कॅक्स बाजार जानेकी बात हुई। मँझला भैया वटकृष्णपाल कम्पनीमें नौकरी करते थे। उसी कम्पनीके कामसे दो तीन महीनेके लिये वहाँ जायँगे। परदेशमें नितान्त अकेले कैसे जायँगे, इसीसे वे हमें अपने साथ ले जानेको चाहे। श्रीश्रीठाकुर अनुमति प्रदान किये। खुलना, बरिसाल तथा चाँदपुर होते हुए हमलोग चट्टग्राम पहुँचे। वहाँसे समुद्रके रास्ते जो स्टीमर अकियावको जाती थी उसी स्टीमरसे कॅक्स बाजारकी यात्रा की। स्टीमर समुद्रके ढेवमें हिलती-डोलती थी। पुरीमें समुद्र देखा था, किन्तु समुद्र पथसे सफर नहीं किया था। इस बार नयी अभिज्ञता (जानकारी) प्राप्तकी। अपांस्वरूप स्थितया त्वयैतद्' इस मंत्रका अवलंवनकर स्टीमरमें बैठे-बैठे समुद्रमें सत्य-प्रतिष्ठा करता था। खूब सवेरे ही चट्टग्राममें स्टीमरपर चढ़ा था एवं सायंकाल कॅक्स बाजार पहुँच गया था। दोलायमान स्टीमरसे तरंगायित समुद्रगर्भमें छोटी-छोटी संपान (डोंगी) से जब सब लोग उतर रहे थे, साथ-साथ हमलोग भी उतर रहे थे तब जैसे कुछ कौतुक मालूम पड़ता था वैसे कुछ भय भी। स्टीमर तीरमें नहीं

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

लगता इसीसे स्टीमरसे उतर संपानमें किनारे पहुँचकर कॅक्स बाजार जाना पड़ता था। समुद्र नदी तथा पहाड़ सम्मिलित वह स्थान मुझे बहुत रमणीक मालूम पड़ता था। प्राकृतिक सौन्दर्यका एकत्र समावेश था। ध्यान गंभीर पहाड़, कर्म चंचल नदी तथा अनन्त समापत्तिका क्षेत्र समुद्र—स्थिति, गति तथा परिसमाप्तिके मानों रूपक थे। बुद्धदेवका एक बहुत बड़ा मन्दिर यहाँ पर है। ब्राह्म समाज तथा हिन्दुओंके भी दो एक छोटे-छोटे मन्दिर हैं। एक अंग्रेजी हाई स्कूल, कचहरी तथा जेलखाना इत्यादि भी हैं।

हमलोग जाकर डाक-बंगलेमें ठहरे। मँझले भैया बहुत हिसाबी (इन्तजामी) लोग थे अतएव रास्तेमें कोई कष्ट हुआ नहीं एवं असमय में डाक-बंगलेमें पहुँचकर भी कोई असुविधा हुई नहीं। वे स्वयं रसोई करने जानते थे। कोजागरीय लक्ष्मी पूजाके समय वे अपने हाथसे अनेक प्रकारके अन्न-व्यंजनादि तैयारकर श्रीश्रीलक्ष्मी माताको भोग चढ़ाते थे। यहाँ भी वे रसोईके कुल सामान लेकर आये थे। सारा दिन भात खानेको मिला नहीं इसीसे रातमें वे अपने उस्तादी हाथसे बहुत बढ़िया रसोई बनाये। वे बहुत स्नेहशील थे। वे मुझे छोटे सहोदर भाई जैसे स्नेह करते थे। भोजनके उपरान्त सुखसे सो गया। फिर मैं समुद्रके किनारे-किनारे घूमता-फिरता रहूँगा, ध्यान मग्न होकर इस भूधरपर बैठूँगा, प्रेमसे विह्वल होके प्रवहमान नदीमें तथा कल्लोलित समुद्रमें अवगाहन करूँगा, विश्व प्रकृतिके साथ आन्तर प्रकृतिको मिला-मिलाके विश्वपतिके साथ मिलूँगा। मेरी साधनाकी परिसमाप्ति प्राय यहाँ ही होगी। इसीसे मालूम माँ

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

मुझे यहाँ ले आई हैं। किन्तु प्राकृतिक इतना सौन्दर्य रहनेपर भी इस स्थानका वातावरण रजतमोगुण मिश्रित तथा सत्वगुण कम बोध होता था।

मँझले भैया मुझे स्वाधीन भावसे साधना करनेका यथेष्ट सुयोग दिये। सयय-समयमें जिस दिन वे काममें अधिक व्यस्त रहते थे उस दिन मुझे केवल रसोई करना पड़ता था। अतिरिक्त अन्य कामोंके लिये वे एक नौकर रख लिये थे। खाने पीनेके लिये वे यथा योग्य व्यवस्थाकर लेते थे। ऐसा सुयोग पाकर मैं भी अपनेको धन्य माना। भुवनेश्वरकी तथा दूसरी बार करमाटाँड़की कटु अभिज्ञताके साथ यहाँकी मधुर अभिज्ञताकी तुलना करनेपर इसको स्वर्ग सुख ही कहा जायगा। पुरीमें हाट बाजार आदि करनेका एवं प्रतिदिन रसोई करनेका दायित्व रहता था, किन्तु यहाँ तो हमें कोई भी दायित्व नहीं। तो भी रसोईके काममें यथा साध्य मैं उनकी सहायता करता था। इससे वे भी बहुत प्रसन्न रहते थे। खुला दिल, बहुत हँसमुख भावके वे थे। ठाकुरके भाई, वयसमें उनसे मात्र ४ वर्षके छोटे थे। पद मर्यादाके लिये आत्मगौरव रखना तो स्वाभाविक था, किन्तु तथापि मैं किसी दिन भी उनका अहंकार देख पाया नहीं। जो कुछ हो, इस सदाशिव पुरुषके सान्निध्यमें आकर मैं साधनाका यथेच्छ सुअवसर प्राप्त किया। डाक बंगला छोड़कर बादमें एक वकीलका मकान भाड़ेपर लिया गया था। वह स्थान निर्जन होनेसे अनुकूल परिवेश पाकर मैं अपनी तपस्यामें निरत हुआ। समुद्रके तटमें जहाँ नदी समुद्रमें मिलती थी

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

उस संगमस्थानमें एक श्मशान था। मैं अनेक समय उस श्मशानमें जाया करता था।

'श्मशान भालवासिस् बोले श्यामा
हृदि श्मशान करेछि आज'।

श्मशान ही मनुष्यका शेष शय्या होता है। इस शेषकी पुनरावृत्ति न होने पाये उसीके लिये श्मशानेश्वरीको श्मशानमें देखनेकी चेष्टा करता था। बाहरी श्मशानको हृदयके श्मशानके साथ मिलाकर श्मशानेश्वरी श्यामाको हृदयमें देखनेकी चेष्टा करता था। महाकालके वक्षपर कालीके नृत्यको देखनेकी चेष्टा करता। महाकालके—मृत्युंजयके वक्षपर उल्लंगिनी कालीको देख पानेपर बारंवार मृत्युके ग्रासमें नहीं पड़ना होता है, इसी अभिप्रायसे।

जन्म ग्रहण करनेपर मरना होगा, और मरनेपर फिर जन्म लेना होगा; यही तो है स्वाभाविक विधान—'जातस्यहि ध्रुवोमृत्यु ध्रुवं जन्म मृतस्य च'। उपनिषद्के ऋषिकह गये हैं—'मृत्योः समृत्युमाप्नोतिय इह नानेव पश्यति'। मृत्युके बाद मृत्यु होती अर्थात् पुनः पुनः जन्म तथा मृत्यु उसकी होती जो वैचित्र्यमय इस विश्वको देखता, किन्तु जो इस वैचित्र्यके मध्य एकको देखता वह शाश्वत सुख लाभ करता है। अर्थात् तब उसके जन्ममृत्यु होते नहीं।

एको वशी सर्वभूतान्तरात्मा
एकं रूपं बहुधा यः करोति।
तमात्मस्थं येऽनुपश्यन्ति धीरा
स्तेषां सुखं शाश्वतं नेतरेषाम्॥

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

सब प्राणियोंके अन्तरात्मा रूपसे सबका नियन्ता होकर जो आत्मा एक रूपको वहुधा विभक्त करते अर्थात् स्वयं ही अनेक रूपों-से रूपायित होते उनको जो तपस्वी देख पाता वही शाश्वत शान्ति पाता, दूसरा कोई शान्ति लाभकर सकता नहीं।

काम कामी गण अर्थात् नाम तथा रूपके प्रति जिनकी आसक्ति रहती अथवा स्वर्गादि लोकके प्रति जिनकी आसक्ति रहती वे कभी भी शान्ति लाभकर सकते नहीं—'सशान्ति माप्नोति न काम-कामी'। जो इस लोककी चिन्ता करता अर्थात् विषयकी ही चिन्ता करता वह मृत्युके परे मृत्यु ही पाता अर्थात बार बार इस संसारमें आता और जाता है। जो कोई पितृलोककी चिन्ता करता, कुल—वंशका गर्व करता वह मृत्युके पश्चात् पितृलोकको जाता है, फिर वहाँसे इस लोकमें प्रत्यावर्तन करता है—लौट आता हैं। जो देव-ताओंकी अर्चा करता वह स्वर्गादि लोकको जाता और पुण्यके क्षय हो जानेपर पुनः मर्त्यलोकमें आ जाता है। मृत्युके हाथसे वे अव्या-हति पाते नहीं। किन्तु जो तपस्वी मृत्युंजय शिव—अखंड ज्ञान स्वरूप महेश्वरके वक्षपर काली तथा दश महाविद्याका नृत्य देख पाता नहीं उसकी फिर मृत्यु होती नहीं। अखंडको खंडितकर दिखाती वही काली। काल तथा देश ये ही होते सृष्टिका आदि विकाश। सृष्टिके मूलमें रहती यही उल्लंगिनी काली। किन्तु उल्लं-गिनी कालीको—शिवके वक्षसे लग्न उल्लंगिनी कालीको सहज दृष्टिसे देखना संभव नहीं। नामरूपके अन्तरालमें छिपकर यह महाकाली असंख्य नामरूपोंकी सृष्टि करती। सृष्टि माने एकको

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

अनेक रूपोंमें विभक्त करना। लय माने अनेकको एकमें परिणत करना। जितने दिनतक अन्तरमें उस अनेकत्वकी लालसा रहेगी उतने दिन तक इस कालीके कवलसे निष्कृति नहीं। श्मशानमें यातायात करनेपर भी निष्कृति नहीं।

मैं श्मशान जाकर ध्यानमें बैठता, नामरूपके अन्तर्हित सत्ताके साथ संलग्न रहती जो शक्ति उसको देखनेके लिये। सत्ता हुआ महाकाल, महेश्वर, मृत्युंजय शिव; शक्ति हुई महाकाली, नृत्यरता नग्ना श्यामा। हृदयको पसार कर उस हृदयासनपर जीव चेतनाके भीतर भीतर जो काली एकसे अनेककी सृष्टि करती उनको देखने और धरनेकी चेष्टा करता। काली तो नृत्यरता चंचला। नृत्यके ताल तालमें उनके पदचिह्नको देखते देखते क्षण ही क्षण उन चरणों के स्पर्शका अनुभव करता था। किन्तु बहुत क्षिप्र, बहुत परिवर्तन शील थी उस नृत्यकी भंगिमा। अनेक तालोंसे नाचती वह काली— तारा, षोड़शी, भुवनेश्वरी, भैरवी, छिन्नमस्ता, घूमावती। ओह! कैसा वीभत्स रूप उनका! बहुत्वकी लालसासे जीव चेतनाकी कैसी दशा होती, यह मैं अपनी जीव-चेतनाको विश्लेषण कर देखता था। जन्म जन्मान्तरोंके दृश्य देख पाता था। स्पष्ट नहीं—छाया समान। हाय! कितने जन्म भटकता फिरा हूँ, कितने दुःखोंमें सुख मानकर डूब चुका हूँ, कितने अनित्यको नित्य समझकर उसके पीछे दौड़ चुका हूँ।

श्मशान बहुत ही निर्जन तथा लोकालयके बहुत दूर था। कॅक्स बाजारकी जन संख्या कम होनेके कारण मृतकोंकी भी संख्या

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

श्मशानमें कम ही थी। निर्जन श्मशानमें हृदयासन बिछा देनेसे श्मशाननेश्वरी सहज ही प्राप्त होती यह बात मैं सुन चुका था। नियत नृत्य ही जिसका स्वरूप वह तो नीरव शान्त श्मशानमें नाचेगी ही। किसी दर्शक वा ताल सुरकी भी वह प्रतीक्षा करती नहीं। इसी-से नीरव श्मशानमें जब हृदय पसार देता था तभी नृत्यरता उन्मादिनी कालीको देख पाता था। दशों दिशाओंमें अहरहः नृत्य निरता। कर जोड़ कर बोलता—'सेवे महाकालिकां पाददशकाम्'। दश ओर ही तुम्हारे चरण, दश ओर ही तुम्हारी गति। तुम्हारे हाथसे किसीको त्राण नहीं। तुम्हारे ही प्रभावसे बहुत्वकी उत्पत्ति होती। फिर तुम जिस दिन स्नेह-विह्वला होकर बहुत्वकी लालसासे निष्कृति देगी उसी दिन अव्याहति होगी। तुम अकेले ही नहीं प्रत्युत अनेक योगिनियोंको साथ लेकर नाचती। तुम कोटि योगिनी होकर विषयोंके साथ युक्त करती, लिप्त करती। छिन्नमस्ता तथा धूमावती होकर अशेष लांछना देती। फिर योगेश्वरी-जननी कमला होकर बहुत्व से अपने विराट शान्तिमय वक्षमें खींच लेती। मैं इस बार तुम्हारी शान्तिमय गोदीमें बैठ तुम योगेश्वरीको देखूँगा। पूजूँगा तुम्हारे शान्त चरणोंको। इसीसे हृदयको पसार दिया है। हृदय श्मशानमें अनादि कालसे जो नाच चल रहा है वह शान्त हो जायगा। अब मैं कमलाको अपने हृदय कमलमें पाऊँगा। इसीसे क्षण ही क्षण उस कालीके नृत्यका सहचर नहीं होकर उस नृत्यका द्रष्टा रहता था। फिर क्षण ही क्षण दिव्य चेतनाको खो बैठता और फिर उद्बुद्ध भी हो जाता। और फिर निरपेक्ष द्रष्टा होकर करालवदनाका नृत्य देखता।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

यहाँ काली बोलनेसे कोई इस चतुर्भुजा कालीको ही केवल नहीं समझना। विराट चिन्मयी कालीको समझ पानेकी चेष्टा करना। रूप तो विराटका ही खंड विकाश है। हृदयमें वह विराट काली देखी जाती। जहाँ से वासना उत्पन्न होती जहाँ विलीन हो जाती, जहाँसे जीवत्वकी स्पृहा उठती फिर जहाँ विलीन हो जाती, मैं अपने हृदयके विराट क्षेत्रमें उसी कालीको देखनेका प्रयासी होता था। किसी किसी समय आवरण एवं विक्षेप आकर उस विशाल भूमि में अवस्थित नहीं होने देते थे। इसीसे हृदयकुंडमें शिव तथा श्यामाको स्थापित कर उनके मंत्रका जप करते करते होमाग्निको प्रज्वलित करता। और आवरण तथा विक्षेपको डाकिनी तथा प्रेतिनी समझकर उनकी आहुति देता था। माँ कालीका ध्यान करते-करते जो ज्ञानाग्नि प्रज्वलित हो उठता उसमें आवरण एवं विक्षेपको हवन कर देता। इन आवरण और विक्षेपके साथ और भी सैंकड़ों छोटे बड़े बैरी आते थे। ध्यानमग्न नहीं होनेसे भीतरके ये बैरी सब देखे जाते नहीं। हृदय जितना ही स्वच्छ होता रहता अन्तरके गुप्त शत्रु सब उतना ही स्पष्ट रूपसे देखनेमें आते हैं। जीवनके आदिमें समझता था कि शत्रु बाहरमें ही रहते, अन्तरमें केवल भगवानका ही सिंहासन रहता, किन्तु दिन बीतने पर देख पाता कि बाहरकी अपेक्षा अन्तर ही में अनेक प्रवलतर शत्रु विराजमान हैं। श्मशानमें श्मशानेश्वरीका ध्यान कर उन शत्रुओंको एक एक करके उन्हींके संमुख वलिके उद्देश्यसे अर्पण करता था। केवल कामादि छै रिपु ही नहीं; अनेक रिपु, असंख्य रिपुही विद्यमान रहते उस अन्तर राज्य-

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

में—चित्ताकाशमें। किसी-किसी समय रिपुकुलका तांडव नृत्य देखकर भय भी हो जाता था। तब श्यामा माताकी दोहाई देकर विद्रूप की हँसी हँसता। केवल भाय साधनासे इन शत्रुओंके हाथसे त्राण पाना कठिन है। ज्ञान खड्गसे बलि देना पड़ता। ज्ञानाग्निके प्रज्वलित होनेपर कर्म एवं कर्मफल भस्मीभूत हो जाते हैं।

श्मशानमें बैठकर ध्यान करता माँ काली तथा महाकाल महेश्वरका एवं घरमें बैठकर ध्यान करता गौरी उमाशंकरी तथा भवानीका। एक ही शक्ति स्थान तथा समय विशेषसे विभिन्न भावसे प्रकटित होती। हृदय गुहाको प्रकाशितकर मेरे हृदयमें उदित होती चिन्मयी शक्ति, उमा तथा गौरी मूर्त्तिसे ही नहीं—विराट् चिद्घन सत्तारूपसे। चक्षु नहीं रहने पर भी वह गौरी देख सकती। पाँव नहीं रहने पर भी वह चल सकती। इसी से वह गौरी मेरे हृदय केन्द्रका अवलंबनकर अखिल विश्वमें अनुप्रविष्ट होती है। हृदयका अंधकार दूर होता उनकी चिन्मय दीप्तिसे। जड़ता दूर होती उनके प्रकाशसे संकीर्णता दूर होती उनकी व्याप्तिसे। उमा आतीं मेरे हृदयमें, मेरे हृदयसे निकलकर अन्यान्य प्रत्येक प्राणीमें अधिष्ठित होती। कैसा घन, कैसा उज्वल, कैसा व्यापक है उनका यह प्रकाश यह आविर्भाव दृश्य दृश्यसे योग सूत्रकी रचना करती मेरी हृदय रानी यह उमा। ज्ञानमय शिवके गलेमें पहनानेके लिये मालाकी रचना करती। विछिन्न दृश्यराशिके बीच अनुप्रविष्ट होकर वह माला गूँथती उमा। माला गूँथती और शिवके ध्यानमें तन्मय हो जाती। अपनेको गँवा देती शिवके अन्दर। ध्यान-स्तिमित लोचनसे मैं देखता उस

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

अर्द्ध नारीश्वर रूपको। उमा शिवके ध्यानमें तन्मय होते होते माला पहनाते पहनाते अपनेको गँवा डालती शिव सत्तामें। उमा हो जाती शिवानी भवानी। शिव शिवानीकी यह लीला दिव्य लोकमें बैठकर देखता। रूप नहीं, अवयव नहीं अथच अवयवके समग्त धर्म ही है मेरी उमा—शिवानीमें। उमाके हाथ नहीं तो भी माला गूँथती, उमाके मुख नहीं तो भी नानासुरसे बात बोलती। उमा महतो-महीयान्। मेरे मन प्राण कितने हूँ विशाल क्यों न हो उमा तो उनकी अपेक्षा बहुत बड़ी है। उमा उज्वल, पवित्र, मृदु, शान्त। उमा सुखकी खान शान्तिका प्रस्रवण। मैं शीतल होता स्निग्ध होता इस उमाको हृदयमें आकर्षणकर—जकड़कर। उमाके ध्यानमें तन्मय होते होते मैं भी विशाल होता, निर्मल होता, उज्वल होता, स्पर्श मणि हो जाता। पारसमणिके स्पर्शसे लोहा सोना होते तुमने देखा सुना होगा किन्तु पारसके परससे लोहाको पारस होते इस विश्वमें कहीं भी देखा सुना नहीं होगा। दिव्य राज्यमें अन्तर राज्यमें ऐसा भी होता। पारसके परससे लोहा केवल लोहा ही नहीं यावतीय पदार्थ पारस हो जाता इस दिव्य राज्यमें इसीसे कवि गाये थे—

'ए दया जे पेयेछे तार लोभेर सीमा नाइ।
सकल लोभ से सरिये फेले तोमाय दिते ठाँइ॥

भगवान बुद्ध राजसिंहासन त्याग किये इसी उमाके स्पर्शको पाकर, श्री गौरांग कंटक वन तथा समुद्रमें कूद पड़े इसी उमाको

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

कंटक वन तथा समुद्रमें देखकर। कोई भावसे उद्वेलित होता, कोई ध्यानमें समाहित होता। मैं भी आत्मविस्मृत होता। कभी धूलमें लोटता, कभी आहार निद्राको भूलकर ध्यान मग्न हो जाता। वायु मधुमय होती उमाके स्पर्शसे, धूल मधुमय होती उमाके स्पर्शसे, आकाश मधुमय होता इसी उमाके स्पर्शसे। वैदिक युगके ऋषि अपने प्रशान्त आश्रमके कदलीवृक्ष तथा विशाल वटवृक्षमें इस उमाको देखकर ही मुक्त कंठसे गाये थे—

'य ओषधिषु यो वनस्पतिषु तस्मै देवाय नमोनमः।'

स्पर्शमणि उमा अपने स्पर्शसे धीरे-धीरे मेरे हृदयको स्पर्शमणि बनाती। मेरे गलेसे अपना गला मिलाती, मेरी आँखोंसे अपनी आँखें मिलाती। उमा देखती मेरी आँखोंसे, सुनती मेरे कानोंसे। मैं भी देखता उमाके नेत्रसे, सुनता उमाके कानसे। अन्तर तथा बाहर परिपूर्ण हो जाता। छिन मैं जीव चेतना खो बैठता फिर छिन ही बाद मैं जीव चेतनामें लौट आता। जब जीव चेतना खो जाता तब मैं भी उमाके हाथसे हाथ मिलाकर माला गूंथता उस चिर सुन्दर विश्वनाथके लिये। शरीर वा इन्द्रियोंकी बात भूल जानेपर उमा होती मेरी और मैं हो जाता उमाका। उमा पुरुष या नारी तब पहचान नहीं सकता। उमा विराट शक्ति, मैं व्यष्टि शक्ति। उमा नदी मैं पोखरा नदीमें जब बाढ़ आती, उमा जब प्रेमसे उमड़ जाती तब वह हमें अपनी सत्तामें मिला लेती। बाढ़ आनेपर प्रेमसे उछल पड़नेपर नदी और तालाबका भेद रहता नहीं। मैं उमाका होता उमा मेरी हो जाती।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

उमाके साथ जितनी देर एकीभूत होकर रहता उतनी देर शिवको देखता अपने अंतरके तलदेशमें, चित्ताकाशके भी तलदेशमें— मेरे विशाल चिदाकाशमें। ज्ञानमय विशुद्ध शिव चिर अधिष्ठित हो रहे हैं मेरे चिदम्बरमें। उमामें हैं कला-काष्ठा, परिणाम, गति तथा स्थिति, शुद्ध शिव कला-काष्ठादि वर्जित। समय-समयमें उनको द्रष्टारूपसे, ज्ञाता रूपसे साधकोंके अनुभव करनेपर भी वे सर्वदा शुद्ध सर्वथा निष्कल हैं। मैं इस शिवको पाने योग्य अधिकारी अब तक भी हुआ नहीं केवल दूरसे ही उनको देख पाता।

अभी उमा ही होती मेरी आराध्या। यह उमा पराशक्ति, मैं होता अपराशक्ति। मुझमें हैं अष्टभाव-मन, बुद्धि, अहंकार, शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गंध, और उमामें है शिवात्मकता। उमा सर्वदा केवल शिवके ही ध्यानमें तन्मय इसीसे वह इतना उज्वल, इतनी सुन्दरी, इतनी सुखदा इतनी शान्ति प्रदा है।

समय-समयमें योगका अभ्यास करता था। मूलाधारसे ले जाता इस दुर्दान्त मनको अनाहतमें, अनाहतसे सहस्रारमें। गुरुके अनाहतसे मनको ले जाता गुरुके मूलाधारमें। गुरुके मूलाधारसे अपने मूलाधारमें मनको ले आकर उसको गुरु शक्तिसे शोधनकर लेता। मलिन मनको शुद्धकर सत्वगुणसे संजीवितकर धीरे-धीरे खींच लाता स्वाधिष्ठानमें, मणिपूरमें। अपने अनाहतसे फिर चला जाता गुरुके अनाहतमें। धीरे-धीरे तब अवतरण करता गुरुके मणिपूर, स्वाधिष्ठान, मूलाधारमें। चक्राकार क्रमसे मनको बार-बार घुमानेसे जब वह विशुद्ध हो जाता तब उसको ले जाकर प्रतिष्ठित करता हृदय

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

कमलमें। मन जिसको मननकर सकता नहीं, जिसको आयत्त कर सकता नहीं, अथ च जिसको बाद देनेपर मनकी मनन शक्ति रहती नहीं, उसको—उस प्राणको अनुभवकर पाता अपने हृदय कमलमें। मन प्रभाहीन हो जाता इसी प्राणके दीप्त प्रभावसे। इस अनाहतको केन्द्र बना प्राणका प्रच्छर्दन विधारण-प्राणायाम करता था। जीव प्राणबोधसे चलकर पहुँचता विराट प्राण बोधमें। तब देख पाता, अनुभव करता कि यह महाप्राण प्रति वस्तुके अभ्यन्तर अनुप्रविष्ट हो रहा है। जिसे नराधम बोलकर सभी घृणा करते उसके भीतर भी अनुप्रविष्ट रहता यह महाप्राण। अति तुच्छ जीव—कुत्ता बिल्लीके भीतर भी अनुप्रविष्ट होकर रहता यह महाप्राण। सभी इसी प्राणसूत्रमें ग्रथित हैं। विश्वके अनन्तरूप स्थावर जंगम इस एक ही प्राणसूत्रमें ग्रथित हैं। और भी भीतर प्रवेश करनेपर अनुभवकर पाता कि प्राण आधार है एवं विश्वके अनन्तरूप आधेय हैं। और भी अधिक प्रवेश करनेपर अनुभव करता कि विश्वके अनन्तरूपोंका उपादान यही प्राण है। प्राण आधार, प्राण आधेय, और प्राण ही उपादान है।

प्राणस्येदं वशेसर्वं
त्रिदिवे यत्प्रतिष्ठितम्।

इस प्राणको आश्रय कर ही विश्व रूपवान हो गया है। इस प्राणके आश्रयसे ही विश्व बच रहा है। फिर इस प्राणके रसमें विश्व निमज्जित होता है।

समय समयमें जीव प्राण बोधको विराट प्राणमे आहुति देता। प्राणको अपानमें आहुति देता, फिर अपानको प्राणमें आहुति देता।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

इस योग कौशलसे प्राण तथा अपानकी गति स्तब्ध हो जाती है। जीव प्राण बोध विलीन हो जाता विराट प्राणमें। पुनः जाग उठती भेद बुद्धि। फिर तब आहुति दे देता उस विराट चिन्मय बोधमें— उस महाप्राणमें जीव बोधको—क्षुद्र प्राणको।

प्राणमें अपानको आकर्षणकर पूरक करता और प्राणको अपानके साथ संयुक्त कर रेचक करता। प्राण और अपान सम्मिलित होनेपर जाग उठता विराट चिन्मय बोध। यही हुआ कुम्भक, इससे इड़ा तथा पिंगलाका बखेड़ा मिट जाता और सुषुम्ना-में प्राणवायु प्रवाहित होने लगता है। चिन्मय बोधमें उद्बुद्ध होने पर मैं पाता अपनी उमाको, गौरीको शंकरीको। इससे देहात्म बोध अन्तर्हित हो जाता। बिखर जाता प्रति धूलिकणमें; प्रति तृण, पल्लव, त्रसरेणुमें। हो जाता महान्‌से भी महान्, अणुसे, भी परम अणु। हृदय गुहामें लुके इस अणोरणीयान् महतोमहीयान्‌को पाके पथ श्रान्तिको भूल जाता।

पूर्वमें श्वास प्रश्वासके सहारे प्राणयाम कर चुका हूँ। एक नाक को दबाकर दूसरी नाकसे श्वास ग्रहण करता फिर दूसरी नाकको दबाकर पहली नाकसेश्वास त्याग करता था। कभी कभी श्वासको रोक रखनेकी भी चेष्टा करता था। यही तो हुआ हठयोगका प्राणा-याम। इस प्राणायामके सहारे शरीर तथा मनकी जड़ता दूर होती। ध्यानमें बैठनेपर यदि तंद्रा वा आलस्य आकर घेर ले तो इस प्राणा-यामसे तंद्रा आलस्य दूर हो जाता। ब्रह्मचर्य रक्षाका भी सहायक होता यह हठ प्राणायाम। ब्रह्मचर्यकी रक्षा न होनेसे यह प्राणायाम

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

नाना तरहकी व्याधि ले आता। इसकी चर्चा अभी दरकार नहीं। मैं अभी जिस प्राणायामकी बात करता वह है राजयोगका प्राणायाम। राजयोगमें नाक दबाकर श्वासके ग्रहण त्यागका दरकार होता नहीं। चिन्मय सत्ता—विराट प्राणके साथ जीवके व्याष्टि प्राणका संयोग घटित होनेसे बाहरके श्वास प्रश्वास स्वतः रुक जाते तथा अन्तर और बाहरकी भेद बुद्धि दूर हो जाती है। मैं योगयुक्त होता, विराट-चिन्मय प्राणके साथ—मेरी योगेश्वरी जननीके साथ।

देहत्व बोध—जड़त्व बोध जब तक रहता तब तक अन्तर और बाहरकी सीमाका लंघन हो पाता नहीं। तपस्याके प्रभावसे चिन्मय बोध जितना ही प्रस्फुटित हो जाता है उतनीही अन्तर और बाहरकी भेद बुद्धि कमती जाती है। हठ प्राणायामसे देह तथा मन शुद्ध होता इसमें सन्देह नहीं। वह शुद्ध देह मनही काल पाकर चिन्मय व्यापक प्राणको धारणकर सकता है। तब मैं बार बार प्रणत होकर बोलता—

'चिन्मयं व्यापितं सर्वं त्रैलोक्यं सचराचरम्।
तत्पदं दर्शितं येन तस्मै श्रीगुरवे नमः।

समुद्र तटमें अथवा निर्जन मैदानमें बैठ, कभी वा नदी तीर ही में बैठकर, फिर कभी छोटे पहाड़की चोटी पर चढ़कर उस चिन्मयको अपने अन्तरमें जगाता था। जगाता अन्तरमें, जगाता बाहरमें, खुले मैदानमें, दूर दूरान्तर व्यापी समुद्र वक्षमें। सारे आकाशमें जाग उठती वह जननी मेरी। जो विश्वाम्बरमें रहने वाली

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

उनको पाता मैं चित्ताम्बरमें। और भी गभीरमें डूबनेपर उनको पाता मैं चिदम्बरमें। चैतन्य ही उनका देह, चैतन्यही उनका गेह, चैतन्य ही उनके वसन भूषण। ऐसी चिन्मयीको जब मैं पाता तब उल्लास से भर जाता मेरा हृदय। उनको देनेमें जरा भी कुंठित होता नहीं लाखों जन्मोंके जितना जो कुछ जैवी सम्पद्। भिक्षा करनेका मन होता, अकिंचितकर अनेक उपकरणोंका बोझा हो रहा है यह क्षुद्र कंगाल जीव। मैं पूछता कि अज्ञानताके कुहक (माया जाल) में फँसकर क्यों ऐसा कंगालका वेष सजाया था—क्यों ऐसी भिक्षाकी झोली कंधेपर लटकाया हे तापतप्त मूढ़ क्षुद्र जीव? हँसी आती अपनी क्षुद्रता देखकर। यह हँसी आनन्दकी नहीं—घृणाकी। भीतरसे सोया एक सिंह जग उठके बोलता—दो, उझल दो यह भिक्षाकी झोली, कंधेसे उतारो रे कंगाल, खाली करो, सर्वस्व उझल दो। खाली होनेसे फिर पूर्ण हो जायगा। आवर्जना (कूड़ा) को दूर फेंक देनेसे सुगंधसे वह शून्य गुहा पूर्ण हो जायगी। छिन काँपते हाथसे छिन काँपते हृदयसे छिन दृढ़ मूठीसे फिर छिनही प्रशान्त हृदयसे इन भिक्षाके उपकरणोंको पूजाके बहाने अर्पणकर देता अपनी चिन्मयीके रंगीले चरणोंपर। तुलसी नहीं, गंगाजल नहीं, बिल्वपत्र नहीं, जरा सा चंदन भी नहीं। नहीं धूप, दीप वा नैवेद्य, तो भी मैं पूजा करता। अनाहत नादसे होती वाद्य ध्वनि। बजती हृदय मन्दिरमें झाँझ घंटा, मृदंगकी सुमधुर ध्वनि। अश्रुजलसे धो देता अपनी चिन्मयी उमाके सहस्र चरणोंको। हृदय विगलित आँसूसे अभिषेक करता—

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

सहस्त्रशीर्षापुरुषः सहस्राक्षः सहस्त्रपात्।
सभूमिं सर्वतस्पृत्वा त्यतिष्ठद्दशांगुलम् ॥

सीमामें असीमरूपसे इस जगत्को अतिक्रमकर तुम परिव्याप्त हो रहे हो। सहस्त्र तुम्हारे शिर, सहस्त्र तुम्हारे चक्षु, सहस्त्र तुम्हारे चरण हैं। इसीसे अपने हृदयके विगलित अश्रु तुम्हारे सहस्त्र शिरों पर ढालता हूँ। देखो न तुम अपने सहस्त्र नेत्रोंको खोलकर मेरी भिक्षाकी झोलीमें अभी भी कितनी आवर्जना (कूड़ा) पड़ी है। समेट लो अपने चरणोंमें उस कूड़ेके ढेरको। देने में यदि मैं कुंठित होता तो छीन लो अपने हजार हाथोंसे। हे बन्धु! हे प्रियतम, हे जीवनके अच्युत सारथि! क्या मैं भिखारीके भेसमें अब भी धूल-धूसरित रहूँगा और तुम बैठे चैन करोगे राजसिंहासनपर? लो पूजा, लो अश्रुवारिकी अभिषेक धारा। लो अश्रुसिक्त मौन वेदनासे भाराक्रान्त गलेका अस्फुट मंत्र। कितने दिनों तक की है इस प्रकार अपने प्रियतमकी पूजा, अर्चा, मंगल आरती तथा संध्याकी आरती। दी है भोग नैवेद्यकी थाली सजाकर अपनी भिक्षाभरी झोलीसे निकालकर अनेक विषाक्त लड्डू। जिस विषको आज तक कोई ग्रहण किया नहीं वरन् उस विषमें और भी विष मिलाके अतिविषाक्त किया है उस अतल विषभांडको उंडेलकर विषके लड्डुओंसे सजा दी है उनके भोग-नैवेद्यकी थालीको।

ध्यानयोगसे चित्ताकाशमें विचरण करते-करते पता पाया है अपने जीवन वृक्षके मूल (जड़) का। इस वृक्षका मूल तो ऊपरमें

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

हैं किन्तु शाखा तथा पल्लव नीचे हैं। आश्चर्य है यह वृक्ष ! कविगण इस वृक्षको अश्वत्थ बोलकर वर्णन किये हैं—

ऊर्द्ध्वमूलमधः शाखमश्वत्थं प्राहुरव्ययम्। अनेक शाखाविशिष्ट यह वृक्ष है। पल्लवोंकी सीमा-संख्या नहीं। मेरा जीवन (जीवात्मा) ही यह वृक्ष है। निष्कल शुद्ध आत्मा ही मूलमें इस वृक्षके हैं। अहंकार इसके कांड, मन तथा इन्द्रिय वर्ग इसकी शाखा प्रशाखा, असीम वासना एवं विषय सब इसके पल्लवस्थानीय हैं। मैं इस वृक्षके पत्र-पत्रमें शाखा-शाखामें अनेक जन्म चक्कर लगा चुका हूँ।

पुराना पत्र झड़कर जैसे नये पत्र उगते उसी तरह सैकड़ों वासना झड़ चुकी हैं, झड़ रही हैं एवं पुनः उग रही हैं। शाखाको तोड़ नहीं देनेसे, धड़को काट नहीं देनेसे, जीवत्वबोधको उत्पाटित नहीं करनेसे शुद्ध स्वच्छ निर्मल आत्मामें प्रतिष्ठित हुआ जाता नहीं। आज उस वृक्षके मूलका पता पाया है। किस प्रकार पहले उस वृक्षका अंकुर निकला था सो कहना कठिन है। चाहे जिस प्रकार जिस दिन निकला क्यों न हो तथापि अनेक जन्म घूमकर आज पता मिला है उस आदि अंकुरकी जड़का। ध्यानमें बैठकर तमरजो गुणको आयत्त करते-करते इन्द्रियवर्गको शुद्ध सत्वगुण सम्पन्नकर देता। नेत्र देखता रहता सत्वगुण सम्पन्ना मेरी दिव्य जननीको रूपोंमें, प्रत्येक रूपमें। त्वचा अस्थि मेरी शुद्धा जननीका स्पर्श पाता प्रत्येक अणु परमाणुमें। रक्तके विन्दु-विन्दुमें सुखमय परसकी चेतना जगती शुद्धा जननीके मृदु मधुर कोमल स्पर्शसे। लज्जित होते रिपुवर्ग, लज्जित होती भोगकी लालसा, मन्द हो जाती उनकी बाहर्मुखी गति। सुखमयीके

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

सुखस्पर्शसे शान्त होता, समाहित होता कुल इन्द्रियवर्ग। मन शान्त होता, उद्भासित हो जाती स्वच्छ बुद्धि। 'यो बुद्धेः परतस्तुसः।' यही बुद्धि है धी। गायत्रीके साधकगण इस धी का ही आवाहन किये थे। वैदिक ऋषिगण 'आवीरावीर्म एधि' बोलकर इस धी को ही प्रणाम किये थे। अतीव उज्वल है यह धी। उस परम ज्योतिर्मय पुरुषकी ज्योतिसे उद्भासित है यही धी। धी जल उठनेपर प्रज्ञाघन प्राप्त होता है। इस धीके जल उठनेपर वृक्षका मूल—अति सूक्ष्माति-सूक्ष्म मूल भी देखा जाता। बहुत दिन तक तपस्या करनी पड़ती इस उजाले अँधियाले संधिस्थानमें स्थित धी तत्वकी। इस उजाले अँधियाले मिश्रित धीकी समतल भूमिमें खड़े होकर मैं पूजता अपनी नवदुर्गा, महागौरी, सिद्धिदात्रीको। कविके सुरमें सुर मिलाकर गाता—

'जे टुकु एर रंग धरेछे, गंधे सुधाय प्राण भरेछे,
तोमार पूजाय लब से टुकु थाकते सुसमय।
छिन्न कर छिन्न कर आर विलम्ब नय,
धुलाय पाछे पड़ि झरे एइ जागे मोर भय॥'

ऐसा सुसमय जीवनके प्रत्येक दिनमें आता नहीं। तमोगुण रजोगुण अभिभूतकर प्रत्येक दिन तो चित्त इस अन्तराकाशमें उस चिन्मयीके चरणके नीचे आकर इस प्रकार डाला साजकर बैठता नहीं। आज बहुत सुसमय। नवद्वार बन्दकर बैठ गया हूँ। बाहर का भी फाटक बन्द हो जानेसे कोई कोलाहल भीतर आ पाता नहीं। इसीसे भर इच्छा देख पाता मेरी माताका दिव्य रूप। लो अर्घ

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

लो पूजा लो अश्रुसिक्त पत्र पुष्प। धूप दिया है कर्मफलोंका, दीप जलाया है तुम्हारी दिव्य दृष्टिकी भाँति, हृदय गुहा प्रकाशित हुआ है तुम्हारे प्रकाशसे। प्रज्ञामयी तुम भास्वर मयी तुम, तुम्हारी ही तेज शिखासे भस्मीभूत होता वह अनादि मूल उस अश्वत्थ वृक्षका। सुखा दो उस जड़को, जला दो अपनी दीप्तिसे। सारी वासनाओंका पर्यवसान होगा केवल एक ही वासनामें—तुम्हारे हमारे पूर्ण मिलनमें। आज ही वह शुभ दिन उपस्थित हुआ है, इसी से कहता, छिन्न करो छिन्न करो जरा भी देर मत करो। बार-बार वासनाका प्रवल आकर्षण घसीट ले जाता बहुत दूर तक। भूलजाने पर तुमको पीछेसे दबोचती कितनी ही लुप्त सुप्त गुप्त वासनाएँ जंगली सूअरके जैसे प्रवल वेगसे। लोटा देती धूलमें, विदीर्ण करती हृदय एवं सारे अंगोंको। रोता, अरी मैं रोता तुम्हारे रंगीले चरणों पै। फिर तुम्हारे रंगीले चरणोंको भलकर बार बार रोता। मेरे भीतरके व्यथाहत गुप्त मंत्रको कोई सुन पाता नहीं, गुप्त उपचार-को कोई देख पाता नहीं। केवल देख पाता मेरा धूल-धूसरित अंग। इसी प्रकार दिन कटने लगे उस दूरवर्ती कॅक्स बाजारमें।

सँझले भैया किसी-किसी दिन मेरे कारणसे बहुत विव्रत हो जाते थे। भावके नशेसे विभोर हो जानेपर किसी दिन रातमें खाना पीना होता था नहीं, नींद भी नहीं आती थी। वे मुझे अनेक प्रकारसे भुलावा देकर खिलाने वा सोलानेकी चेष्टा करते, जैसे ऊँघते बच्चेकी माता उसको खिलाने और सोलानेकी चेष्टा करती। मेरे हृदयमें कैसी ज्वाला कैसी पिपासा

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

थी सो भी वे गुप्त साधक समझते थे। वे स्वयं ब्रह्मनिष्ठ नहीं होने पर भी ब्रह्मज्ञ बड़े भाईके साथ रहकर साधकोंके हृदयमें कब क्या भाव आता वह बाहरी लक्षण देखकर समझ जाते थे। जिस दिन वे देख पाते कि एक दिव्य शक्ति मुझे अभिषिक्तकर रखती थी, दिव्यभाव रसमें निमग्नकर रखती थी उस दिन वे मुझे खिलानेका यत्न नहीं करते थे। गरम दूध वा अन्य कोई तरल खानेकी वस्तु चौकीके नीचे रख देते थे। गहरी रातमें ध्यानकी गंभीरता कमनेपर किसी दिन दूध पी लेता था, किसी दिन निराहार ही रह जाता था। अनाहार नहीं, दिव्य रस पानकर, दिव्य अनुलेपन देहमें लेपनकर दिव्य भावसमुद्रमें अवगाहनकर परम परितृप्तिसे रात काट लेता था। भूखको भी, मालूम भूख लगती इस दिव्य वस्तुको खानेके लिये। प्यासको भी मानों प्यास लगती इस दिव्य रसको पीनेके लिये। रातमें नहीं खानेपर दूसरे दिन सवेरे मँझले भैया बहुत यत्नके साथ कुछ खानेको देते थे। उनके पास जितना दिन था उतना दिन वास्तवमें मैं अपने ताईं निश्चिन्त था।

साधनाका इस प्रकार सुयोग पाकर मैं विज्ञानमें अर्थात् बुद्धितत्त्व में बेशी समय तक स्थित रहनेका सौभाग्य प्राप्त किया। इस बुद्धितत्त्वमें अवस्थित होनेही पर दूर दर्शन वा दूर दर्शनकी क्षमता प्राप्त होती है। दूर हो जाता निकट। चराचर व्याप्त विज्ञानमय क्षेत्र में स्थित होनेसे अनेक यौगिक शक्ति लाभ होती रहती है। एक दिन की एक घटना यहाँ कहता हूँ—कॅक्स बाजार हाइ स्कूलका एक छात्र जिसका नाम शचीन था वह बीच-बीचमें मेरे पास आया करता

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

था। समुद्रमें स्नान करने जानेके समय पहले पहल उससे परिचय हुआ था। दो चार दिन बात चीत होनेपर एक दिन रात नौ बजे ध्यान कालमें हठात् संकल्प उत्पन्न हुआ शचीन उस समय क्या करता था सो जाननेके लिये। इन्द्रिय एवं मनका क्षेत्र अतिक्रम कर विज्ञान क्षेत्रमें पहुँचनेसे ही शचीन जिस कमरेमें रहता था वह उद्भासित हो उठा। उस कोठरीके सामग्रियोंको देख पाने लगा। देखा कि शचीन चौकीपर बैठे हुए टेबुलपर पुस्तक रखकर पढ़ रहा है। सामनेमें टेबुल—लैम्प बर रहा है। कौन किताबके कितने पन्नेमें पढ़ता था सो भी देखा यहाँ तक कि वह पढ़ते-पढ़ते मनमें क्या सोचता था उसके भी चित्र देखने लगा। कौतूहल उत्पन्न हो गया कि वास्तविक क्या इस प्रकारसे देखना संभव है वा नहीं इसकी जाँचके लिये। दूसरे दिन शचीनसे भेंट होनेपर उसके घर जानेकी इच्छा प्रकटकी। कहना व्यर्थ होगा कि इसके पूर्व उसके घर मैं कभी गया नहीं था। उसके कमरेमें प्रवेशकर मैं बोल उठा—इस आलमारीके माथेपर एक छाता था न? शचीन उत्तर दिया—हाँ, छाता रातमें यहाँ रहता है, दिनमें व्यवहार करनेके लिये बाहर चला जाता है। छाताकी बात बोलने मात्रसे शचीन जिज्ञासु होकर हमें पूछ बैठा—यहाँपर छाता रहता है यह आप कैसे जाने? उत्तरमें उसे विगत रात्रिकी कुल बातें संक्षेपसे कह सुनाया। कथा प्रसंगसे यहँ भी जान लिया—वह जो पुस्तक पढ़ता था एवं जितना पन्ना पढ़ा था, उसका देखना भी हमारा ठीक ही उतरा। शचीन मेरी इस दूर दर्शिताकी बात ज्ञातकर कुछ भयभीत भी हुआ। कारण यह कि

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

उसकी कुछ नैतिक दुर्बलता थी। कहना अत्युक्ति होगी कि उस आशंकासे उसके चरित्रका संशोधन हुआ था और भी कई एक दूर दर्शन एवं दूर श्रवणकी घटनाएँ इस बीचमें घटित हुई थी।

किसी परिचित व्यक्तिको, इच्छा मात्रसे ही वह कहाँ रहता और क्या करता यह स्पष्ट रूपसे देख पाता था। संकल्पके प्रभाव से परिचित स्थानोंमें यातायातकी कोई असुविधा नहीं होती। विज्ञानकी उजालीमें बहुत दूरमें क्या होता, कौन क्या काम करता यह भली भाँति देख पाता, वार्ता भी सुन पाता था। खूब आग्रहशील हो उठा और भी गभीर भावसे इस दूर दर्शन तथा दूर श्रवणके अधिकार उपार्जन करनेके निमित्त। अनजान देशका मानचित्र वा अनजान व्यक्तिके फोटो (छाया-चित्र) देखकर उनकी अवस्थिति वा गति जाना जा सकता वा नहीं उसकी भी चेष्टा करने लगा। एक नवीन उन्माद प्रवेशकर गया भीतरमें। यह मोक्षका अन्तराय है इसमें सन्देह नहीं एवं इस प्रकारकी विभूतिके लाभसे अहंकारकी वृद्धि होनेकी संभावना रहती इसमें भी सन्देह नहीं। श्मशान एवं समुद्र-तटको छोड़ इस प्रकार विभूति लाभके लिये विज्ञानकी साधना करने लगा। वैराग्य शिथिल हो गया, आत्मज्ञान लाभकी प्रचेष्टामें भी शिथिलता दिखाई दी। किसी यंत्रकी सहायता विना दूर दूरान्तर देख पाऊँगा, वहाँकी वार्त्ताएँ सुन सकूँगा वा इच्छा मात्रसे विविध वस्तु प्राप्त कर सकूँगा, यह विद्यमान जागतिक पक्षमें एक अपूर्व लाभ है इसमें सन्देह नहीं, किन्तु मैं तो दिव्य लोकके अनुसंधान में चला हूँ और जिस शान्ति और आनन्दके अनुसंधानमें चला हूँ

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

उसकी अपेक्षा ये चमत्कारी विभूतियाँ अति तुच्छ हैं। उस समय वयस भी अल्प, स्नायु एवं मस्तिष्क सतेज थे। इसीसे बारंबार विभूति लाभकी आकांक्षा अन्तरमें प्रबल रूपसे झाँकी देने लगी (उचककर निहारने लगी)। सुना था कि काशीमें कोई एक साधु अनेक प्रकारके सुगंध निकाल सकते थे। सुना था कि कोई कोई साधु इच्छा मात्रसे भक्तोंके विविध रोगको दूरकर सकते एवं विपद् से त्राणकर सकते थे। यह भी सुना था कि कोई कोई साधु अपने दूर देशी भक्तोंको उनके रोगसय्या पर दर्शन देकर निरोगकर दिये। इसीसे छिन ही छिन मेरी उसी प्रकार विभूति प्राप्त करनेकी आकांक्षा होती थी। केवल छोटी छोटी विभूति ही नही, तन्मात्राकी साधनाकर ऋषि विश्वामित्रकी भाँति नवीन कुछ विशेष रचना करनेकी इच्छा उत्पन्न होती थी। तन्मात्राकी साधना कर थोड़े ही दिनके अभ्यन्तर सुगंध निकालनेकी कुछ शक्ति संचयकर ली। कुछ ही देर तन्मात्रा की साधना करनेपर बेला मौलसिरी (वकुल) जूही फूलोंकी सुगंध से मेरी कोठरी आमोदित हो जाती थी।

और भी सुना था कि भगवान शंकराचार्य परकाया प्रवेश किये थे। शरीरसे मन प्राण तथा इन्द्रिय वर्गको बाहर निकालकर दूसरेके शरीरमें प्रवेश कराया जा सके ऐसी विभूति लाभकी भी इच्छा कुछ दिन तक अन्तरमें उगी थी।

श्रीश्रीठाकुरको करमाटाँड़में चिट्ठी लिखकर मेरी यह विज्ञान क्षेत्रकी साधनाके बारेमें सूचित किया। एवं कुछ-कुछ विभूति भी प्राप्तकर रहा हूँ यह भी निष्कपट रूपसे जना दिया। वे संतुष्ट तो

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

हुए किन्तु प्रत्युत्तरमें मुझे उत्साहित किये नहीं। केवल उत्साहित नहीं किये सो नहीं प्रत्युत वे मुझे विभूति लाभकी प्रचेष्टासे विरत होनेका आदेश दिये। वे सूचित किये कि विभूतिकी साधना करनेसे संसारमें ख्यातिमान हो सकते किन्तु सो भी सीमाबद्ध है, सिवाय इसके मृत्यु एवं पुनर्जन्मके हाथसे परित्राण पा सकते या नहीं इसमें सन्देह है। विभूति मोक्ष लाभका अन्तराय है। भूलना नहीं, तुम आत्मज्ञानके लिये संसार त्यागकर बाहर निकले हो। लक्ष्यच्युत नहीं होना। माँ की ओर लक्ष्य रखकर चलना। जब जहाँ जिस व्यक्तिको विभूति दिखानेका प्रयोजन होगा वह माँ ही तुम्हारी ओर से दिखायेंगी। इससे अपना अहंकार भी न रहेगा और न बंधन ही होगा। अहंकारको आहुति देने जानेपर फिर नये प्रकार से अहंकारको पुष्ट नहीं करना। माँ के चरणोंमें मस्तक झुका दो, माँ को सब उत्सर्गकर दो, माँ के अभ्यन्तर डूब जाओ, इत्यादि।

मुग्ध हो गया उनकी चिट्ठी पढ़कर। ब्रह्मज्ञ गुरुकी वाणी शिर नवाकर ग्रहणकी। सहस्रबार उनको प्रणामकर विभूति लाभकी चेष्टासे विरत हो गया। पथका कंटक नहीं हटाकर मैं चला इस दिव्य जगत्के दिव्य पथसे। अहंकार किसी-किसी समय बहुत श्रान्त क्लान्त एवं अवसन्न होता। चिन्मय जगत्की अपूर्व शोभा, चिन्मय जगत्का श्रोत बल देता, चलनेमें सामर्थ्य प्रदान करता। तो भी अहं छिन ही छिन कहता कि वैराग्यकी कठोरता मैं अब सह नहीं सकता। यहीं कुछ दिन विश्राम करो, विभूतिके चाक-चक्य पोशाक पहन लो, किन्तु आनन्द धामसे आनन्दमयका दूत आकर

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

तब कानमें कह देता, वही तो शृंग (चोटी) देखा जाता है, वही तो आनन्द राज्यकी ध्वजा-पताका उड़ रही है। फिर तब अहं कहता कि पताका तो बहुत दूरसे ही देख चुका हूँ तथापि अवसन्न होकर बहुत दूर चला आया हूँ अब यहाँ विज्ञानकी पुष्प-शय्यापर सो कर कुछ दिन आरामसे रहूँगा। विभूतिकी साधना नहीं करनेपर भी विज्ञानकी पुष्प-शय्यापर सोनेसे जो आनन्द आराम पाऊँगा उसीसे मैं परितृप्त रहूँगा। खूब आराम और आनन्दका स्थान है यह विज्ञानमय क्षेत्र। किन्तु मैं तो अमृतका पुत्र हूँ, अहं हमें भुलाने चाहनेपर भी, वह चुल्लुभरसे ही तृप्त होनेसे मेरी तो तृप्ति होती नहीं। मेरे शुद्ध अहंकारके साथ रजोगुणाच्छन्न अहंकारका संघर्ष चलने लगा।

हम लोगोंके प्रत्येकका ही अहंकार क्षुधार्त कंगाल एवं बहुरूपिया है। पुत्र धनकी आकांक्षा त्याग करनेपर भी यश अर्थात् लोक ख्यातिकी आकांक्षा यह भूखा कंगाल, साधनाके उच्च शिखरपर चढ़नेपर भी सहसा त्यागकर सकता नहीं। सत्ताबोध दृढ़ होनेपर भी, चैतन्य बोध गाढ़ा होने पर भी, देखा जाता कि यह भिक्षुक अहंकार छिनही छिन पूरा यशोलिप्सु हो बैठता है। चैतन्य बोध में स्थित हो सकनेपर इच्छा वा वासनाएँ अधिकतर सहज ही परिपूर्ण हो जाती हैं। यशलाभकी स्पृहा पीछे पड़ जाती है। इच्छा यदि पद पदमें प्रतिहत हो तो मनुष्य अपनेको असहाय समझता है एवं तब नयी नयी इच्छाको अपने अन्तरमें स्थान देनेका साहसी होता नहीं। विज्ञानमय क्षेत्रमें स्थित होकर जो इच्छा की जाती

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

उसके अधिकांश ही सुगमतासे पूर्ण हो जाता है। इसीसे दुर्लभ वस्तु लाभकी आकांक्षा तब उत्पन्न होती है। भिखारी अहंकार अपनी असंभव इच्छाको ईश्वरकी इच्छा बोलकर दुनियाँके सामने घोषणा करता एवं अपनेको इच्छाके अन्तरालमें रखकर उस इच्छा की पूर्त्तिका प्रयासी होता है। जो भिक्षुक एक दिन था सामान्य भूखंडका प्रत्याशी वह होने चाहता वसुंधराका अधीश्वर। बड़ी बड़ी इच्छाको अपनी इच्छा न बोलकर इश्वईरकी प्रेरणासे इस प्रकार इच्छाका उदय होता है ऐसे बोलते न डरता न लज्जित ही होता है। विज्ञान क्षेत्रका साधक ईश्वरके साथ संयुक्त होता सही किन्तु जीवत्व बोधका विसर्जनकर ईश्वरके साथ मिल नहीं सकता है। इसीसे जीवकी जो इच्छा रहती उसमें ईश्वरकी लाग लगाकर उसको ईश्वरकी ही इच्छा बोलकर मान लेता है। यह साधना जगत्‌की एक संकटमय अवस्था है। विशेषतः तब भक्त और शिष्यनामधारी अनेक लोग आकर साधकको घेरकर खड़े हो जाते हैं। विषयासक्त मलीन जीव अपनी गुप्त विषय वासनाको, साधककी स्तुति तथा प्रणतिके बदलेमें, उनके योगके प्रभावसे सफल करनेका प्रयासी होता है। क्षुधित जीवका अहंकार—यश लालायित जैव अहंकार तब इस प्रकार भक्तगणको सुहृद बोलकर मान लेता है। सब संकल्प सिद्ध नहीं होनेपर निन्दाभाजन होना पड़ता हैं। अतएव निन्दाके भयसे तब जीवनके लक्ष्य पथको भूलकर हम लोग उत्कट प्रार्थना करने लगते उस तुच्छ वासनाकी पूर्त्तिके लिये। मोहको काटनेसे भी कटता नहीं। वैराग्य शिथिल हो जानेपर रजतमोगुण

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

अन्तरमें प्रविष्ट होनेपर विज्ञानके स्तरमें भी हम लोग बहुत नीचे उतर पड़ते हैं।

मेरे जीवनमें इस प्रकार संकट पूर्ण अवस्था कई बार ही आ चुकी है। विज्ञानके स्तरमें बढ जानेपर भी सब समय माँके साथ गभीर भावसे संयुक्त हो सका नहीं। कोई भी साधक की ऐसी क्षमता नहीं। रजतमोगुणके प्रभावसे अनेक समय गभीर भावसे माँके साथ संयुक्त रहा नहीं जाता। रजोगुणके प्रभावसे अनेक समय अपनी इच्छाको माँकी इच्छा मान लेनेपर भूल होता है। एवं तमोगुणके प्रभावसे अनेक समय माँकी इच्छाको अपनी इच्छा मान लेनेपर कर्ममें शिथिलता आ जाती है। शुद्ध सत्वगुणमें एकतानतासे दीर्घ काल तक अवस्थान नहीं किया जा सकता है। अहंकार बहुरूपिया होता इस त्रिगुणके प्रभावसे। फिर गुणातीत होना तो साधारण बात नहीं है। ज्ञानियोंके चित्तमें भी भ्रान्ति आती इन गुणोंके प्रभावसे।

'ज्ञानिनामपिचेतांसि देवी भगवती हि हिसा।
बलादाकृष्य मोहाय महामाया प्रयच्छति॥'

रजतमोगुणके प्रभावसे जब अपनेको विश्लेषण करना भूल गया हूँ तभी विभ्रान्त हुआ हूँ। पूर्वमें भी कह चुका हूँ कि विशुद्ध सत्वगुणमें सब समय रहा नहीं जाता। त्रिगुणके ऊपर चढ़ना होगा, ब्राह्मी स्थिति लाभ करनी होगी। यही जवनकी सार बात है।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

गीतामें श्रीकृष्णभगवान कहे हैं—
त्रैगुण्यविषया वेदा निस्त्रैगुण्यो भवार्जुन ।

माँ के साथ युक्त होकर अर्थात् ईश्वरके साथ युक्त होकर बहुत दिन तक चलते-चलते तमोगुण रजोगुण क्षीण हो जाता है। बुद्धि अर्थात् विज्ञान मानव जीवनकी उच्च वृत्ति है। यह उच्च वृत्ति आत्माके समीपस्थ है। मन तथा इन्द्रियके प्रभावका उत्क्रमणकर हम इस बुद्धिवृत्तिमें अर्थात विज्ञानमें पहुँचनेपर ईश्वरके अति समीपस्थ हो जाते हैं। किन्तु रजतम गुणका प्रभाव पड़नेसे बुद्धि सब समय स्वच्छ रहती नहीं। इसीसे भ्रान्तिके हाथसे इस विज्ञान-मय क्षेत्रमें भी हम एकान्त भावसे अव्याहति पाते नहीं। अतएव कौन तो माँ की इच्छा वा कौन अपनी इच्छा इसका निर्णयकर पाना अनेक समय कठिन हो जाता है। रजोगुण अहंकारको वशीभूत कर अहंकी इच्छाको अनेक समय माँ की इच्छा समझ बैठता है। जीवनका यह संघर्ष सहसा दूर होता नहीं है।

अहंकार यह स्पष्टरूपसे देख पाता कि सत्ताको बाद देनेपर उसका अपना अस्तित्व बिलकुल नहीं रह जाता। विराट् सत्ताके परिमाणमें वह बिन्दुमात्र ठहरता। उस बिन्दुको घेरकर और भी शत सहस्र बिन्दु यदि उसका यशोगान करे तो भी वह स्वयं बिन्दु ही रहेगा। किन्तु तथापि रजोगुणके प्रभावसे अपनेको एकान्त भावसे सत्ताके साथ मिला दे सकता नहीं। रजोगुणके प्रभावसे वह सत्ताका ही अंश है ऐसा कहनेपर समझनेपर भी सत्ताको अनेक

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

समय ढाँक कर अपनी महिमाके प्रचारमें अग्रसर हो जाता है। छाया प्रकाशकी सत्तासे सत्तावान होकर जैसे प्रकाशको ढांक देता है वैसे ही अहंकार भी सत्ताकी ही सत्तासे सत्तावान होकर सत्ताको ढँक देता है। हाय, उस विराट् सत्ताको यह क्षुद्र अहंकार कितना काल तक ढाँकके रख सकता है? विभूति लाभकी आकांक्षाका अन्तरसे त्यागकर दिया है तथापि रजतमोगुणका एकान्त रूपसे त्याग करना संभव हो पाता नहीं। यह देहधारणका दोष, मनका दोष वा जीवचैतन्यका दोष है।

सत्वगुणका प्रभाव जब बढ़ता तब माँ के साथ—ईश्वरके साथ युक्त होकर क्या ही निर्मल शान्ति, क्या ही अक्षय सुखका अनुभव कर पाता। अनजानेमें रजतमोगुण आकर उस शान्तिधामसे नीचे खींच लेता है। कुहासेसे आच्छन्न वस्तु जैसे देखी जानेपर भी स्पष्ट देखी जाती नहीं उसी प्रकार रजतमोगुणसे आच्छन्न अहंकार इस सत्ताको स्पष्ट अनुभव कर सकता नहीं। इसीसे विभ्रान्ति घटित होती है। अहंकार छिनमें महिषासुर होता, छिनमें रक्तबीज और छिनमें ही शुंभ निशुंभ हो जाता है। फिर सत्वगुण जब अंतरमें उतर आता है तब हो जाता है अनुगत भक्त। छिन ही मिलनका अमृतमय सुख छिन ही विरहकी तीव्र ज्वाला। 'साधन समर' ग्रन्थके दूसरे तीसरे खंडमें इस अहंकारके विषयमें विशेषरूपसे विश्लेषण किये हैं श्री श्रीगुरुदेव अपनी लेखनीसे। उसी साधन समर द्वितीय तृतीय खंडको पढ़कर तदनुसार ही मैं अपना विश्लेषण करने लगा। माँ के निकट–चिन्मय सत्ताके निकट पुनः पुनः प्रार्थना करने लगा।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

"आवीरावीर्मएधि," "धियोयोनः प्रचोदयात्"।
"मा मा ब्रह्मनिराकरोत्, अनिराकरणमस्तु, अनिराकरणंमेऽस्तु।"

इत्यादि मंत्रोंका जप करने लगा। जीवन वीणामें ये मंत्र अहरहः बजने लगे। 'जनन-मरण-भ्रंशि ब्रह्मचैतन्यमीड़े' इसमंत्रका उच्चारण करते-करते उस चिन्मयी सत्ताको प्रणाम करने लगा। छिन ही मनमें होता कि अधिक व्यवधान नहीं है। वे तो अति सन्निकटमें ही हैं, शीघ्र ही उनके अभ्यन्तर निमज्जित होकर विदेह कैवल्य लाभ करूंगा। किन्तु हाय! बहुरूपिया अहंकार उस कैवल्य लाभकी वासनाके अन्तरालमें भी कितनी गुप्त वासना छिपाकर रखता वह सहसा समझा नहीं जा सकता है। अधिकांश रास्ता तय करके भी एक भीषण संधिक्षणमें आकर उपस्थित हो गया इस विज्ञानमय क्षेत्रमें।

दीर्घकाल तक निरंतर श्रद्धाके साथ सेवा करनी होगी उस आत्मीकी, उस विभुकी यही पूर्वाचार्यगणका निर्देश है। और भी दीर्घकाल तक, अधिक श्रद्धासे सेवा करनी पड़ेगी। उनमें लग्न होना होगा, मग्न होना पड़ेगा। मैं करुणामयकी करुण भिक्षा मांगने लगा। अति तुच्छ वासनासे अति बड़ी वासनाके हाथसे भी मुझे छुड़ानेके लिये मैं बार-बार निवेदन करने लगा। यह भी था जीवनका एक दुर्दिन।

मैं गाने लगा—

इतने दिन तो थी न हमें कोई व्यथा।
सारे अंगोंमें चुपड़ी थी मलिनता।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

अब इस शुभ्र गोदके तरे।
व्याकुल हृदय रोते मरे।

हमें देना नहीं जी देना न अब धूलमें लेटने। विभूतिकी साधना करना वा सारे अंगोंमें धूल चुपड़ना यह एक ही बात है। इसको दिन प्रति दिन समझने लगा। चिन्मय सत्ताके साथ युक्त होकर जो आनन्दका आस्वाद पाता उसकी अपेक्षा विभूति लब्ध गौरवमय जीवन तुच्छातितुच्छ है यह भी समझने लगा। किन्तु प्रार्थनाके अतिरिक्त, निष्ठाके साथ तपस्या करनेके अतिरिक्त दूसरा रास्ता ही खोज पाया नहीं, विभूति लोलुप अहंकारके हाथसे परित्राण पानेका। क्षुधार्त अहंकार शक्ति संचय कर भगवानका सिंहासन दखल करने चाहता। रजोगुण समय समय में प्रबल होनेसे यह अहंकार दिव्य शक्तिके समक्ष आत्म समर्पण नहीं कर शक्तिको ही काबू करनेकी चेष्टा करता है। इससे संग्राम चलते रहता है। सत्वगुण प्रबल होनेपर अपनेको आनन्दमयके समीपस्थसा मालूम पड़ता, फिर रजोगुण तमोगुणकी प्रबलता होनेपर महाव्यवधान देखा जाता उस प्रेममयके बीच।

प्रेममयका अनुसंधान पाना, प्रेममयका स्पर्श लाभ करना और उस प्रेमसमुद्रमें निमज्जित होना एक बात नहीं है। नदीको देखना, उसके जलको स्पर्श करना, नदीका जल पान करना एवं नदीमें स्नान करना एक सी बात नहीं है। विज्ञानमय क्षेत्रमें प्रेममयको देखा जा सकता, प्रेममय का स्पर्श प्राप्त हो सकता है किन्तु उनमें नितान्तरूपसे सहसा निमज्जित नहीं हुआ जाता है।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

देखते देखते कॅक्स बाजारके सुखके दीन बीत गये। मँझले भैयाको कलकत्ता लौट जाना पड़ेगा। मैं उनके साथ आया था इससे हमें भी वापस जाना ही होगा। वे मुझे अकेले छोड़ जानेमें सहमत नहीं हुए। कॅक्स बाजार एक छोटा शहर है इसीसे वहाँके अनेक लोगोंसे थोड़ा बहुत परिचय हो गया था। कई एक ब्राह्म-साधक भी वहाँ थे। एक वकील ब्रह्मसाधकके अनुरोधसे उनके उपासना मन्दिरमें दो तीन दीन गया था। एक दिन वकील महाशय एक गीत गाये—

विश्व व्यापकर विराजते यदि
(तो) पाता न क्यों जी खोजकर। इत्यादि

फिर गाने लगे—

तुम हो विपट-लता जलद गातमें,
शशि तारा अरु सूरजमें।
मैं आँखोंमें वसन बाँध,
रो मरता अँधियारे में।
मैं देख पाता न कुछ,
समझ पाता भी नहीं।
मुझे दोजी सिखा, दो समझा। इत्यादि।

अधिक वयस होने पर भी उनका गला मीठा था। गाना समाप्त हो जानेपर वे मुझे कहने लगे—जो सारे विश्वमें व्याप्त हैं उनकी

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

मूर्त्ति गढ़कर आप लोग क्यों उपासना करते ? मैं प्रत्युत्तरमें उनसे कहा—अभी तो आपने ही गाया है—

तुम हो विटप लता जलद गात में,
शशि तारा अरु सूरजमें।

जो विटप लता, शशितारामें हैं वे तो प्रतिमाके भीतर भी हैं। वे अग्निमें, वायुमें हैं, वे पत्थलके खंभेमें भी हैं। गाछमें जिनको देखता, लतपत्तेमें जिनको देखता, चंद्र और सूर्यमें उन्हीको देखता एवं देखता उन देवदेवियोंमें भी। इसमें दोष क्या, कहिये ? और भी कहने लगा-दोष होता ब्रह्मको बाद देकर वस्तुको वस्तु रूपसे देखना। दोष होता ब्रह्मको बाद देकर मूर्त्तिको केवल मूर्त्ति-रूपसे देखना, अथवा देवदेवी रूपसे देखना। वस्तुको वस्तुरूपसे जो देखते वे वारंबार इसी लोकमें गतायात करते हैं। देवताको देवताके रूपमें जो देखते वे पुनः पुनः देवलोकमें ही गतायात करते। और जो वस्तु वा देवतामें आत्माको, ब्रह्मको देखते वे तो आनन्द स्वरूप आत्माको प्राप्त करते हैं। जो सारे विश्वमें हैं, विटप लताओंमें जो रह रहे हैं बे मूर्त्तिमें भी अवश्य रहते हैं। यह यदि स्वीकार नहीं करते तब तो आपका भी अखंड-व्यापक दर्शन हुआ नहीं। अखंडको खंडितकर, असीमको ससीमकर देखे। मेरे इस युक्तियुक्त कथनसे वे स्वयं एवं उनके बंधुवर्ग मुग्ध हो गये। मैं कलकत्ता वापस जाऊँगा यह सुनकर वे मुझे और भी कुछ दिन कॅक्सबाजारमें रहनेका अनुरोध किये। वहाँ रहनेसे मेरे वासस्थल

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

तथा भोजनकी भी व्यवस्था वे कर देंगे यह भी अंगीकारकर चुके थे। किन्तु मँझले भैयाने मुझे छोड़ा नहीं—साथ ही ले गये।

कलकत्ता लौट आनेके कुछ दिन कबल हम लोग श्री आदिनाथ महादेवका दर्शन करने चले। श्री आदिनाथका मन्दिर महेशखाली टापूके एक भागमें अवस्थित है। छोटे पहाड़पर वह मंदिर है। पहाड़का पदचुम्बन करते हुए समुद्र वह रहा है। कॅक्सबाजार से महेशखाली टापू देखा जाता। हमलोग एक संपान (डोंगी) किरायाकर समुद्रपार होकर महेशखाली तथा आदिनाथ पहुँचे। कॅक्स-बाजारके एक पुलिस अफसर मँझले भैयाके मित्र हो गये थे। वे भी हमलोगोंके साथ गये थे। उनको कॅक्सबाजारसे १०।१२ मील दूर एक टापूपर शंख और सीपको बीननेका बहुत शौक था। ज्वारके समय टापू डूब जाता हे फिर भाटाके समय उग जाता है। जलके नीचे उतर जानेपर शंख, अनेक तरहके सीप एवं नाना प्रकारके समुद्री छोटे जीव उस टापूमें मिलते हैं। मँझले भैयाको भी शंख सीप प्रभृति चुननेके लिये प्रोत्साहित किये। मँझले भैयाके मित्र हमलोगोंके साथ मन्दिर गये थे या नहीं वह हमें ठीकसे याद नहीं आती। हमलोग खूब तड़के स्नानकर श्री आदिनाथजीके दर्शनको चल पड़े। सवेर नौ बजेके भीतर ही वहाँ पहुँचे। देवदर्शनके पीछे जलपान किया गया। पश्चात् काल हम लोगोंकी संपान (डोंगी) चल पड़ी उस टापूकी खोजमें जहाँ शंख इत्यादि मिलते। पालके सहारे ढेवके तालसे नाचते हुए अगाध समुद्रके वक्ष (सतह) पर वह छोटी डोंगी पूरी शानसे चलने लगी। कुछ देर बाद आंधी

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

उठी। समुद्रकी उत्ताल तरंगमें डोंगी झोंका खाने लगी। छिन ही ढेव डोंगीको आठ-दश फुट ऊँचा उठा देता, छिन हो फिर उसे दो ढेबके बीच खाईमें फेंक देता। दोनों ही ओर पहाड़ प्रमाण ऊँचा ढेव उसीके बीच छोटी डोंगो। एक भी ढेव आकर यदि इस डोंगीके ऊपर झोंका खाकर गिर पड़ता तो डोंगीके साथ ही हमलोग भी चकनाचूर होकर उस समुद्रमें निमग्न हो जानेको बाध्य होते। कैसी रुद्रमूर्त्ति उस समुद्रकी! प्रलय प्रायः ऐसे ही होता है। मँझले भैयाके मित्र अत्यन्त भयभीत हुए। लज्जाके कारण प्रगट रूपसे विलाप नहीं करनेपर भी वे भीतर ही भीतर विलाप करने लगे। कातर कंठसे वे बोलने लगे—हाय! कैसा अशुभ मुहूर्त्तमें यात्राकी थी। अविनाश बाबू! आज निश्चय ही मरना होगा। मेरी बुद्धिके दोषसे आपलोग भी प्राण गँवाए। यह निर्दोष युवक भी प्राण गँवाया। डोंगीका मुसलमान माँझी भी डरसे अल्ला-अल्ला करने लगा। चट्टग्रामकी बोलीमें वह कह सुनाया—आज अब रक्षा नहीं, ऐसी आफतमें अल्ला मुझे कभी नहीं फेंका था। मरनेपर उसके छोटे बच्चोंका भरणपोषण कौन करेगा इस सोचसे भी वह दुःख प्रगट करने लगा।

मँझले भैया निर्भीक सैनिक जैसे डोंगीके मत्थे पर बैठ डाँड़ चलाना शुरू कर दिये। माँझीको पतवार थामनेके लिये ढारस दिये। प्राय दो घंटा उस आँधीका वेग था। कई एक सौ हाथके दरमियान हम लोगोंकी डोंगी दो घंटा तक आँधीके साथ युद्धकी

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

थी। आँधी बन्द हुई, ज्वरका वेग कम होकर भाटाका वेग आरंभ हुआ, कुछ ही दूरीपर जमीन देखने में आई। देखते ही देखते भाटाके प्रभावसे जल और भी घट जानेसे देख पाया कि एक डूबे टापूके ऊपर ही हम लोगोंकी डोंगी ज्वारके समय समुद्रके ऊपर भसकर आँधीके साथ लड़ाई की थी। माँझी टापूके किनारे डोंगीको भिड़ा दिया। तब तीसरा पहर हो रहा था। जिस उत्साहसे मझले भैया वा उनके मित्र शंख बीनने आये थे वह उत्साह अब उनमें नहीं। तो भी वे कुछ देर टापूमें घूमकर दो चार शंख, कौड़ी, घोंघा बीनकर स्वस्थानको लौट जानेका विचार किये। प्राय १२ मील रास्ता समुद्रसे पार होना होगा। हवा प्रतिकूल, पाल चढ़ाना बनेगा नहीं। केवल डाँडके सहारे खेना पड़ेगा। डूँगी कॅक्स बाजार की ओर चली। सूर्य डूब चुके थे। कृष्णपक्षकी अँधियारी चारों ओरसे घेर ली। समुद्रका नील जल काले आकाशके साथ एकसा हो गया। चारों ओर घोर अँधकार। दिशाका निर्णय करना कठिन हो गया। इससे और एक नवीन समस्या उपस्थित हो गई। आकाश में तारे उगे थे। ध्रुवतारा और सप्तर्षिको दृष्टि पथमें रखके दिशा का निर्णय किया गया। हम लोग उत्तर दिशामें चल रहे थे। ध्रुवतारा उत्तर दिशामें रहनेके कारण मानो हम लोगोंके विपद्के समयमें पुकारके कहता था—तुम लोग इस ओर चले आओ। बिना आहार निद्राके प्राय सारी रात काटकर दो बजेके बाद हम लोग कॅक्स बाजारका निशान देख पाये। तड़के प्राय चार बजेके समय हम लोगोंकी संपान (डोंगी) अपने स्थानपर पहुँची।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

समुद्र गर्भमें यह भीषण विपद्के समय मेरे मनकी अवस्था कैसी हो रही थी वह अब तक कहा नहीं। मेरे मनमें जीवन नाशकी कोई शंका उपस्थित हुई नहीं। मैं इस विपद्के समय शान्त मनसे बैठकर माँकी कौतुकपूर्ण लीला देख रहा था। मैं जानता था—अर्थात् विश्वास करता था कि मेरी आयु तब शेष हुई नहीं थी। मैं जिनके विश्वमें आया हूँ उनका काम अभी अधूरा ही पड़ा है। वे अपने विश्वमें विशेष कामोंको सहेज कर मुझे भेजे हैं। वे काम पूरे नहीं हो जानेसे मेरे जीवनकी यवनिकाका पतन होना सम्भव नहीं। इस दृढ़ विश्वासके साथ नील आकाशमें देखता था एक स्नेहघन मातृमूर्त्तिको। कुमारी कन्याके वेषमें माँ अभय मुद्राहाथसे नील आकाशमें घूम घूमकर विचरती थीं। इस अभयाको, इस वरदाको देख घोर विपद्में भी किसकी शंका दूर न हो? करुणाघन मातृमूर्त्ति। गौरवर्ण रक्तवस्त्र परिहिता नील आकाश मार्गमें भ्रमण-निरता वह कुमारी जननी। नेत्रमें करुणाकी आभा, मुखमें प्रसन्नताकी मुस्कराहट, हाथमें अभय मुद्रा। मैं रह-रहके उस करुणाघन माँ को ही देखता था। समुद्रमें नौका डूब जानेपर भी, मेरे शरीरके डूब जानेपर, मेरे शरीरसे आत्मा निकल जानेपर भी मैं अपनी माँ को पाऊँगा यह भी मेरा दृढ़ विश्वास था। किन्तु समय नहीं होनेपर शरीरसे आत्माका उत्क्रमण होता नहीं।

उत्क्रामन्तं स्थितं वाऽपि भुंजानं वा गुणान्वितं,
विमूढा नानुपश्यन्ति पश्यन्ति ज्ञानचक्षुषः। गीता

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

जो देह त्याग करते अथवा जो देहमें रहकर विषय भोग करते, एवं जो त्रिगुणके परिणाम सुख दुःख तथा मोहके साथ संयुक्त होते उस आत्माको विमूढ व्यक्तिगण जान सकते नहीं। जिनकी आँख खुल गई है वे ही उस आत्माकी स्थिति एवं उत्क्रमणका विषय जान सकते हैं।

विज्ञानमय कोषकी साधना द्वारा मैं इतने भर समझनेका अधिकारी हो गया था कि मेरी आत्माके उत्क्रमणका समय तब तक नहीं आया था। तपस्या करनी बाकी थी। विश्वपिताके अनेक काम भी तब तक बाकी था। सबसे बेशी आनन्दित और निर्भय हुआ था मेरी विश्वेश्वरी जननीका करुणाघन मूर्त्तिको सामने देखकर।

कॅक्स बाजार तीर्थ वा पुण्य भूमि न भी हो सके तथापि मैं तो उसी कॅक्स बाजारमें बैठकर मेरे दिव्य जीवनका बहुत कुछ लाभ किया था। उस भूमिको प्रणामकर उसे मातृभावसे चूमकर उस भूमिकी धूल शरीरमें लेप, कर जोड़, विदाई मांगते मांगते एक दिन चट्ट ग्रामी स्टीमरमें जाकर चढ़ना पड़ा। बहुतेरी संपद् लाभ की उस कॅक्स बाजारकी भूमिमें बैठकर। जानता नहीं कि पुण्यभूमि श्री आदिनाथ जी वा श्री चन्द्रनाथ जीका प्रभाव उस कॅक्स बाजारके ऊपर कुछ था या नहीं। चट्टग्राममें दो दिन रहकर चन्द्रनाथ जाके पहुँच गया।

श्री चन्द्रनाथ स्थानमें उस समय अनेक पंडे थे। पंडाके छड़ीदार वटकृष्ण पालका नाम सुनकर हमलोगोंको विशेष आदरके

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

साथ पंडाजीके मकानपर ले गये। मँझले भैयाको तथा मुझको भी वटकृष्णपालके आत्मीय पहले समझ लिया था, इसीसे आदर सत्कारकी कमी नहीं थी। खाट पलंग वाला कमरेमें हमलोगोंके सामानसामग्री रखवा दिये। बहुत सजाया हुआ कमरा था। किन्तु वार्तालापके प्रसंगसे जब वे सुनपाये कि मँझले भैया वटकृष्णपालके एक व्यक्ति वेतनुभोगी कर्मचारी थे एवं मैं उनका सहचर एक जन बेकार युवक था, तब वे तुरत समझ लिये कि इनसे प्राप्तिकी आशा कम। श्लाघा, प्रेम, स्नेह, मधुरभाषण, आशीर्वाद सभी कम हो गये। पंडाजीका मुख मलीन हो गया। मँझले भैया भी उनका भाव समझकर एक बेला वहाँ आहार विश्रामकर तीसरे पहर एक छोटा सा अच्छा पक्का मकान १५ दिनके लिये किराये पर लिये। कहना व्यर्थ कि हमलोग वहाँ अपने खर्चेसे रसोई बनाकर ही भोजन किये थे, पंडाजीके घर खाये नहीं। मँझले भैया आनेके समय पंडाजीसे कहे—आप तो बड़े आदमीयोंके पंडा हैं, हमलोगोंके जैसे गरीबोंका यहां रहना शोभेगा नहीं इसीसे दूसरी जगह जा रहा हूँ। उनको घर भाड़ेके बदले कुछ दक्षिणा भी मँझले भैया दे दिये। हमलोग अपने किरायेके मकानमें आकर स्वाधीन भावसे वास्तवमें बहुत सुखसे रहे। मँझले भैयाके पूर्व पुरुषोंमें कोई कोई तांत्रिक साधक थे, इसीसे उनके रक्तमें भी उस तांत्रिक साधनाकी कुछ मादकता थी। श्री चन्द्रनाथ विरूपाक्ष प्रभृतिके दर्शनके बाद वे मुझे चन्द्रनाथमें छोड़कर कुमिल्ला जिलाके अन्तर्गत तांत्रिकोंकी एक पीठभूमि 'मेहेर' नामके स्थानमें चले गये। वहाँ उस समय

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

मेला था। मैं अकेला निर्जन मैदानमें वा व्यासकुंडके तटपर साधना कर समय अतिवाहित करने लगा। व्यास कुंडके कुछ ही दूरीपर एक पहाड़ीपर केला तथा पपीतेके बगीचेमें सुशोभित एक आश्रम देख पाया। गेरुआ पताका तथा गेरुआ वस्त्र पहने साधुको देखकर समझ लिया कि यह एक आश्रम है। आश्रममें प्रवेशकर उन साधुओंके मतवाद लेकर कुछ आलाप आलोचनाकर रहा था ऐसे समयमें आश्रम संलग्न गुफासे एक जन साधु निकल पड़े। यही साधु पीछे हमलोगोंके एक सुहृद् मित्र हुए। वे उक्त आश्रमको छोड़ पश्चात् काशी धाममें रहने लगे। तपस्वी श्रीमत् नीलानन्द सरस्वतीको तुममें अनेकों प्राय जानते। श्री चन्द्रनाथजीकी कृपासे तथा व्यास देवके प्रसादसे ही उक्त तपस्वीको हमलोग एकान्त सुहृद् रूपसे पाये।

हमलोग १०।१२ दिन उस चन्द्रनाथमें थे। सरस्वती पूजा के पहले ही कलकत्तेमें श्री श्रीठाकुरके चरणप्रान्तमें आकर फिर उपस्थित हो गया। श्री श्रीठाकुर प्रसन्न वदनसे माथेपर हाथ रखके बहुत आशीर्वाद दिये।

समाधि

सत्ता एवं चिन्मयके बोधमें स्थित रहते समय देह इन्द्रिय तथा मनको भूल जाता। भूलजाता नामरूपमय इस स्थूल जगत्‌को।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

जितना ही चिन्मय बोध गभीर होता उतना ही जगत् बोध मिटता जाता। किसी देव देवीकी मूर्त्ति भी वहाँ रहती नहीं। एक्स-रेका किरण जैसे चाम और मांसको भेदकर यहाँ तक कि हाड़ कों भी भेदकर निकल जाता उसी तरह चिन्मय बोध यावतीय स्थूल दृश्य वस्तुको भेदकर अन्तरकी ओर बिखर जाता। चिन्मयबोध आकाशकी नाईं व्यापक, स्वच्छ अथच सघन है। इस चिन्मयबोधको ही अपनी सत्तारूप अनुभव करता। पहले 'मैं' कहनेसे जैसे देह याद पड़ता था अब मैं कहनेसे इस चिन्मय सत्ताकी बात ही याद पड़ती। मैं एक विराट् सत्तारूपसे वर्तमान हूँ। यह सत्ता प्राणमय, चैतन्यमय है। देह इन्द्रिय तथा नाम रूपमय जगत्के बोझसे ही हमलोग वशी भाराक्रान्त होते। धारणा एवं ध्यानके सहारे नामरूपके अन्तर्निहित जो सत्ता रहती वह उद्भासित हो उठती है। पहले नामरूपोंको छिन्न भिन्न देखते उनको ही अब एक सूत्रमें गूँथे मणिमाला जैसी देखता हूँ। एक ही सत्ता सूतके जैसे सब नामरूपको गूंथकर एक विराट् मालाकी रचनाकी है। पीछे देखपाया कि जो सत्ता थी सूतके आकारमें वही सत्ता होती नामरूपका आधार। सत्ताके ही ऊपर यावतीय रूप अवस्थित है। धारणा और ध्यान और भी गभीर होनेपर अनुभव करता कि सत्ता ही नामरूपका आकार ग्रहणकी है एवं सत्ता ही नाम रूपका आधार-आश्रय स्थान है। विराट् सागरके वक्षः स्थलपर जैसे कितनी तरंगें अठखेली करती हों, किन्तु उन तरंगोंकी सागर जलसे पृथक कोई सत्ता नहीं। धारणा गाढ़ी होनेपर ध्यान होता।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

धारणामें जड़की प्रतीति खूब रहती। ध्यानसे चिन्मय बोध जमता जाता है। इसीसे जिस मूर्त्ति वा रूपको लेकर धारणाका अभ्यास करता वही ध्यानमें चिन्मय होता जाता। क्रमशः जड़ रह जाता नहीं, रहता चैतन्य। रूप रहनेपर भी वह रूप जड़ चैतन्य मिला हुआ सा अनुभव करता। ध्यान और भी गाढ़ा होनेसे जड़त्वबोध और भी क्षीण हो जाता। रूप तब भी रहता किन्तु वह रूप छायाकी नाईं अस्पष्ट मालूम पड़ता एवं वह चैतन्य द्वारा ही गठित है ऐसा अनुभव करता। तैलधारावत् निरवच्छिन्न रूपसे वह धारा प्रवाहित होती रहती है। बहुत ही आश्चर्य और कौतुकका विषय यह कि चैतन्यबोध होनेसे ही वह आकाशकी भाँति व्यापक हो जाता है। जड़त्वबोध ले आता चित्तको अति संकीर्ण पथमें और चैतन्यबोध ले जाता असीम-अनन्त पथमें। ध्यान जितना ही गभीर होता जाता उस चिन्मय असीमकी अनुभूति उतनी ही दृश्य अदृश्य सब वस्तुओंको आच्छादितकर दिगन्तमें बिखर जाती है। खंड-खंड दृश्य सब एक अखंड चित्समुद्रमें छायाकी नाईं भसते रहते हैं। इस विराट् चैतन्यको दिव्य चक्षुसे देख सकते, दिव्य हाथसे छू सकते, हृदयसे अनुभवकर सकते हैं। चैतन्य केवल चैतन्यका अनुभव ही नहीं करता उसको देखता भी है, किन्तु चर्म चक्षुसे नहीं दिव्य चक्षुसे। इस चैतन्यमें गति है किन्तु मनुष्यके जैसे उसके हाड़मांसके पाँव नहीं हैं। यह चैतन्य बोलता है अथ च उसके मुख नहीं। ध्यानके सहारे हमलोग इसी तरह चैतन्यराज्यमें प्रवेश करते हैं।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

इस चैतन्यको प्राण बोलकर कोई-कोई साधक संबोधन करते हैं। वस्तुतः चैतन्य एवं प्राणमें कोई भेद नहीं है। 'प्राणस्येदं वशे सर्वं त्रिदिवे यत्प्रतिष्ठितम्' स्थूल, सूक्ष्म तथा कारणमें जो कुछ है उसको प्राणने धारणकर रखा है। प्राणकी अनुभूति होनेसे ही उसमें स्थिति होती नहीं प्राणमें अवस्थितिका सामर्थ्य लाभ करता प्रच्छर्दन विधारणके सहारे। व्यष्टि प्राणमें स्थिति प्राप्तकर सकनेपर समष्टि प्राणमें प्रवेश किया जाता है। सत्ताका बोध हो जानेपर पहले व्यष्टि प्राण ही का अनुभव होता है। व्यष्टि प्राण माने-जीव चेतना, जो देह मन इन्द्रियादिको धारणकर रखा है। यह जीव चेतना देह-पिंजरेमें बन्द एक छोटी चिड़िया नहीं। धारणा ध्यानके सहारे पहले जब सत्ता बोध जग उठता तब वह सत्ता देहमें आबद्ध नहीं रहती यह समझ सकता। प्रत्युत ये देह मन तथा इन्द्रियवर्ग उस जीव चेतनाके आश्रित रहते यह अनुभव करता। यह व्यष्टि चेतना अर्थात् जीव चेतना समष्टि-विराट् चेतनाका ही अंश है, जैसे किसी सम्राटके अधीन सामन्त राजा रहता है। विराटके कुल ही धर्म व्यष्टि चैतन्यमें रहता है, अथ च यह व्यष्टि चैतन्य पूरा स्वाधीन वा स्वतंत्र नहीं है। देह और इन्द्रियोंकी शृंखलामें बद्ध रहकर ही आरंभ किया था सत्य प्रतिष्ठाका अभ्यास। उस शृंखलाके छिन्न हो जानेपर ध्यानमें पाया इस व्यष्टि चेतनाको जो करमाटांड़में प्रथम अनुभव किया था। प्रत्ययकी एकतानता रूपसे प्रवाहित होता रहता बोधका प्रवाह। चिन्मयका स्रोत प्रवाहित होता रहता ध्यानकी गाढ़ी अवस्थामें, प्रवहमान नदी जैसी। उस समय

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

देह जड़ अनुभव होता नहीं, चैतन्यसे गठित देहके जैसा अनुभव होता रहता। विशुद्ध चैतन्य भी नहीं, जड़ मिश्रित। ध्यान जितना ही गभीर होता रहता जड़त्व बोध उसी अनुपातसे हटता जाता है। धीरे-धीरे प्रवेश किया गभीर चिन्मय राज्यमें।

व्यष्टि चिन्मय बोधमें स्थित होनेपर ही समाधिका अभ्यास आरंभ होता। सत्ता एवं चिन्मय बोध जिनके हुए नहीं, देह तथा जगत् बोध जिनके क्षीण हुए नहीं उनसे समाधिका अभ्यास हो नहीं सकता। इस व्यष्टि चिन्मय बोधमें अवस्थित होकर होती प्रच्छर्दन विधारणकी साधना। प्राण पहले दिगन्तमें बिखर जाता फिर केन्द्रमें लौट आता क्यों कि देहकी ममता सहसा दूर होती नहीं। स्थूल देह बोध नहीं रहनेपर भी चैतन्यदेह बोध जो रहता वह भी एक ग्रन्थिको केन्द्रकर अर्थात् चिन्मय देहको केन्द्रकर प्रथम होता प्राणके प्रच्छर्दन तथा विधारण। प्रच्छर्दनका माने है प्राणका सब वस्तुओंको आवृतकर दिगन्तमें बिखर जाना। और विधारणका माने है दिगन्त प्रसारित प्राणका केन्द्रकी ओर लौट आना। कूर्म जैसे अपने हाथ पाँवको समेटकर अपने शरीरमें प्रविष्ट करता है उसी तरह विराट प्राण संकुचित होकर देह केन्द्रमें चला आता है। पहले पहल केन्द्रकी ओर लौट आनेकी ही प्राणकी विशेष अभि-रुचि रहती है। जीव बोध तो सहज ही दूर होता नहीं। देह इन्द्रियों के लिये कैसा मोह है! अधिक दिन निरन्तर इस प्रच्छर्दन विधारणका अभ्यास करते-करते चित्तकी मलिनता दूर होती है! सोनाको जलानेसे जैसे उसकी मलिनता दूरकी जाती उसी प्रकार

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

तपस्याके अनल (चिन्मय बोधको जगा जगाकर) में देहात्म-बोधको दग्ध करना पड़ता है।

चैतन्य बोध अति लोभनीय होनेपर भी जीवकी संस्कार राशि उसमें अधिक देर ठहरने देती नहीं। चैतन्य बोध केवल सुखप्रदही नहीं आनन्दप्रद भी है। अमृतकी झरना प्रवाहित होती रहती है चिन्मय बोध की भूमिमें। छिन छिन उर्ध्वलोकका आकर्षण अनुभव करने पर भी जीव बोध सहज ही राह छोड़ देता नहीं। यहाँ तक कि समाधि भूमिकासे भी जब जीव बोधमें उतर आना होता है तब वृत्तियाँ सब कुपित दुष्टग्रह की नाईं आक्रमण करती हैं। केवल आक्रमण ही नहीं छिन ही छिन दंशन भी करती है। उस समयमें अनाहत वा आज्ञाचक्रमें अवस्थित होकर प्रच्छर्दन एवं विधारणके सहारे प्राणयामकर सकनेपर वृत्तियाँ शान्त होती है।

चितिरूपेण या कृत्स्नमेतद्‌व्याप्य स्थिताजगत्।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमोनमः॥

उच्चारण करते करते चिन्मयी माँको प्रणाम करते करते सब बाधा-विपत्तियोंका अतिक्रमण कर सकते। हताश होनेसे कुपित रिपुकुल अति क्रूरभावसे आक्रमण करते रहते हैं। फिर धारणा ध्यान फिर प्रार्थना और प्रच्छर्दनविधारण, तभी वे रिपुकुल निर्यातित होते हैं। तपस्याके प्रभावसे जल उठती फिर वही आनन्दप्रद सत्ता तथा चिन्मय बोध। फिर उसीकी कृपासे अधिकारी होता उस प्रेम-मयके सहा वक्षः स्थलमें समाधिस्थ होनेका।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

पुण्यवान जीव जैसे पुण्यके क्षय हो जानेपर स्वर्गसे आकर मर्त्यलोकमें फिर जन्मग्रहण करता उसी प्रकार तपस्याका पुण्यबल क्षीण होनेसे साधक को आनन्दमय समाधि भूमिसे उतर आना पड़ता ध्यान एवं धारणा भूमिमें। अथवा कभी उसकी भी अपेक्षा निम्नतर भूमिमें। उतर आनेपर क्लेश भोग करना पड़ता इसमें सन्देह नहीं, किन्तु तपस्याका होमाग्नि सब समय उज्ज्वल रहता नहीं। जरा भी प्रभाहीन होनेपर समाधिसे नीचे उतर आना पड़ता है। यह जन्म जन्मान्तरके कर्मफलका ही परिणाम है। इसीसे दीर्घ-काल तक निरन्तर धैर्य धारण कर छिन धारणा छिन ध्यानकर समाधिकी आनन्दभूमिमें प्रवेश तथा अवस्थानकी चेष्टा करनी पड़ती है। प्रथम देह (अनाहत वा आज्ञाचक्र) को केन्द्र बना व्याप्तिबोधमें बिखर जाता। यह किन्तु जीव बोध है इस जीव बोध से क्रमशः प्रवेश करता विराट् चिन्मय बोध—ब्रह्म चेतनामें।

कोई यह समझ ले कि एक बार समाधिकी अवस्था प्राप्तकर लेने पर साधक सर्वदा ही समाधिमें मग्न रहता है, यह सम्पूर्ण भूल धारणा है। कोई भोजन करता है यह कहनेसे जैसे वह अहो-रात्र भोजन करता यह समझा जाता नहीं। कोई आदमी घूमता है ऐसा कहनेपर वह दिन रात ही घूमा फिरा करता है ऐसा नहीं समझा जाता, उसी प्रकार कोई भी तपस्वी दिन रात समाधिमें मग्न रहता नहीं। समाधिसे बहुत समय व्युत्थित हो जाता है। पहले पहल समाधिमें स्थिति कम हो पाती, पीछे तपस्याके प्रभावसे समाधि गाढ़ी होती एवं उसमें अवस्थिति भी वेशी होती।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

शास्त्रकार गण समाधिको दो भागमें विभक्त किये हैं—संप्रज्ञात तथा असंप्रज्ञात। कोई कोई इसको साविकल्प तथा निर्विकल्प भी कहते। सविकल्प समाधिके चार प्रकार हैं - वितर्क, विचार आनन्द एवं अस्मिता। चैतन्य बोधके अवस्थान कालमें प्रथम रूपमय जगत् और अपना शारीरादि छायाकी नाई अस्पष्टरूपसे भासित होते रहते हैं। केवल परिदृश्यमान रूपमय जगत् ही नहीं, स्मृतिमें भी जितने रूप आते वे भी छायाकी नाई अस्पष्ट रहते हैं। क्रमशः ये छाया रूप सब सत्ताके साथ मिल जाते और तब रह जाती कई शब्द तरंग। रूपतरंगके अन्तर्हित होने पर शब्द तरंग उद्भासित होती। जो मूर्त्तिको अवलंबनकर साधना करता वह चैतन्य बोधके साथ इष्ट मूर्त्तिका छायारूप देखकर यह कल्पनाकर लेता कि मैं साधनासे सिद्धि लाभकर लिया। यही वितर्कानुगत संप्रज्ञात योगकी भूमि अथवा सविकल्प समाधिका प्रथम पाद है। रूप मिट जानेपर रह जाती नामतरंग। इस अवस्थामें पहुँच सकने पर वैष्णव साधक गण बोल उठते—नामीकी अपेक्षा नाम ही श्रेष्ठ है। अथवा यह कहते—

"जो नाम सोई कृष्ण भजो निष्ठा भरी।
नामके साथ हैं आपे श्रीहरि॥"

किन्तु दुःखकी बात यह है कि आधुनिक वैष्णवगणमें अनेक ही इन सब बातोंका मर्म समझ नहीं पाते हैं। चिन्मय शब्द एवं चिन्मयरूप इन दो अवस्थाओंमें रहकर बहुत दिन तक तपस्या

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

करनी पड़ती। छिन ही चिन्मय नामीके जगत्में छिन ही पुनि दिव्य नामके जगतमें। किन्तु स्मरण रखना साधक! यह चिन्मय-प्राणमय भूमि है। अहंकार शून्य होकर इस नाम तथा नामीकी सेवा करते करते अर्थात् चिन्मयबोध तरंगकी सेवा करते करते हम पता पाते और भी गंभीरतर चिन्मय राज्यका। वितर्क भूमिके परे हुई विचार भूमि उसके ऊपर हुआ वह आनन्दप्रद चिन्मय धाम। यह हुई संप्रज्ञात योगकी तीसरी भूमि। व्यष्टि बोधकी साधना उस आनन्द-मय संप्रज्ञात भूमिमें आनेपर अत्यन्त क्षीण हो जाती है। व्यष्टि चिन्मयबोधमें जैसे रहते छाया आकारसे चिन्मयरूप और नाम उसी तरह जीव बोध छायाके आकारमें रहता आनन्दानुगत संप्रज्ञात योगकी भूमिमें।

आनन्देन जातानि जीवन्ति।
आनन्दं प्रयंत्यभिसंविशंतीति॥

इस आनन्दमय भूमिमें आनन्दमय ब्रह्मके प्रेमालिंगनसे आबद्ध हो जाता। मेरे जीवबोधका भी उपादान आनन्द ही है यह अनुभव कर पाता इस तीसरे स्तरमें। आनन्द उपादानसे निर्मित जीव मैं, विराजता, विचरण करता आनन्दके ही राज्यमें। फिर आनन्दसे घुल-मिल जाता उसी आनन्दमय के साथ। उपनिषद्के ऋषि बोल गये हैं—जो साधक ब्रह्म तेज लाभ करता उसे अन्न प्रजा एवं पशु का अभाव होता नहीं। स्त्री पुत्र भृत्य सब उसके अनुकूल रहते हैं।

वितर्कानुगत संप्रज्ञात योगसे अर्थात् समाधिसे हम प्रवेश करते

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

ब्रह्मके समान लोकमें। यही सालोक्य भूमिकी अवस्था है। विचारानुगत संप्रज्ञात योगसे हम पहुँचते उनके समीपमें। रूपको खोकर मैं शब्द में परिणत होता। केवल नादरूपसे तब विराजता। देह इन्द्रिय मन तथा विषयादि यहाँ रहते नहीं, केवल शब्द ही। वांमय ब्रह्मके अति समीप उपस्थित हो जाता। कठिनके साथ तो वह मिल सकता नहीं इसीसे तरल होना पड़ता-गल जाना पड़ता। एक पत्थरके साथ दूसरा पत्थर कभी एक दम मिल नहीं सकता, किन्तु जलके साथ जल अथवा दूधके साथ दूध सहज ही मिल सकता है। इसीसे चिन्मय छाया मूर्त्ति भी जब तक रहती तब तक उस (ब्रह्म) के साथ एकदम मिल सकता नहीं। रूपको खोकर जब मैं नादमय हो जाता मंत्रमय हो जाता तभी उस (ब्रह्म) के समीप उपस्थित हो सकता। यही सामीप्य भूमि है। उनके साथ एक ही दिव्य लोकमें, अति समीपमें रहता। और भी गंभीर आनन्द धाममें पहुँचने पर उसकी समान रूपताको प्राप्त करता। वे तो आनन्दमय हैं, मैं भी उनके दिव्य आलिंगनसे आनन्दमयकी गोदीमें आनन्द गठित नग्न शिशु हूँ। अतएव उनके साथ और भी मिल जाता हूँ। अहं तो यहाँ भी पीछा नहीं छोड़ता, जीवबोध यहाँ भी छाया रूपसे भासता रहता है। इस सारूप्य भूमिमें आस्वादन करता रहता अक्षय आनन्द अक्षय अमृतका। उनके साथ मेरे रूपादानके भेद वास्तविक कोई नहीं। भेद नहीं तो भी मानों भेद है, यही भेदाभेद तत्व है।

साधक अर्जुनने भगवान श्री कृष्णसे प्रश्न किया था—यदि

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

योगकी चरम अवस्था (सिद्धि) प्राप्तिके पूर्व ही किसी साधकका अधः पतन हो वा मृत्यु हो जाय तो वह किस गतिको प्राप्त होगा ?

अयतिः श्रद्धयोपेतो योगाच्चलित मानसः ।
अप्राप्य योगसंसिद्धिं कां गतिं कृष्ण गच्छति ॥

हे कृष्ण ! श्रद्धावान तपस्वी यदि योगच्युत हो जाय तब उसकी क्या गति होती, अर्थात् योग संसिद्धि लाभके पूर्वही यदि योगच्युत हो जाय एवं यदि उस च्युत अवस्थामें उसकी मृत्यु हो जाय तो उसकी क्या गति होती ? ब्राह्मीस्थिति प्राप्त होनेसे एवं प्रयाणकालमें ब्रह्मयुक्त रहने पर निर्वाण लाभ अवश्यमेव होता है । किन्तु ब्रह्म-निर्वाण लाभके पूर्व ही यदि उसका शरीर पात हो जाय तो ऐसे योगीकी क्या दशा होगी ? 'छिन्नाभ्रमिव नश्यति ?' छिन्नमेघकी नाईं आँधीसे उड़ाकर नष्ट हो जायगा ? अर्थात् उसे क्या फिर इतर योनिमें अथवा साधारण लोगोंके जैसे इस संसारमें पुनः जन्म ग्रहण करना पड़ेगा ? कोई यदि वितर्कानुगत, विचारानुगत अथवा आनन्दानुगत संप्रज्ञात योग लाभकर उसमें दृढ़भूमि लाभ न कर सके एवं देहत्यागके समय योगयुक्त अवस्थामें देह त्याग न कर सके तब उसकी क्या गति होगी ? असंयत आत्माको योगकी प्राप्ति होती नहीं ऐसा श्रीकृष्ण कहे हैं, एवं उसके पूर्व ही योगका भी लक्षण कह दिये हैं—

'यो मां पश्यति सर्वत्र सर्वं च मयि पश्यति ।'

जो हमें सर्वत्र अर्थात् सब में देखता एवं सबको मुझमें देख

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

पाता वही योगी है। यह संप्रज्ञात योगकी भूमिका है। वे पीछे ठोस गले से कहे हैं कि असंयतों से यह योग हो पाता नहीं। अर्थात् चिन्मय रूप से मैं सर्वव्यापी हूँ एवं मुझमें ही सब अवस्थित है किन्तु चिन्मय भूमिमें संयुक्त नहीं होनेसे स्थिति हो पाती नहीं। क्षत्रिय अर्जुन धनुर्धर होनेपर भी योगी नहीं थे। वे संयमकी बातें सुनकर चौंक पड़े। इसीसे शंकित चित्तसे प्रश्न किये कि वायुके जैसा चंचल मनको यदि कोई तपस्याके प्रभावसे निरोध कर ले भी किन्तु ब्रह्मज्ञान लाभके पहले ही संयमके अभावसे यदि पतन हो अर्थात् योगसे चित्त विचलित हो जाय तब उसकी क्या गति होगी? वास्तविक ही यह सब साधकोंके मनका गुप्त प्रश्न रहता है। बहुत दिन तक कठोर तपस्या कर यदि दृढ़भूमि लाभ न हो सके, स्खलन हो जाय तो इसका क्या उपाय होगा? 'निराश्रयं मां जगदीश रक्ष' बोलकर द्वार-द्वार पर रोना होगा? भगवान्ने पहले भरोसा देकर कहा कि अभ्यास तथा वैराग्यके द्वारा योगमें दृढ़भूमि लाभ होता है किन्तु पर क्षण ही में कह दिया कि असंयमी व्यक्तियोंको वैराग्य होता नहीं और न निष्ठाके साथ योगाभ्यास ही कर सकता है इसीसे भय खाकर अर्जुनने प्रश्न किया—तब क्या वैशाख महीनेके काला खंडित बादल जैसा वह जीव संसारमें डोलता फिरेगा? तब योगेश्वर श्रीकृष्णने अर्जुनको भरोसा देकर कहा—

'नहि कल्याणकृत् कश्चित् दुर्गतिं तात गच्छति।'

हे तात! कल्याणकारी कर्म करनेवालोंकी कभी भी दुर्गति होती

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

नहीं। वह कभी नीच योनिमें जन्म ग्रहण करता नहीं ; योगभ्रष्ट तपस्वी अपनी तपस्याके पुण्य प्रभावसे बहुत दिन तक स्वर्गादि-लोकके दिव्य भोगोंको भोगकर पश्चात् सदाचारशील धनीके घर जन्म लेता है। अथवा किसी धीमान् योगीके कुलमें ही जन्म ग्रहण करता है। जो इस लोकमें सुदुर्लभ है। जो साधक वैदिक याग-यज्ञादि वा आश्रम धर्मोचित कर्मका अनुष्ठान नहीं कर योगपथका आश्रयण करता और उस योग पथके अनुसरणमें कदाचित् बीचमें ही च्युति वा शरीर पात हो जाय उसीको लक्ष्य कर भगवानने यह अभय वाणी सुना दी।

वितर्क एवं विचारानुगत संप्रज्ञात भूमिमें चित्तके संस्कार सब अनेक समय स्पष्ट ही देखे जाते हैं। दूसरे या तीसरे दिन वा एक मास बाद क्या होगा वह भी देख पाया जाता। भला बुरा दोनों ही देखनेमें आते। कौन कष्ट वा विपद् आनेवाली है सो भी सुस्पष्ट देखी जाती। किन्तु सब क्षेत्रोंमें प्रतिकार करनेका सामर्थ्य रहता नहीं। जो प्रबल संस्कार होता है उसको देख सकनेपर भी उसका प्रतिरोध करना संभव नहीं। ब्रह्मचेतना अर्थात् व्यापक चेतनाके साथ युक्त रहना भी कठिन हो जाता है। किन्तु योगमें आरूढ़ होनेके पूर्व सुख दुःखकी घटनाएँ जितना अभिभूत (पीड़ित) करतीं एवं नये-नये कर्माशयकी रचना करतीं वे सुख दुःख, एकबार युक्त होनेपर उतना अभिभूत करते नहीं, एवं नवीन कर्माशयकी रचना भी नहीं करते

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

कहा गया है कि योगी राजा भरतने दयाके आवेशमें हरिण शिशुकी रक्षा की थी। ममत्व बुद्धिसे हरिण शावकका लालन पालन करनेपर वे स्वयं हरिणत्वकी प्राप्तिकी अर्थात् तादृश कर्मविपाकसे उनको हरिणयोनिमें जन्मग्रहण करना पड़ा। आत्माके अंशरूप सब जीव जन्तुके देखे जानेपर उसके प्रति प्रगाढ़ ममता उत्पन्न होती है इसमें संदेह नहीं। किन्तु वह ममता यदि केन्द्र गत हो अथवा रजतमोगुण प्रधान हो तो योगीकी उर्ध्वगति नहीं होकर उसका पतन होता है।

वितर्क एवं विचारानुगत संप्रज्ञात योगके समय निन्दा वा स्तुति अधिक पीड़न नहीं कर सकती। किन्तु योग युक्त अवस्थासे नीचे उतरनेपर एवं उस समय रजतमोगुणके रहनेसे निन्दा वा स्तुतिसे विचलित होना पड़ता इसमें संदेह नहीं। स्थितप्रज्ञ कहनेका यह तातपर्य नहीं कि स्थितप्रज्ञ व्यक्ति सर्वदा ही योगारूढ़ अवस्था में रहे। यह बात मैं पहले भी कह चुका हूँ। संस्कारके अनुसार रजोगुण वा तमोगुण रहनेसे दुर्वासाकी भाँति क्रोध एवं विश्वामित्र की भाँति अहंकार रहनेसे अस्वाभिक कुछ नहीं। उन दोनोंमें जब सत्वगुणका आधिक्य होता था तब उनमें क्रोध और अहंकारका संचार नहीं होता था वास्तवमें संस्कार वा रजतमोगुणपर साधकका उतना हाथ रहता नहीं। अधिक काल तक ब्रह्मचेतनामें युक्त रहते-रहते जब जीव चेतना क्षीणसे क्षीणतर होती तभी योगकी दृढ़ भूमि लाभ होती। क्रोध, अहंकार, मान अपमान बोध तब रहता नहीं है।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

योगारूढ़ किसी साधकको कोई अपमान वा सम्मान करनेपर साधक उसको शाप वा आशीर्वाद कुछ नहीं करनेपर भी जो निन्दा वा स्तुति करता वह अपना शुभ वा अशुभ फल ऊपर लोकसे पाता है। जैसे किसीके पुत्रको कुछ उपहार देनेसे उसके पिताकी प्रसन्नता प्राप्तिकी जाती एवं पुत्रकी निन्दा करनेपर उसके पिताका कोपभाजन होना पड़ता उसी तरह वह उस परम पितासे फल पायगा। निन्दासे उत्पीड़ित होकर तमोगुणके प्रभावसे कोई साधक निन्दा करने वालेकी जितनी हानि नहीं कर सकता, यदि वह साधक निन्दाको सह ले सकता है तो उससे निन्दककी और भी अधिक हानि होती है। किन्तु तमोगुणके प्रभावसे अनेकों साधक धैर्य धारणकर सकते नहीं। परिणाममें क्रोधके वशवर्ती हो निन्दकका जैसे अनिष्ट साधन करते उसी तरह अपना भी अनिष्ट ही करते। इसी अवस्थामें साधकके असंयत हो जानेके कारण पतनकी अशंका रहती।

किसी-किसी भाग्यवान साधकका संस्कार इतना शुद्ध रहता कि उसका परिवेश भी अधिकांश समय अनुकूल ही रहता है। अनुकूल वातावरण प्राप्त करनेके लिये योगियोंको लोकालयसे दूर निकल जाना पड़ता है। मनुष्य जैसे मनुष्यका मित्र होता है वैसे ही शत्रु भी मनुष्य ही होता। गाछ लता पत्ता वा इतर जन्तु साधकका उतना अनिष्ट कर सकता नहीं जितना कि इतर श्रेणीके लोग कर सकते। अनुकूल वातावरण पुण्यके प्रभावसे प्राप्त होता है।

योगारूढ़ साधकको स्वतः कुछ ईश्वरत्व भाव आ जाता है। ईश्वरत्वभावके नहीं आने पर भी योगयुक्त मुमुक्षु साधककी कोई

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

हानि होती नहीं। प्रत्युत ईश्वरत्व भाव आनेपर अहंकार होनेकी आशंका रहती जो अहंकार होता मोक्षका प्रतिबंधक। योगायुक्त साधकके सब भाव को ही ईश्वर ग्रहण करते हैं। योगीके पास कोई रोगी आकर रोगकी बात कहने पर आरोग्य लाभ करता हैं। दुखी आकर अपने दुःखकी बात कहनेसे उसका दुःख दूर होता है। दरिद्रके आनेपर वह अपनी दरिद्रताकी बात जतानेसे उसकी दरिद्रता दूर हो जाती है। इससे योगी पुरुषके अहंकारका विषय कोई नहीं। केवल ईश्वरके साथ युक्त रहनेसे ही योगी पुरुष हो जाते कल्पवृक्ष तुल्य। कल्पवृक्षसे जिसकी जो बाँछा रहती वही वह पा जाता है। इससे उस वृक्षके गौरव करने की कोई बात नहीं। योगयुक्त साधककी भी योग विभूतिको अपनी विभूति नहीं मानकर ईश्वरकी विभूति माननेसे कल्याण वेशी होता है। योगीके वेशी योगयुक्त रहनेसे जो उनके आश्रय प्रार्थी होते उनका भी कल्याण होता एवं योगी पुरुषकी अपनी मुक्तिका द्वार भी खुला रहता है। योगी पुरुषका काम स्वयं ईश्वर ही कर देते हैं।

किसी योगी व्यक्तिकी कोई प्रार्थना असफल होने पर उसके लिये विचलित होना ठीक नहीं। विचलित होनेपर रजतमोगुण आकर योगभ्रष्ट कर देता है। किन्तु हाय! गुणकी प्रबलता किसी किसी समय इतनी वेशी हो जाती कि वह योगीको स्थिर रहने देती नहीं। योगी सिद्धि लाभ किया है यह सोचकर यदि अहंकारका वशवर्ती हो तो उससे उसकी बुद्धि विनष्ट हो जा सकती है। बुद्धि-

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

नाशात् प्रणश्यति। बुद्धिनाशके कारण असंयत हो जानेसे योगी योग-भ्रष्ट हो जाता है।

पुराण शास्त्रकार गण कह आये हैं कि वैकुंठ—स्वर्गसे भी कोई कोई देवदूत वा देवताका अपने अहंकारके कारण अधः पतन हुआ था। योगयुक्त होनेसे ही वैकुण्ठ, गोलोक वा कैलास प्राप्त होता है। किन्तु इस अवस्थामें अहंकारी होनेसे भी अधः पतन होता है। वैकुण्ठ गोलोक वा कैलास बोलकर वाहरमें कोई दिव्य राज्य नहीं है। है तो अपने अन्तरमें ही।

जिनके भक्तिभाव अधिक होते वे ही विराट् का स्पर्श पाकर आत्मसमर्पण कर सकते हैं। विशुद्ध भक्ति तो सत्वगुणसंपन्न व्यक्तियोंकी ही होती है। और वे ही वास्तविक मुमुक्षु होते हैं। वे सर्वदा ईश्वरकी महिमा ही कीर्त्तन करते रहते हैं। नाम वा यशकी आकांक्षा उन्हें रहता नहीं। और इसीसे निन्दा वा स्तुति उनको स्पर्श कर पाता नहीं। ये सत्वगुणसंपन्न साधकगण विशेष भाग्यवान होते हैं। चित्तमें सत्वगुण अधिक रहनेके कारण वितर्क एवं विचारानुगत योगमें अल्प दिनमें ही दृढ़ स्थितिकी प्राप्ति होती है। तब साधक प्रवेश करता आनन्दानुगत संप्रज्ञात योगमें। उसमें भी दृढ़ स्थिति होने पर प्राप्त होती चतुर्थ भूमि अस्मितानुगत संप्रज्ञात योग।

सत्ता एवं चैतन्यमें दृढ़ स्थिति नहीं होनेसे आसक्ति दूर होती नहीं। बाहर कामिनी कांचनका त्याग करने पर भी अन्तरमें भोगकी वृत्तियाँ रह जाती हैं। विषय भोगकी भी स्पृहा रहती, स्वर्गादिभोग की स्पृहा तो अवश्य ही रहती है। आनन्दानुगत संप्रज्ञात योगमें

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

दृढ़ भूमि प्राप्त होने पर विषयासक्ति अधिकांश ही दूर हो जाती है। पदार्थके अभावका बोध अर्थात् विषयकी तुच्छताकी अनुभूति बिना विषयाशक्ति समूल नष्ट नहीं होती है। विषयमें वितृष्णाका नाम ही वैराग्य है। अन्तरमें जब स्वर्गादि भोगकी भी स्पृहा नहीं रह जाती तब उस वैराग्यको वशीकार संज्ञक वैराग्य कहते हैं। और पर वैराग्य लाभ होता पुरुष ख्यातिके होनेपर, सो वह अस्मितानुगत संप्रज्ञात योगकी भी परवर्त्ती अवस्था है।

इसी समाधिके सहारे ही से विदेह कैवल्य प्राप्त करना होगा। जिसकी जितनी दृढ़भूमि वेशी होगी अर्थात् जो योग युक्त अवस्थामें अधिक काल तक रह सकेगा उसका ही कैवल्य उतना निकट समझना होगा।

मैं समाधिका अभ्यास जिस प्रकार किया था वह अब और भी विस्ताररूपसे कहूँगा।

विंध्यपर्वतपर एवं हिमालयके पद तले।

सन् १९२६ ई०—जनवरी, फरवरी महीना। कॅक्सबाजारसे मैं कलकत्ता आया। कोलाहलमय कलकत्ता नगरी मुझे तीता मालूम पड़ने लगी। किसी शान्त वातावरणमें जाकर समाधिका अभ्यास

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

करूँगा यह मन ही मन स्थिर किया। श्रीसरस्वती पूजाके बाद श्री श्रीठाकुरसे किसी निर्जन स्थानमें जानेकी अनुमति माँगी। वे दबीजबानसे बोले—"जहाँ कहीं भी जाओ न क्यों कुछ बाधा वा विपत्ति तो सर्वत्र ही है"। उनकी आन्तरिक इच्छा थी कि मैं उनके साथ करमाटाँड़ जाऊँ, किन्तु मुँहसे उसको प्रकाश किये नहीं। इस बार भी उनके साथ करमाटाँड़ ऐसे ही कोई-कोई जाने वाले थे जिनके साथ रहकर साधन भजन करना बहुत ही कठिन हो जाता, इसीसे मैं अन्यत्र जानेकी अनुमति चाही थी।

ब्रह्मचारिणी अरुणामाता उस समय विंध्याचल अंतर्गत चुनारमें रहकर तपस्या करती रहीं। उनकी चिट्ठीसे यह ज्ञात हुआ था कि चुनार, तपस्याके लिये बहुत अनुकूल स्थान था। रेल स्टेशनसे चार पाँच मील दूर उस पहाड़के एक टीलेपर स्वामी सच्चिदानन्द सरस्वती महाराज एक आश्रमका निर्माणकर रहे थे। वे अपने आश्रममें सब संप्रदायके हिन्दुओंको ही अपने-अपने खर्चेसे निर्बाह (गुजारा) कर तपस्या करनेके लिये जगह देते थे। बूढ़ी अरुणमाता भी उसी आश्रमकी एक कोठरीमें रहकर तपस्यामें निरत थीं। मैं पहले उनके ही पास जाऊँगा यह निश्चय किया। वहाँ और भी रहनेके लिये कमरे थे यह खबर भी उनसे पा चुका था। प्रायः दो सप्ताह समय वहाँ रहकर काशी एवं प्रयाग तीर्थ दर्शन कर हरिद्वार हृषीकेश तथा लछुमन झूला चले जानेकी इच्छा हुई। सोचा कि पीछे कभी इस चुनारमें आकर गभीर भावसे तपस्या करूँगा। कहना फजूल होगा—मैं दूसरे ही साल यहाँ आकर प्राय तीन-चार मास तक तपस्या की

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

की थी। अभी मैं हिमालयके पद तले (तराईमें) चल पड़ा। हरिद्वार एक खासा शहर, हृषीकेश भी पहले जैसा शान्त नहीं है, यह काशी और इलाहाबाद पहुँचनेपर सुन पाया। लछुमन झूला, खासकर स्वर्गाश्रम तपस्याका अनुकूल स्थान है यह किसी-किसी साधुके पत्रसे भी ज्ञात हुआ था। काशी धाममें पवित्र जाह्नवी जलमें स्नानकर पिता विश्वनाथजी तथा माता अन्नपूर्णाजी को प्रणामकर भिक्षामाँगी—'ज्ञानवैराग्य सिध्यर्थं भिक्षांदेहिमे पार्वति'। प्रयाग पहुँचकर पवित्र त्रिवेणी संगममें अवगाहन किया। इन सब बाहरी अनुष्ठानसे मानसिक कुछ तृप्तिबोध करनेपर भी अन्तरमें यथार्थ तृप्ति पाई नहीं। अन्तरसे कोई बिरागी बार-बार ही कहने लगा—'यह तो बाहरी वस्तु है, और भी आगे चलो'। और भी आगे चलना होगा, अन्तरकी अमृतधारासे अभिषिक्त होना पड़ेगा—सच्चिदानन्द सागरमें अवगाहन करना होगा।

इलहाबादमें वृद्ध गुरुभाई श्रीयुक्त मुनिमोहन वंद्योपाध्याय महाशयके घर दो तीन दिन रहकर लछुमनझूलाकी ओर रवाना हो गया। मुनि मोहन बाबूको हम लोग दादामणि कहके पुकारते एवं श्रद्धा (आदर) करते थे। वे थे एक आदर्श गृहस्थ-भक्त। श्रीगुरुके आदेशका पालन करने जानेपर राजा हरिश्चन्द्रकी भाँति एक बार उनका सर्वस्वान्त हो गया था। उनके बहुत कष्टसे उपार्जित इलहाबाद—स्थित सब सम्पत्ति एवं मकान आदि किसी झूठे मुकदमेके दावेमें नीलाम हो गया। वे कचहरीमें जरा सा असत्य बात बोलनेसे ही उनकी संपत्तिकी रक्षा हो सकती थी, किन्तु सत्य-

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

निष्ठ साधक होनेसे वे सत्यका आश्रयण किये। सत्यप्रतिष्ठ पथसे साधना करतेथे इसोसे पार्थिव संपत्तिकी लालसासे झूठ बोलना उचित नहीं यह सोचकर दृढ़ रहे। मैं प्रथम जब इलाहाबाद गया था तब उनके राजभवन सदृश मकानमें ही ठहरा था। वे सर्वनाशी होनेपर भी मनोबल गँवाए नहीं। श्रीगुरुके आशीर्वादसे एवं अपने विश्वास तथा तपस्याके प्रभावसे अपनी खोई संपत्ति नहीं पानेपर भी पीछे नयी संपत्ति और मकानके भी अधिकारी हुए थे।

घरकी मालिकिनसे लेकर बच्चे तक काम-काजके बीच-बीचमें श्रीगुरुके नाम कीर्तन करते थे—"गुरुदेव दया करु दीन जने" इत्यादि स्तुति उनके मकानके आस पास अनेकों जगहसे वेशी काल सुन पाता था। कोमल मधुर गलेसे वे नामकीतन करते थे। इस पुण्यवान गुरुभाईके घरमें रहके खूब तृप्तिलाभ किया था। वे मुझे और कुछ दिन अपने मकानमें रहनेका अनुरोध करनेपर भी मेरी मानसिक अवस्थाकी दृष्टिसे पीछे मुझे लछुमन भूला जानेके लिये ही अनुमति दी थी, एवं रेलमें चढ़ा दिये थे। मैं और भी गहरे भावसे तपस्याकर उस प्रेममयके प्रेममें निमग्न होऊँगा, मेरे अन्तरकी यह अभिलाषा जानकर वे मुझे उत्साहित किये थे। लछुमन भूलेमें कहाँ ठहरूँगा यह वे नहीं जानते थे, मैं भी नहीं जानता था।

०

हरिद्वारमें रेलसे नहीं उतर सीधे हृषीकेश चला गया। खूब तड़के हृषीकेश पहुँच गया। माघ महीनेकी आखिरी होनेपर भी वहाँ

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

दारुण जाड़ा था। तीव्र शीत निवारणके लिये गरम कपड़े भी कम ही थे। कंबल लपेट ठंढ़से वचावकर घोड़ागाड़ीसे लछुमन भूलाकी ओर चला। ठीक लछुमन भूला नहीं, गंगापार होकर मैं स्वर्गाश्रम जाने लगा। जब वहाँ पहुँचा तब प्राय नौ बजा होगा। जंगलके बीच-बीचमें अनेकों कुटिया देख पाया। अनेक माने चालीस पचास होंगी। कईएक कुटिया खाली भी पड़ी थी। साधारण कुटियोंमें ताला भी नहीं लगा था। मैं हृषीकेशके जिस साधुके साथ पत्राचार किया था, वे उस समय स्वर्गाश्रम वा हृषीकेश कहीं भी नहीं थे; ज्ञात हुआ कि कहीं बाहर चले गये थे। रामकृष्ण मिशनके एक साधुको मेरे विषयमें कुछ कह गये थे। जब मैं कुटियोंको हेरते-हेरते वनमें घूम रहा था उसी समय वे ही मिशनके साधुजी मुझे अपनी कुटियामें ले गये एवं पासकी कुटियामें मेरे रहनेकी व्यवस्था कर दी। मिट्टीका गारा तथा पत्थरके टुकड़ोंसे जोड़ी हुई दीवार, ऊपर टीनका छाजन, एक किवाड़ी और एक ही जंगला। घरका परिमाण १०×१० फुट प्राय हो सकता था। उस घरमें एक चौकी भी थी। मैं छेत्रकी रोटी ग्रहण नहीं कर स्वयं रसोई बनाकर खाऊँगा यह अपनी अभिलाषा साधुजीसे कहा। वे भी हमें समर्थन कर बोले—यह तो उत्तम प्रस्ताव है। प्रथमतः तो छेत्रकी मोटी रोटीको हजम करना कठिन, द्वितीयतः कदाचित् हजम होनेसे भी रोटी दान करने वालेका पाप चित्तको कलुषित करता है। उस पापको हजम करना कठिन है। विषयीके अन्न ग्रहण करनेसे चित्त कलुषित होता, तपस्यामें भी बाधा पड़ती है।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

"विषयीके अन्नते दुष्ट होता मन,
दुष्ट मनहि होता न श्री कृष्ण भजन।"

रसोईका कोई भी बरतन मेरे पास था नहीं। मिशनके साधुजी हमे एक लोहेकी कड़ाही दी। घरके एक कोनेमें पत्थर जोड़कर चूल्हा तैयारकर लिया। जंगलसे लकड़ी इकट्ठी करली। एक मिट्टीका घड़ा भी साधुजी दिये थे। उसी घड़ेमें गंगासे जल लाया। गंगाके परले पार जाकर कुछ चावल, आलू घी और नमक खरीद लाया। कड़ाहीमें चावल और आलू सिद्धकर मांड़ सहि भातको उसी कड़ाहीमें रखकर ही, पेटमें डाल दिया, कारण यह था कि मेरे पास थाली बाटी कुछ भी थी नहीं, था एक लोटा और गिलास। दाल या तरकारी पकाकर रखनेका कोई दूसरा बरतन भी था नहीं। रांधने पकानेका समय नहीं रहता था और खरीदनेका पैसा भी था नहीं। लछुमन भूला पहुँचनेपर मेरे कूल तीन रुपये छै पैसे बच रहे थे, जिससे मैं २१ दिन खर्च चलाया। वास्तवमें सात आठ रुपये होनेसे ही उस समयमें वहाँ अच्छी तरहसे रहा जा सकता था।

भोजनकी व्यवस्था संक्षिप्त हो जानेसे तपस्या करनेका पूरा सुयोग मिला। शान्त वातावरण, मनोरम दृश्य था। ध्यान गंभीर पर्वत सतत स्मरण करा देता उसके जैसे ही ध्यान निमग्न हो जानेके लिये। कलकल नादसे सुरधुनी - गंगा अविरलधारासे प्रवाहित होकर जनाती थी कि उसीकी नाईं अविरल धारासे प्रवाहित होना पड़ेगा। हिमालयके अतिउच्च शिखरसे यह गंगा अनेक बाधाओंको अतिक्रमणकर सागरसे संगमके लिये चली है उसी

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

प्रकार सब बाधा विपत्तिको अतिक्रमणकर चलना होगा उस प्रेममय के साथ चिर मिलनके लिये। शिक्षा देता पर्वत, शिक्षा देती गंगा। कुटियासे निकलकर कभी सुरधुनीके तीरमें बैठता या कभी जंगलमें घुसकर हिमालयकी तराईमें बैठ जाता था। निःसंग अकेला, कोई बाधा नहीं इस भुवनमें। हृदय भरा केवल प्रेममय विभुसे, विश्वभरा केवल चिन्मय विभुसे। उनके प्रेमका आलय हृदय, उनकी लीलाका आलय यह विश्व। अन्तरमें वे प्रेम-मय, बाहरमें वे चिन्मय हैं। अन्तरमें वे प्रेममय निधि, बाहरमें वे चिन्मय हैं। अन्तरमें वे शान्त, स्थिर, निष्कंप बाहरमें वे भावचंचल, फेनिल। अन्तरमें वे प्रेममय निधि, बाहरमें उनके कानूनका विधान। बाहर विश्वमें कितनी विधि निषेध, कितने जाना अजा-नाका बखेड़ा किन्तु अन्तरमें वे स्वाधीन, स्वतंत्र, चिरप्रशान्त। बाहरमें भेदका खेल, भीतरमें प्रेमका सरोवर। बाहर विश्व आकर्षण करता प्रेममयको उनकी विचित्र मोहिनीमूर्त्तिमें, और प्रेममय मुरली बजाती प्रकृतिको ही भीतर खींच लेनेको। बाहर प्रकृति उर्वशी अन्तर प्रकृति श्री लक्ष्मी है। बाहर प्रकृति मायाविनी, अन्तर प्रकृति मुक्ति-प्रदायिनी है।

भीतरके प्रेममयको भूलकर जब बाहर आता तब प्रकृति धर लेती मोहिनीका रूप। प्रकृतिको भूल जब भीतरमें प्रवेश करनेका प्रयासी होता तब वह प्रेममय विभु हृदय गुफामें छिप जाते। खेलका शेष नहीं, लीलाका अवसान नहीं। अन्तरके विभुको यदि बाहर विश्वमें नहीं पाता तो श्मशान समान बोध होता। आँख मूँदकर विश्व

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

प्रकृतिको देखूँगी नहीं यह बोलनेसे ही प्रकृतिका लय होता नहीं। नौ द्वारोंको बन्द करनेपर भी मनका विश्व मनसे दूर होता नहीं। मिथ्याचार हो जाता है। कर्मेन्द्रियोंको रोककर मन ही मन जो खेल चलता वह तो मिथ्याचार है। इसीसे प्रेममयको अन्तरके गुप्त सिंहासन से नीचे उतार ले आता इस बाहर विश्वमें। मन और प्राणमें उनका स्पर्श लगाता। आँख कान हाथ मुँहमें उनका स्पर्श लगाता नौ द्वार-को बन्द नहीं कर प्रत्येक द्वार-द्वारमें उनकी चरण धूलि रख लेता। आँखके बन्द किये बिना विश्वकी वास्तविकता स्वीकारकर आँखोंसे और विश्वके अणु परमाणुओंमें अपने प्रेममयको विद्यमान देख पाता। देख पाता सत्यको, सुन्दरको, शिवको और एकमें ही अनेक मूर्त्तिको। भीतर बाहरका भेद मिट जाता। किन्तु हाय ! वह प्रेममय छिनमें ही मुझे उस निठुर प्रकृतिकी गोदीमें डालकर कहाँ तो अन्तर्हित हो जाता। नजरकी ओटमें लुक जाता, लुकता वनान्तरमें, लोकान्तरमें। इसीसे रहना पड़ता समनस्क और सदा शुचि-पवित्र। अपवित्र मन वा दृष्टिमें वे रहते नहीं एवं अन्यमनस्क होनेपर भी नहीं रहते। वह प्रेमनिधि जो प्रेमका भूखा है उसको तनिक भी भूल जानेसे अन्तर्धान हो जाता। वे छिप जाते फिर उसी अन्तरकी एकान्त गुफामें। वे तो हृदय-कंदरेमें रहना ही पसन्द करते हैं। इसीसे तपस्वी नचिकेताको यमराजने कहा था—

'तं दुर्दर्शं गूढ़मनुप्रविष्टं।
गुहाहितं गह्वरेष्ठं पुराणम्॥

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

अध्यात्मयोगाधिगमेन देवं ।
मत्वा धीरो हर्षशोकौ जहाति ॥

वे हृदय गुहामें सदा विराजते रहते । मन वा इन्द्रियोंकी छोटी गुफा में वे चिर पुरातन विभु पाये नहीं जाते—पकड़े नहीं जाते । इसीसे वे लाभ योग्य होनेपर भी सुलभ नहीं है । पवित्र तथा सावधान हो अध्यात्म योगके अनुशीलनसे धीर वीर उनके साक्षातकारसे हर्ष शोकसे पार हो जाते हैं ।

मेरी तृष्णा भी मिटती नहीं वरं बढ़ती ही जाती । जितना ही पाता जाता उतना ही और भी पानेकी अभिलाषा होती । हेराता फिर-फिर हेराता, दूर जाता नहीं निकट ही में रहता तो भी उसको हेराता । निकटमें ही रहता तो भी मानों बहुत व्यवधान रहता हो । हृदयगुहा तो दूर नहीं, देहपुर भी तो दूर नहीं, और विश्व तो सामने ही पड़ा है फिर भी उनको मेरे प्रेमनिधिको विश्व वा देहपुर में ढूँढनेपर पाता नहीं । आँख मूँदकर पाता नहीं, खुली आँखसे भी देख पाता नहीं । पाता चक्षुके अश्रुजलसे पखारे स्वच्छ मनसे । वे अपने सिंहासनसे उतरकर मेरे देहपुरमें तभी आते जब अपने विश्व भुवनमें मैं पिता बोलकर, माता बोलकर, बंधु बोलकर निराश्रय होकर अश्रुजलसे भसता । आँसूसे वक्षः स्थल भस जानेसे, मनकी मैल धुल जानेपर पा जाता अपने प्रिय बंधुको अपने पास ही, अति समीपमें ही । मैं अश्रुजलसे भस जानेपर पवन आकर कानमें कह देता 'यही तो तुम्हारा प्रिय आ रहा है ।' मैं अश्रुजलसे भसने पर

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

आकाशमें सुन पाता उनकी वीणाकी मधुर ध्वनि। मैं अश्रुजलसे भसनेपर मन-पपीहा सब पाप चिन्ताओंको त्यागकर केवल पिया-पिया रटते रहता। केवल प्रिय-प्रिय रटता। देहके अणु परमाणु और रक्त विन्दु तब उल्लाससे नाच उठते। मैं देख पाता अपने प्रियतमको—ज्ञानमय विभुको आँख मूँदकर दिव्यचक्षुसे अपने अन्तरराज्यमें। मैं देख पाता अपने चिन्मय विभुको अपनी आँखें खोल भावनेत्रसे मनके गहन काननमें, विश्वके जल-स्थल, अन्तरीक्ष में। अन्तरका विभु बाहर आकर खड़ा हो जाता, बाहरका विश्व प्रेम झरनासे अभिषिक्त होता, स्नात होता, पवित्र होता है और दिव्य रूप धारण करता है। अन्तरके दिव्यरंगसे बाहर भी अभि-रंजित हो जाता है। साधनाकी इस अवस्थाको एकान्त भावसे आयत्तकर ले सकनेपर मैं होता स्थितप्रज्ञ। आन्तरिक प्रज्ञाको बाहरमें रूप दूंगा, उस प्रज्ञा सागरमें अवगाहन करूँगा, फिर बाहरी प्रज्ञाको अन्तर-प्रज्ञामें मिलाके नामरूपमय जगत्को डुबा दूंगा उसी अन्तर प्रज्ञामें। मैं केवल आन्तरिक दिव्यलोकमें ही प्रेममयको पाऊँगा और बाहर विश्वमें आकर उनको खो दूँगा एवं नीरस सूखे नाम रूपको देखूँगा यह मेरी साधनाका मुख्य उद्देश्य नहीं है। अपने भीतर उनको प्राप्त करनेपर भी देहके आकर्षण और आवश्य-कतासे अभी भी अधिक समय बाहर विश्वमें रहना पड़ता और विचरण करना होता है। बाहरी विश्व जब अन्तरके सत्ताबोधके साथ चिन्मय होकर भीतरमें लुप्त हो जाता है तब तो सुखकी सीमा नहीं रहती है।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

भीतर और बाहर बोलकर तब दो स्थान रहता नहीं। किन्तु यह अनुभव अधिक काल तक स्थायी रहता नहीं एवं अपनी इच्छा मात्रसे इस अवस्थाकी प्राप्ति भी नहीं कर सकता। इसीसे आवश्यक हो जाता कि बाहर विश्वमें कभी भी दृष्टि पथसे उनको अलग नहीं होने दूं। उनको आँखोंमें रख सब काम करूँ, सब बात बोलूं। उनको दृष्टिमें रख उनके रंगीन चरणको अपने माथेसे छुलाऊँ। उनके दिव्य करकमलको अपने कपाल कपोल वक्ष एवं सर्वांगमें भिड़ाऊँ। उनके अंगोंमें अपने अंगोंको सटाकर उनके साथ युक्त होकर रहूँ। मैं उसी प्रियतमके साथ संयुक्त रहूँगा आहार विहारमें कर्म अकर्ममें, पाप पुण्यमें। मैं जब अपने प्रियतमको दिव्य अन्तर राज्यमें पाता तब तो वे चुम्बक जैसे आकर्षणकर अपनी छातीसे आलिंगन बद्धकर लेते। यही तो उनका स्वभाव है। किन्तु मैं जब अपने राज्यमें नामरूपमय जगत्में विचरण करता उस समयमें भी अपने प्रेममयको अपने राज्यका राजा बनाकर रखने चाहता। मेरी शत मलिनताके बीच उस चिरशुद्धको रखना चाहता।

अभी घरमें बैठकर ही वेशी समय ध्यान करता। गंगातीरमें बैठनेसे साधु सब आकर अनेक बातें बोलते। कोई-कोई मुझे अल्प-वयस्क देखकर अपना चेला भी बनाने चाहते। जंगल और पहाड़ पर बैठनेसे नाना प्रकारके कीड़े बाधा उत्पन्न करते थे। जंगलेको खुले ही रखकर ध्यान करता था। जंगलेमें पल्ला था भी नहीं इससे खुला ही रहता था। द्रष्टा दर्शन दृश्य इस त्रिपुटी भावको लेकर पहले धारणा करता। धारणा गभीर होनेपर सत्ताबोध जग उठता

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

चिन्मय सत्ताबोध जाग्रत होनेपर मैं हो जाता विराट्बोध स्वरूप। इस बोधस्वरूपमें मैं एक ओर द्रष्टा दूसरी ओर दृश्य बना हूँ यह अनुभव करता था। मैं चिन्मय, दृश्य भी चिन्मय। द्रष्टा और दृश्य का संयोग साधन करती एक चिन्मयी शक्ति जिसको दर्शन शक्ति कहता। ध्यान जितना ही गभीर होता जाता था इस त्रिपुटी भावको एक ही शक्तिका आनन्दोल्लास बोलकर अनुभव करता। अनुभव करता एक आनन्दमय दिव्य पुरुष मेरे देह यंत्रको केन्द्रकर दिग् दिगन्तमें बिखर गये हैं। देह मेरा विन्दु रूपसे उस चिन्मय समुद्रमें जैसा एक छोटा पत्थरका टुकड़ा। विराट् चिन्मयकी ही अभिव्यक्ति हुई दर्शन शक्ति एवं दृश्य वस्तु सब। दृश्यका द्रष्टासे अतिरिक्त अपनी कोई सत्ता नहीं। दर्शन शक्ति द्रष्टाका ही व्यवहार मात्र। समय-समयमें विच्छिन्न दृश्योंको विच्छिन्नसा अनुभव करता नहीं। द्रष्टा ही में वे मालाकी नाईं गूंथेसे प्रतीत होते। छिन ही में फिर वे द्रष्टाके वक्षपर अवस्थान करते ऐसा अनुभव करता। क्षण ही में फिर विशाल भुजा जालमें सभी दृश्य पदार्थ प्रेमालिंगनसे सम्बद्ध हो गये हैं ऐसा प्रतीत होता। अहा, कैसी मधुर अवस्था यह! द्रष्टा भी तो दूसरा कोई नहीं, मैं ही द्रष्टा विराट्, बोधस्वरूप, चिन्मय। देह मन एवं इन्द्रियसे विमुक्त मैं अथ च मुझमें सब इन्द्रियोंका धर्म विद्यमान है। मैं फूल होकर फूलको देखता, फल होके उसका रस चखता, मैं ही अन्न मैं ही भोक्ता। 'अहं अन्नं, अहं अन्नादः।' मैं नदी, मैं सागर। मैं मन्दिर, फिर मैं ही देव-विग्रह। मैं कोसा कोसी मैं ही अर्घ चन्दन धूप दीप नैवेद्य। मैं अग्नि, मैं ही घृत, मैं अपने

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

में ही आहुति देता-हवन करता। मैं देवता होकर देवताका भजन करता। मैं ध्यान-गंभीर पहाड़। मैं ही कलकला-वाहिनी सुरधुनी गंगा। छिन ही में विलुप्त हो जाते मेरे विराट् चिन्मय शरीरमें वे पहाड़ वन कुटिया तथा कुटिया स्थित यावतीय वस्तु। रहता केवल शब्द। रूप नहीं रहता नाम मात्र। नामकी तरंग प्रवाहित होती चिन्मय नाम समुद्रमें। विन्दुवत् देहबोध भी मिट जाता। रह जाता एक स्पन्दन मात्र। किसी-किसी दिन इसी तरह ध्यान गंभीर होता। इसीको सविकल्प समाधि कहते हैं वितर्क एवं विचारानुगत संप्रज्ञात समाधिमें निमग्न तो होता किन्तु उसमें अधिक देर स्थिति होती नहीं थी। सम्यक् प्रकारकी सिद्धि प्राप्त करनेमें स्थितिका प्रयोजन है। केवल कुबेरका भंडार देख लेनेपर कोई धनवान हो जाता नहीं, धन हस्तगत नहीं होनेपर धनी होता नहीं। योगमें स्थिति नहीं होनेपर योगी हुआ जाता नहीं। योग युक्त होना होगा, स्थितधी होना होगा।

मैं प्रेममयके वक्षमें एकान्त रूपसे दिवारात्र निमग्न रहनेके लिये अधीर। प्रतीक्षामें दिन काटने लगा। छिन ही विरह वेदना से रो पड़ता। छिन ही प्रेमालिंगनसे आबद्ध होकर, विह्वल होकर पागलके जैसे हँसता। मैं डूबूँगा अजी प्रेमिक! तुम्हारे प्रेम सागरमें मैं डूबूँगा, गल जाऊँगा, मिल जाऊँगा। किन्तु हाय! एक मोहिनी प्रकृति नीचे आकर्षणकर लेती है। छिन ही समाधिमें निमग्न हो जाता, छिन ही में फिर इन्द्रिय जगत्में अवतरण करता। अधीर, प्रतीक्षासे आसनपर बैठा रहता इस आशासे कि मेरा प्राण प्रिय

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

आयगा। फिर छातीसे लगायगा एवं निमग्नकर देगा गभीर समाधिमें।

देह दुर्बल होता जा रहा था। अल्पाहार, अर्धाहार, एवं अनाहार-प्रयुक्त देह दुर्बल होता जा रहा था। देहके साथ मनकी भी दुर्बलताका अनुभव होने लगा। आहारके अभावसे मलमूत्रका कोई वेग ही नहीं। और दूसरी कोई बाधा नहीं। किन्तु हाय! निष्ठुर देह प्रतिबंधक हुआ, हीनबल हो गया। अब वहनकर सकता नहीं प्रेममयके दिव्य आलिंगनको। बलहीनकी ब्रह्ममें स्थिति नहीं, आत्मज्ञान भी होता नहीं। 'नायमात्मा बलहीनेन लभ्यः।' उक्त बल देह एवं मन दोनों ही का विवक्षित है। रुग्न, प्रभाहीन, ब्रह्मचर्य हीन देहमें उनकी धारणाकी नहीं जा सकती है। किसी-किसी दिन मनमें होता कि कहीं यह शरीर विकलांग न हो जाय वा मस्तिष्कके स्नायु छिन्न हो जानेसे कदाचित् पागल न हो जाऊँ। प्रेममयके प्रेममें यदि पागल हो जाऊँ सो तो अभीष्ट ही हो, किन्तु प्रेममय कहाँ? अवसन्न देह मनसे उनको पकड़ रखता कैसे? वे प्रेममय तो बलवान, और मैं बलहीन, तो कैसे उनको पकड़के रख सकूँगा मैं?

तो क्या मुझे आहारकी खोजमें बाहर जाना पड़ेगा? क्षेत्रमें तो रोटी मिलती है, शरीर रक्षाके लिये भिक्षा करूँगा। निर्लज्ज यह क्षुधा, निर्लज्ज यह जठराग्नि है। इस जठराग्निको लेकर मनुष्योंके द्वारस्थ हो, उनकी खुशामदकर भिक्षा माँगूगा? तब प्रेममयको गोहराता क्यों?

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

'तेषां नित्याभियुक्तानां योगक्षेमं वहाम्यहम् ।'

अर्थात् उनमें नित्ययुक्त रहनेसे वे स्वयं साधक भक्तके योग क्षेमको वहन करते हैं। तो क्या वे मिथ्यावादी हैं ? नाँ, घरसे बाहर न होऊँगा। पुरीमें एक बार उनको अपनी प्रतिज्ञाकी रक्षा करते देख चुका हूँ, तो वृथा चिन्ता क्यों ?

दरदवंत मित्र मिशनके साधुजी बीच-बीचमें आकर जंगला होकर देख जाते कि मैं मर गया वा अभी तक बच रहा हूँ। समाधि अवस्थामें श्वास सूक्ष्मरूपसे चलता रहता है इससे बाहर उतना समझमें नहीं आता। और इसी हेतुसे वे सोचते कि कदाचित् निराहारसे मेरा प्राण वायु तो न निकल गया। मुझे पुकारनेका भी साहस होता था नहीं।

किसी दिन बारह चौदह घंटे तक एक ही आसनसे बैठकर ध्यानकर सकता था। किसी दिन अट्ठारहसे बीस घंटे तक भी आसनपर रहनेमें कोई कष्ट बोध नहीं होता था। कभी-कभी तो समयपर भ्रूक्षेप भी नहीं। किन्तु हाय! क्षुधा तृषाकी ज्वालासे शरीर अवसन्न हो जानेके कारण तब जो प्रेममयको वहनकर सकता नहीं। छिन-छिनमें शान्तिका स्रोत आकर देह वा इन्द्रियकी बातको भुला देता। दुर्बल शरीरमें जितना कुछ बल पाता उसीसे पाता प्रेममयका सौभाग्यपूर्ण आलिंगन। क्षीण मनमें जो कुछ भी सामर्थ्य रहता उसको भी हरणकर लेता वह मनहरण पतित पावन प्रेमनिधि। इन्द्रियां भी तब बाहर विश्वमें जाने चाहतीं नहीं। मनके साथ ही

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

वे भी वाहर जानेकी शक्ति खो बैठी थीं। दृश्य तो द्रष्टाकी सत्तामें मिलके चिन्मय हो गया। इन्द्रियवर्ग भी द्रष्टाकी सत्ताके साथ मिल गये।

२३ दिन इसी प्रकारसे कटे। अर्धाहारके बाद अनाहारसे दो दिन कटे। रह-रहके किवाड़में खटकेकी आवाज सुन पाता, फिर गलेकी भी आवाज सुनता था। और फिर मन अतल तलमें डूब जाता, कान वहरा हो जाता। समुद्रके अगाध जलमें आज मेरा मन डूब गया। मन भौंरा आज मधुके छत्तेका पता पा लिया इसीसे फूलोंपर घूमनेकी स्पृहा अब उसकी रह गई नहीं। यह तो मधुका स्राव, अविरल धारासे मधु स्रवित होता रहता, केवल स्रवित ही होता नहीं प्रवाहित होता रहता था।

फिर किवाड़में खटकेकी आवाज सुनी। वह छलनामयी मालूम अब मानवीरूप धरके आई क्या? अथवा रामप्रसादका बेड़ा बाँधने जैसे आई न हो वह कौतुकमयी कौतुक करने प्रज्ञालोकसे? क्या इस भूखे जगत्में उतर पड़ी है मुझ भूखेको अन्न देने? इतने रूप धर कर भी क्या उसकी साध मिटी नहीं? अनन्त रूपके फिर कौतुकप्रद रूप? फिर भी किवाड़में धक्का देने लगी। अरी, तुम अगर आई हो तो किवाड़ छेदकर भीतर चली आती न क्यों, तुम्हें मैं भर आँख देख तो लूँ। ऐसे देखनेकी कोई विशेष सार्थकता तो नहीं है 'माँ'! मानवी होकर आयगी और थोड़ी ही देरके बाद फिर अन्तर्हित हो जाएगी। मेरे साथ-साथ तो रहेगी नहीं। देहीके साथ देहधारीका संपूर्ण मिलन होता नहीं। इस प्रकार तो कई बार

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

आ चुकी किन्तु पूरी तृप्ति होती कहाँ ? उठनेकी इच्छा करता किन्तु उठ सकता नहीं, शरीर तो अवश, विवश हो रहा था। विवश हुआ था प्रेममयके प्रेमालिंगनसे और अवश हुआ था क्षुधा पिपासासे ! प्रयोजन ही क्या, देहका अवसान भले ही क्यों न हो। वह तो मृत्युके बाद मृत्यु पाता रहता जो इस संसारको नाना रूपसे देखता है—

'मृत्योः स मृत्युमाप्नोति य इह नानेव पश्यति"।

तुम्हारा मानवी रूप विश्वके नाना रूपोंमें एक रूप है। चारों ओर अनेक रूपोंके बादल उसके बीच तुम्हारी देवीमूर्त्ति। इससे तो मृत्युका रोध होगा नहीं। अनन्त रूप जब एक ही रूपमें बिलकुल मिल जायगा तब ही मृत्युके ग्राससे परित्राण पाऊँगा। फिर जोर आवाजसे पुकारा। भावतंद्रासे अच्छादित थी आँखकी दृष्टि। जंगलेकी राह देखी एक छायामूर्त्ति। घरमें उसके प्रवेश करनेपर उजाला हो गया। देख पायी चिन्मयी मातृमूर्त्ति। माँ तनिक सी मुस्कराई और देखते-देखते अन्तर्हित हो गई। तब जंगला हो के देख पाया कि वे ही परिचित साधुजी खड़े हैं। वे बोले कि बहुत देरसे डाकिया आपकी प्रतीक्षासे खड़ा है, किवाड़ खोलिये। अनेक शब्द कानमें आ पड़े, साधुजीको भी अस्पष्ट रूपसे चिन्ह सका किन्तु वास्तविक रहस्य कुछ समझ नहीं पाया साधुजीके कहनेपर डाकियाने तब जोरसे किवाड़में धक्का दिया। साधुजी भी जोरसे पुकारकर कहा कि किवाड़ खोल दीजिये। मेरी अवस्था देखकर वे

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

किंकर्त्तव्यविमूढ़ हो गये। वे देख पाये कि अवश-विवश शरीर लेकर मैं उठ नहीं सकता था। क्षण समय बाद चैतन्य हुआ। बहुत धीरेसे जाकर खिवाड़ खोल दिया।

कौन लाया इस डाकियाको मेरे दरवाजेके सामने? अरी, वही ज्योतिर्मयी, वही चिन्मयी! उसके अनन्त विश्वमें अनन्त जीव रहते आये हैं। कितने गुणी कितने ज्ञानी रहते आये हैं उनकी इस विश्व—सभाके बीच, तो भी उनके मर्ममें बजी मेरी मर्मवीणाका सुर! डाकिया (पियन) ने मनीआर्डरका फारम मेरे हाथमें दिया। काँपते हाथसे नाम सही किया। साधुजी साक्षी हुए। प्राप्य रुपया देकर पियन चल दिया।

करुणाका झरना यह करुणामयी! पुरीमें लोकालयके बीचमें था, यहाँ लोकालयसे अलग एक निर्जन वनमें हूँ। किसीसे कोई पत्राचार नहीं, यहाँ तक कि श्री श्रीठाकुरसे भी नहीं। इलहाबादके दादामणिको भी कोई सूचना मैंने दी नहीं, तब कौन यह रुपया भेजा? मनीआर्डर फारममें जिनका पता ठिकाना देखा वे बिलकुल अपरिचित व्यक्ति बंगाली भी नहीं। उत्तर प्रदेशके एक प्रान्तसे वह मनीआर्डर आथा था। कूपनमें सिर्फ यही लिखा था—"भगवती ने सपनेमें आदेश दी हैं इसीसे यह रकम भेज रहा हूँ"। ये कई शब्द हिन्दीमें लिखे थे। 'भगवती' शब्द कान—प्राणमें मधुकी वर्षा करने लगा। बार बार 'भगवती' शब्दका जाप करने लगा। अब समझ गया कि इसीसे भगवती डाकियाके आनेके समय ज्योतिर्मय रूपसे दर्शन देकर अन्तर्धान हो गई थी।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

साधुजी बादमें किवाड़को बन्द करने नहीं दिये। वे गंगासे जल भर लाये और हमें स्नान करनेको कहे। तब प्राय दो बजा होगा। फाल्गुन महीनेका शेष भाग था, जाड़ा तब भी पड़ता था, इसीसे थोड़े ही जलसे स्नान किया। साधुजी उसी क्षण गंगा पार होकर मेरे लिये चावल तथा अन्यान्य सामग्री लाकर दिये। क्या क्या लाये सो स्मरण नहीं है। वे मेरे घरके एक कोनेमें जो चूल्हा था उसपर रसोई चढ़ा दी। मैं उनको रोक सका नहीं। क्या रसोई हुई थी वह ठीकसे याद नहीं है किन्तु जो कुछ बना था माँको अर्पणकर अमृत भावनासे पाया था, यह अभी तक स्मरण है। निःस्वार्थ अकृत्रिम बांधव साधुजी उस दिन यथार्थ ही मानवता का परिचय दिये थे।

दूसरे दिन साधुजी मुझे साथमें लेकर गंगाके पार गये और दुकानसे मेरी प्रयोजनीय कइ वस्तु खरीदकर दिये। चावल, दाल, आटा, आलू, घी एवं थोड़ी सी बुकनी मसाला भी खरीद दिये। स्वास्थ्य रक्षाकर तपस्या करना होगा। शरीरको अधिक कष्ट देनेसे, निर्यातन करनेसे तपस्या होती नहीं। बुद्धदेव भी सुजाताके घरमें बहुत दिन तक अन्न खाकर तपस्याकी थी। मैं साधु जी के अत्य-धिक स्नेह देखकर उनसे हार मान ली। जो कुछ हो, मैं फिर अपने मनमाना तपस्यामें निमग्न हो गया। स्नान भोजनका समय ठीक रखनेकी विचार करता किन्तु ठीक रख सकता नहीं। साधुजी भी तपस्या ही करने आये थे लेकिन वे इस प्रकार गभीर अवस्था प्राप्त नहीं कर सकते थे; बोलकर खेद प्रकाश करते थे। किन्तु वे बाहरसे

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

देखनेपर ही समझ सकते थे कि साधनमें कौन गभीर भावसे मग्न रहता अथवा नहीं। जँगलेमें पल्ला था नहीं इसीसे वह खुला ही रहता था। वे उसी जँगले होकर मुझे अनेक समय पुकारकर स्नान एवं भोजन करने कहते थे। सुखसे ही मेरे दिन कटने लगे, कोई अभाव नहीं कोई चिन्ता नहीं। तब अधिकांश समय माँके प्रेममय विराट वक्षमें मग्न रहा करता था।

ततः पर वितर्कानुगत एवं विचारानुगत संप्रज्ञात योगमें अधिक देर स्थित रहनेकी शक्ति प्राप्तकी। उस विज्ञानमय क्षेत्रमें तन्मात्राकी साधना करनेसे अनेक प्रकारकी विभूति उपार्जन की जा सकती थी किन्तु गुरुका निषेध था इसीसे विभूति लाभका रास्ता सुगम देख-कर गुरुका निषेध वाक्य स्मरण हो आता था। विचारानुगत संप्रज्ञात योगसे आनन्दानुगत संप्रज्ञात योगका भी अनुसंधान पाने लगा। पहले ही कह चुका हूँ कि वितर्कानुगत संप्रज्ञात योगमें रहती दृश्यकी छाया मूर्त्ति। इस परिदृश्यमान जगत् सत्ताके भीतर छाया जैसे भसती रहती। स्मृतिका जगत् भी छाया—समान भसता रहता उस विराट् सत्ता बोधमें। विचारानुगत योगमें कोई रूप रहता नहीं, मात्र अनन्त शब्द तरंग प्रवाहित होती रहती है। वह शब्दराशि नाना तालसे झंकृत होती। अन्तमें बजता सातों सुरसे। सातों सुर भी मिल जाते प्रणव ध्वनिमें। वैष्णव साधय गण नामीसे श्रेष्ठ नामको ही कहते। रूप जहाँ नाममें विलीन हो जाता तहाँ तो नाम ही श्रेष्ठ होता। मैं नामीको गँवाकर नामका संधान (पता) पाया

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

है, रूपको गँवाकर मंत्रजगत्‌में प्रवेश किया है। असंख्य शब्दोंको गँवाकर एकमात्र इष्ट मंत्र पाया है।

"एतद्ध्येवाक्षरं परम्। एतद्ध्येवाक्षरं ज्ञात्वा ब्रह्मलोके महीयते।" ऋषिने और भी कहा है—'एतद्ध्येवाक्षरं ज्ञात्वा योयदिच्छति तस्य तत्।' इस वितर्कानुगत संप्रज्ञात योगमें अवस्थिति होनेसे साधक जो कुछ चाहता वह पा जाता। मुझे तो चाहनेकी कुछ भी नहीं। मैं तो उन्हींको चाहता जिनके ये अनन्त नाम जिनके ये अनन्त रूप हैं। मैं सालोक्य चाहता नहीं, सामीप्य वा सारूप्य भी नहीं चाहता। मैं चाहता उनके साथ एकान्त भावसे युक्त होने मिल जाने, सायुज्य अवस्था लाभकर प्रेम समुद्रमें मिल जाने।

नामका प्रवाह रहता नहीं, मंत्र भी डूब जाता उस आनन्द महासागरमें। ॐ ॐ, माँ माँ, हरि हरि, ऐं ऐं, क्रीं क्री, क्लीं क्लीं, हूँ हूँ इत्यादि जब जिस मंत्रका जप करता उस मंत्रका स्रोत गुम जाता उस आनन्दके महासरोवरमें। आनन्दके उद्वेलनसे वाक्‌की उत्पत्ति होती है, वाक्‌से रूपकी उत्पत्ति होती है। अनन्त विश्वके अनन्त नामरूपोंकी उत्पत्ति होती उसी आनन्दके उद्वेलनसे। समस्त मंत्र, समस्त नामका उत्स है वही आनन्द सरोवर। इसीसे ऋषियोंने गाया है—

आनन्दाद्ध्येव खल्विमानि भूतानि जायन्ते।
आनन्देन जातानि जीवन्ति।
आनन्दं प्रयंत्यभि संविशन्तीति।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

आनन्दसे ही सब प्राणी उत्पन्न होते, आनन्दसे जीवन यापन करते और अन्तमें आनन्दमें ही जाकर विलीन हो जाते हैं।

वरुण ऋषिके पुत्र तपस्वी भृगु तपस्या करते करते अन्न, प्राण, मन तथा बुद्धिको अतिक्रमणकर इस आनन्दमय क्षेत्रमें पहुँचे थे। यह संप्रज्ञात योगकी तीसरी भूमि है। इस आनन्दमय भूमिका पता पानेसे विषयानन्द बिलकुल अच्छा नहीं लगता है। असंसक्तिका नामकी पंचम भूमिका ही यह आनन्दमय क्षेत्र है। यहाँ आसक्ति रहती नहीं। जो कुबेरके भंडारका मालिक होता उसे क्या फिर काँच बटोरना अच्छा लग सकता? अन्तरमें वास्तविक वैराग्य आता इसी असंसक्तिका नामकी पंचम भूमिकामें अवस्थित होनेपर। आनन्द सरोवरमें एक बार अवगाहनकर लेनेपर विचारानुगत एवं वितर्कानुगत संप्रज्ञात योगमें अवतरण करनेपर भी यहाँ तक कि मनोमय क्षेत्रमें भी उतर आनेपर अपनेको उज्वल स्वच्छ तथा निष्पाप मानता है। अधिक देर तक इस आनन्दका प्रवाह शरीर और मनमें प्रवाहित होता रहता है। किसी-किसी समय सात आठ दिन पर्यंत इस आनन्दका स्रोत प्रवाहित होता रहता है।

वनपथके बीच अपनी निर्जन कुटियामें बैठ उस आनन्दमयके ध्यानमें लीन होने लगा। कब दिन चला जाता कब रात आती इसका होश नहीं रहता था। एक दिन रात नौ बजेमें मनमें आया कि सुबह हो गयी। पूर्व दिनकी रात तीन बजे ध्यानमें बैठा था सारा दिन बीत गया रातके नौ बजनेपर मनमें आता कि प्राय सवेर हो गया। और दिन जैसे रात तीन बजे ध्यानमें बैठता और सवेर छै

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

बजे वा दोपहरमें उठ जाता था आज भी मानों उसी तरह सबेर छै वा बारह एक बजा है। किवाड़ खोलकर जब बाहर हुआ तो चारों ओर घोर अंधकार देखा। मेरे किवाड़के खुलनेकी आवाज सुनकर साधुजी दौड़ आये। वे प्राय सारे दिन कई बार मेरे जंगलेके पास आना-जाना किये किन्तु हमें पुकारनेका साहस नहीं हुआ। वे हँसकर बोले—दिन तो बीत गया अभी रातमें नौ बजा है। तब रसोई करनेकी प्रवृत्ति नहीं हुई, आटा और चीनी गंगा जलमें घोल-कर खा लिया। निद्रा आती नहीं, देह एवं मनमें, प्राणमें आनन्दका स्रोत प्रवाहित होता था। कुछ देर बिस्तरेपर लेट फिर उठ बैठा। कोई भी अवसादका चिह्न शरीरमें नहीं, सब आनन्दसे परिपूर्ण था। इसी प्रकार मेरे दिन कटने लगे। समाधिसे साधारण अवस्थामें उतर आनेपर भी भावका नशा बहुत देर तक रहता था। आनन्दके नशासे मस्त मन सर्वत्र आनन्द ही देख पाता था।

चैत मास भी बीत गया। अंग्रेजी एप्रिल महीना था। दोपहरमें कुछ गरम मालूम होता था। टीनकी नीची छत होनेसे घर गरम हो जाता था। अधिक आहार करने वालेसे जैसे योगकी साधना होती नहीं उसी तरह निराहारीकी भी योग साधना बनती नहीं। अधिक सोने वाले वा अधिक जगने वालेसे भी योग सधता नहीं। अत्यन्त गरम वा अत्यन्त जाड़ा भी योगके लिये उपयोगी नहीं। यद्यपि बाहरमें उतना गरम नहीं तथापि मेरी छोटी कुटियामें टीनकी छतके सबबसे दोपहरमें गरमी पड़ती थी। इसीसे मैं तब गंगाके तट एक एकान्त स्थानमें छायामें बैठ ध्यान करता था। पहले जिस गंगाकी

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

कलकल ध्वनिसे मेरी साधना उद्दीपित होती थी अब सोई कलकल ध्वनि प्रतिकूल बोध होने लगी। अवश्य एक बार गंभीर ध्यानमें अर्थात् समाधिमें निमग्न हो जानेपर बाहरका कोई भी शब्द कानसे सुना जाता नहीं, जैसे गाढ़ी सुषुप्तिमें कोई उत्कट शब्द भी सुना नहीं जाता है। किन्तु समाधिमें प्रवेश करनेके समय बहुधा यह कलकल ध्वनि प्रतिकूल जान पड़ती है। पक्षियोंकी बोली भी अच्छी लगती नहीं। वायुकी सनसनाहट भी बाधा उत्पन्न करती। प्रतिकूल भावको अनुकूल करनेकी चेष्टा करता। उस कलकल ध्वनिके साथ अन्तरके सुरको मिला देता था, फिर मिला देता उस सनसनाहटके बीच, उस पक्षीके गानमें। अन्तरके सुरके साथ मिला देनेपर प्रतिकूल शब्द भी अनुकूल मालूम होने लगता। बाहरकी आवाज बाहर ही रह जाती। अन्तर (भीतर) का सुर बाहरसे ढोकर ले जाता आनन्दमय धाममें।

वैशाख महीना, कौन तारीख सो ठीक स्मरण नहीं, लछुमन झूलेसे एक साधु आकर मेरी कुटिया में उपस्थित हो गये। हाथमें उनके श्री श्रीठाकुरकी लिखी चिट्ठी थी। मैं कहाँपर था सो श्रीश्रीठाकुर नहीं जान पाते थे इसीसे इन स्वामीजीको मेरी खोज लेनेके लिये लिखे थे। पता पानेपर मुझे अपने आश्रममें भी ले जानेको लिखे थे। पत्र देखा, आदेश पढ़ा। साधुजीका नाम था श्रीकालिकानन्द गिरि। वयस पचास वर्षके लगभगका था। खूब चकाचक गेरुआ रंगका अलखा पहने, माथेमें पगड़ी, पाँवमें दामी जूता, हाथमें छड़ी, शरीरसे हृष्ट पुष्ट एवं बलिष्ठ थे। इस अज्ञात कुलशील साधुको

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

देखकर मुझे अच्छा नहीं लगा। वे मुझको श्री श्रीठाकुरकी दुहाई देकर अपने आश्रममें जानेका अनुरोध वा आदेश किये। मैंने विनीत भावसे कहा—कई एक दिन बाद जानेकी इच्छा होती अभी नहीं, मैं यहीं भले प्रकारसे अभी हूँ। किन्तु उन्होंने मेरी कोई बात ही सुनी नहीं। गुरु वाक्यकी दुहाई देकर अपने पहाड़ी नौकरको मेरा बिछौना आदि बाँधनेका आदेश दिये। गढ़वाली नौकरने आदेशका पालन किया। साधुजीके आनेपर उनकी लोहेकी कड़ाही और गगरी उनको वापस दे दिया। मैं अनिच्छासे इस कुटियाको छोड़ चले जानेको बाध्य हुआ, यह आन्तरिक दुःखकी बात भी साधुजीको अवगत करा दिया।

जंगलके बीच होकर एक पगडंडी-रास्ता गंगाके तीर-तीर जाता। स्वर्गाश्रम गंगाके जिस पारमें हैं उसी पारमें कालिकानन्दजीका भी आश्रम अवस्थित है। स्वर्गाश्रमसे प्रायः एक मील होगा। यह भी जनविरल स्थान है। उसके कुछ ही दूरपर एक डाक बंगला और दो चार मात्र पहाड़ियोंके घर हैं। और भी कुछ दूर एक ब्रह्मचर्य विद्यालय है, उसमें कई एक हिन्दुस्थानी लड़के और दो तीन जन अध्यापक रहते। आश्रमका नाम 'सत्य-सेवाश्रम'। ब्रह्मर्षि श्री श्रीसत्यदेवजीके नामसे ही कालिकानन्दजीने आश्रमकी प्रतिष्ठा की थी। वे ब्रह्मर्षिदेवके मंत्र-शिष्य नहीं थे। एक बार हरिद्वारमें ब्रह्मर्षि ठाकुरसे उन्हे भेंट हुई थी एवं कुछ देर वार्त्तालाप भी हुआ। तभीसे वे ब्रह्मर्षि देवका शिष्य कहकर अपना परिचय दिया करते। और इसीसे आश्रमका नाम भी ब्रह्मर्षि देवके नामपर रखे थे।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

कालिकानन्दजीके सेवाश्रममें साधक कोई भी नहीं। एक व्यक्ति मंद्राजी साधु सवेरे नौ बजेमें आकर दो घंटा तक रोगियों को औषध वितरणकर चले जाते एवं दो पहरमें फिर आके भोजन-कर अन्यत्र चले जाते थे। आश्रममें रहता एक पहाड़ी रसोइया, एक नौकर और एक बंगाली युवक। युवक रहता तो था हरिद्वारमें यहाँ बीच बीचमें आ जाता था। मुझे जो आश्रममें लाये उसमें उनका अपना ही स्वार्थ था, यह समझनेमें विलंब नहीं हुआ। मैं भी कुछ डाक री विद्या पढ़ी थी इस लिये मुझसे अपना औष-धालय मेरे द्वारा परिचालन करायँगे यही उनकी अभिलाषा थी। होम्योपेथी औपधालय होनेके कारण पुस्तक देखकर दवाई वितरण करनेसे ही चलेगा विशेष ज्ञान बुद्धिकी आवश्यकता नहीं, यह बात भी स्वाभीजी हमें कह दिये। हा भाग्यका परिहास! जिस डाक्टरी पढ़ाईको छोड़ घरसे बाहर निकला वही डाक्टरी क्या फिर करना पड़ेगा इस दूर हिमालय की तराईमें बैठकर?

वातावरण अच्छा नहीं लगता। एक दिन देहरादूनसे दो तीन व्यक्ति बंगाली और दो एक व्यक्ति हिन्दुस्थानी आए, सूट कोट पहने खूब फिट् फाट्मे वे लोग थे कोई मिलिटरी कोई गवर्नमेन्ट ऑफिसमें नौकरी करते थे। मद्य और औरतके अतिरिक्त उन लोगों के तृप्तिसाधनके लिये यावतीय सामग्रियोंकी व्यवस्था हुई थी। क्योंकि वे आश्रमके पृष्ठ-पोपक थे। सिगरेटके धूआँसे आश्रम अन्धकार मय हो गया था। संध्या होने पीछे प्रचुर परिमाणमें पीसी भाँगकी गोली अथवा जलमें छानकर पीए। उनके साथ और भी

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

कोई पदार्थ था या नहीं सो मैं नहीं जान सका। अब शुरू हुआ अट्टहास (ठहाका) विकट हास्यसे आश्रम प्रेतपुरी सा मालूम पड़ने लगा। इससे केवल व्यथित ही न हुआ मैं, विरक्त भी हो गया। दूसरे दिन सवेरे वे जलपानकर चल दिये। कालिकानन्दजी भी उनके साथ देहरादून गये; शीघ्र ही लौटनेकी बात बोल गये।

इधर और एक नयी समस्यामें आ पड़ा। तमोगुणी पहाड़ी रसोइयाकी पकाई रसोई खाकर मेरी तपस्याका जो प्रभाव था वह क्रमशः म्लान होने लगा। चित्त मलीन सा मालूम करने लगा। जो चितिशक्ति मेरी आँखोंमें भरी थी प्रत्येक दृश्यसे रूपायित होकर मेरे साथ खेलती थी, जो मेरे इन्द्रिय पथमें संचरण करती जो मेरे देहको अपनी लीला घर बना ली थी। वह शक्ति मानो लुप्त हो गई। व्याप्ति बोध क्षीण हो गया। मन ही मन तब भी पाठ करता—

'चितिरूपेण याकृत्स्नमेतद्व्याप्य स्थिता जगत्।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः॥'

और भी पाठ करता था—

इन्द्रियाणामधिष्ठात्री भूतानांचाखिलेषु या।
भूतेषु सततंतस्यै व्याप्तिदेव्यै नमोनमः॥

किन्तु हाय! उस चितिशक्तिको फिर देख पाता नहीं। वह चितिशक्ति फिर उस तरह मुझे अपने वक्षमें लपेट रखती नहीं। ध्यान वा समाधिस्थ होनेके समय भी नहीं; इच्छा भी वैसी प्रबल नहीं। यह क्या दशा हो गई मेरी! इस अवनतिके कारणका अनुसंधान करने लगा। समझ पाया कि उस चरित्रहीन पहाड़ीके

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

हाथसे पकाया अन्न ही मेरे अनिष्टका एक प्रधान कारण था। मैं कूकरमें रसोई तैयारकर खाना शुरू किया। कूकर उस आश्रममें ही था। दो-तीन दिनके भीतर ही चित्त फिर स्वच्छ बोध होने लगा। खोज करनेपर पता चला कि वह पहाड़िया वास्तवमें चरित्रहीन था। चरित्रहीन लोगका पकाया अन्न देह मन तथा चित्तको कलुषित करता है। इसीसे ऋषिगण आहार-शुद्धिके ऊपर अनेक प्रकारकी विधि-विधानकी व्यवस्थाका प्रचार कर गये हैं। आपाततः वहाँका वातावरण ही मुझे बिलकुल पसन्द नहीं था। इसीसे श्री श्रीठाकुरको पत्र लिखा, किन्तु वह पत्र वे कालिकानन्दजीके करमाटाँडसे चले जानेपर पाये।

कालिकानन्दजी देहरादूनसे कलकत्ता चले गये थे। रास्तेमें करमाटाँडमें उतरकर श्री श्रीठाकुरसे भेंटकर लिये थे। श्री श्रीठाकुर हमें लिखे "तुम कुछ दिन धीरज धर अवश्य कालिकानन्दजीके आश्रममें रहना; वह हम लोगोंका ही आश्रम है। भविष्यमें इस आश्रमसे अनेक कल्याणकारी कार्य होंगे जिससे तपस्वी लोग भी सुयोग प्राप्त करेंगे।" हा कालिकानन्दजी ! तुमने बहुरुपिया बनकर श्री श्रीठाकुरको भूल समझा दिया। मैं तब असहाय बोध करने लगा। प्रत्येक दिन ही मनमें होता कि फिर उसी कुटियामें लौटकर चला जाऊँ। मेरी एकान्त कुटिया, मेरी तपस्याका पुण्य कक्ष उस कुटियामें। वह तो है मेरी तीर्थ भूमि, मेरा देव-मन्दिर। इस नरकमें क्यों वासकर रहा हूँ। किन्तु श्री श्रीठाकुर तो लिखे हैं—धैर्य धारण कर रहना होगा।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

कालिकानन्दजीकी चिट्ठी कलकत्तेसे आई कि वे शीघ्र ही आ रहे हैं। आने पर बोले कि अब आश्रम खूब जोरसे चलेगा, रुपया पैसा भी प्रचुर संग्रहकर लाया है। शीघ्र ही एक बड़ा आदमी इस डाक बंगलेमें आने वाले हैं। उनके आनेपर आश्रमकी अनेक सुविधा होगी। उनके साथ उनके परिवार वर्ग भी आयेंगे। उनकी कई एक युवती कन्या भी हैं। वे ब्राह्म होनेसे स्त्री स्वाधीनताके अग्रदूत हैं। उन युवती लड़कियोंके आनेपर वे तुम्हारे साथ अबाध बातचीत एवं मेल-जोल करेंगी। निर्जन पहाड़ पर नीरस जीवन यापन करना वास्तवमें बहुत ही कठिन है। उस पाषंडी साधुकी बातें सुनकर मन कुपित हो उठा। मनमें आया कि उसको पकड़ कर गंगाजलमें भसा दूं। मैं आज ही आश्रम त्यागकर चला जाऊँगा यह निश्चय किया। ठीक उसी समय एक पत्र मिला। कलकत्तेसे वह पत्र (redirect) होकर वहाँ आया था। अपने मकानसे मेरे चाचाजी पत्र दिये थे। करुणापूर्ण वह पत्र था। संक्षेपसे कुछ उल्लेख करता हूँ। वे इस प्रकार लिखे थे—मैं अपुत्र हूँ, तुम्हें ही मैं पुत्र रूपसे पालन करता था। तुमने अपने जीवनका रास्ता निश्चितकर लिया है। इस बूढ़े वयसमें तुम्हारी माता एवं चाचीको साथ लेकर कुछ दिन तीर्थ यात्राकी इच्छा है। तुम दो-तीन महीनेके लिये आकर अपने मकानमें रहनेसे मैं बाहर जा सकता हूँ—इत्यादि। पत्रके साथ एक तार भी संलग्न था एक ही लिफाफेमें। तारमें लिखा था—'शीघ्र चले आओ।' उस पत्र एवं तारको आधार बना कर कालिकानन्दजीके आश्रमको त्याग करनेका मौका मिल गया।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

अब लछुमन झूलेका और भी कुछ विवरण लिखता हूँ। १९२३-२४ ई० में जो गंगामें बाढ़ आई थी उससे लछुमन झूलाका झूला भस गया था। तब वह झूला रस्सीका था। अभी जो झूलता-पुल (Hanging bridge) है वह पीछेसे तैयार किया गया है। मैं जिस समयकी बात कह रहा हूँ उस समय गंगाकी पारवारीकी व्यवस्था नावसे थी। अभी भी स्वर्गाश्रम जानेके लिये उसी प्रकार नावसे पार होना पड़ता है क्योंकि वहाँ कोई पुल नहीं है। श्रीकेदारनाथ तथा बदरीनारायण जो लोग जाते वे लछुमन झूलाका पुल पार होकर उस समयमें नावसे पार होकर कालिकानन्दजीके आश्रमके सामने होकर ही जाया करते थे। अभी भी जो कोई पैदल चलकर जाता वह उसी रास्तेसे जाता है। अच्छा रास्ता तो अभी है गंगाको दाहिनी ओर रखके। मोटर-बस सब इसी रास्ते होकर चलती हैं। कहा जाता है कि पांडव लोग भी गंगाको दाहिनी ओर रखकर ही महाप्रस्थान किये थे। मैं जब लछुमन झूलाके स्वर्गाश्रममें था तब बसकी चलाचलका कोई रास्ता नहीं था, इसीसे गंगा पार होकर एवं गंगाको बायीं ओर रखकर सब कोई केदारनाथ तथा बदरीनाथकी यात्रा करते थे।

स्वर्गाश्रमका वह मनोरम दृश्य अब नहीं। वह वन भी नहीं, वे पवित्र कुटियाएँ भी नहीं। सामान्य कई एक कुटियामात्र हैं। पचीस-छब्बीस वर्ष बाद जाकर देखा कि मैं तथा मिशनके साधुजी जिन कुटियोंमें रह रहे थे उनका निशान मात्र भी रह गया नहीं। अब लछुमन झूला अर्थात् गंगाके परपारमें भी अनेक मकानात तथा

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

देव-मन्दिर हो गये हैं। लछुमन झूलासे स्वर्गाश्रम जानेका रास्ता प्रशस्त हो गया है, रास्तेके किनारे-किनारे घर बन गये हैं और दूकानें बैठ गई हैं। वह स्वर्गकी छटा अब उस स्वर्गाश्रममें रह गई नहीं। यद्यपि तब भी क्वचित् तामसिक लोग भी वहाँ थे तथापि तपोनिष्ठ साधु भी अनेक थे। अभी जो सब साधु वहाँ हैं उनमें अधिकांश ही 'उदर-निमित्तम्' हैं। अनेक दूकान तथा गृहस्थोंके बस जानेसे चारों ओरका वातावरण कोलाहलमय एवं अपवित्र हो गया है। कलियुग इस स्वर्गराज्यमें भी प्रवेश कर गया। केवल लछुमन झूला ही कहता क्यों, देवप्रयाग, रुद्रप्रयाग, कर्णप्रयाग प्रभृति प्रत्येक प्रयागमें ही कलिका प्रवेश हो चुका है। धनकी लालसा कामिनी कांचनकी लालसा सर्वत्र ही प्रबल हो गई है। यहाँ तक कि पुण्यभूमि बदरीनारायण एवं केदारनाथमें भी धन-लोलुपगण ताक लगाके बैठ रहे हैं। किन्तु उसकी चर्चा अभी रहै।

मैं करमाटाँड़में आ पहुँचा। श्री श्री ठाकुर तब वहाँ ही थे। जाकर प्रणाम किया। उनके चेहरे और दृष्टिसे कुछ असंतोषका भाव मालूम हुआ। खूब शान्त बोलीमें धीरे-धीरे कालिकानन्दजीके आश्रमका वृत्तान्त उनको सुना दिया। मेरे पितृव्य (चचे) का पत्र भी उनको दिखाया एवं उस परिस्थितिमें मेरा क्या कर्त्तव्य था उस सम्बन्धमें भी उनकी अनुमति चाही। तब तो उनके प्रशान्त मुखसे मुस्कराहट खिली। वे करुणपूर्ण दृष्टिसे मेरी ओर हेरने लगे। बोले—आज रहो, स्नान भोजन कर विश्राम करो, तीसरे पहर फिर बात होगी। तीसरे पहर आदेश दिये—माता एवं चचाको तीर्थ

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

भ्रमणका सुयोग देना ही तब मेरा कर्त्तव्य था। कालिकानन्दजीको आश्रमकी पवित्रता रक्षा कर चलनेका निर्देश दिये। ऐसा नहीं करने पर इनका (गुरुदेव का) नाम आश्रमसे हटा देनेको लिखे। आश्रमके साथ उनका नाम जुड़ा रहेगा अथच पैशाचिक भावसे आश्रम चलाया जायगा इसको वे सह्य करनेमें राजी नहीं थे, यह बात भी वे लिखे। किन्तु काल किसी भी पदार्थको स्थायी होने देता नहीं। कई एक वर्षके भीतर ही कालिकानन्दजीकी मृत्यु हो गई। आश्रमकी जमीन और मकान बाकी मालगुजारीमें नीलाम पर चढ़ गया। पीछे एक मारवाड़ीने उस जमीनको खरीद कर उसपर अट्टालिका बना ली। उस मकानको भी सन् १९५९ ई० में देख आया हूँ क्योंकि जिस साल हम लोग केदारनाथ एवं बदरीनारायण गये थे तब वह मारवाड़ी सज्जनने उसी मकानमें टिकनेके लिए मुझे अनुरोध किया था।

कालिकानन्दजीका इतिहास कुछ संक्षेपमें लिखता हूँ। वे बंगाली थे, कलकत्तेके अंचलमें ही उनका मकान था। युवावस्थामें एक बार साधु बनकर बाहर निकले थे, बादमें गेरुआ वस्त्रको बाकसमें बन्द कर संसारी हो गये। स्त्री-वियोगके पीछे फिर वही गेरुआ कपड़ा पहन कर साधु हो गये पुनः वे साधु-वेष परित्याग कर दूसरी बार दार-परिग्रह (विवाह) किये एवं कलकत्तेमें एक होटल खोले। धनी व्यक्तिगण रातका खाना खानेके लिये बहुतेरे वहाँ आया करते थे। उसको होटल नहीं बोलकर प्रमोदगृह कहना ही बेहतर होगा। अर्थात् वह एक व्यभिचारका अड्डा था। इन

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

बातोंको स्वयं कालिकानन्दजी डींगके साथ हम लोगोंको एक दिन कहे थे। वे भी धनियोंके साथ अपनी जीवन नौका भसायी थी। मद्य, मांस तथा व्यभिचारमें लिप्त हो गये थे। दूसरे पक्षकी स्त्री उनका यह नतीजा देखकर आत्महत्या कर ली। इसके वाद गेरुआ वस्त्र पहन कर वे यह वर्तमान कालिकानन्द स्वामी हो गये। तपस्या जैसी कोई भी बलैया उनके जीवनमें था ही नहीं। अभी एक डाक्टर-खाना खोल, उसीको आधार बना जीविका निर्वाह करनेकी उनकी इच्छा थी। भाँगके नशेमें गद्गद कंठसे एक दिन वे अपने जीवनकी कुत्सित बातें बोले थे। उन वातोंको लिपिबद्ध कर लेखनी वा पुस्तक-को कलंकित नहीं करना ही उचित है। जनकल्याणके लिये वे आग्रहशील हुए थे ऐसा कहना भूल होगा प्रत्युत आश्रमका नाम देकर खूब आनन्दसे जीवन बितानेका एक अड्डा खोल रखा था ऐसा ही कहना ठीक होगा। हिमालयका नाम सुन, लछुमन भूला-का नाम सुन, सेवाश्रमका नाम सुन सहज विश्वाससे लोग धन देंगे, और उस धनका यत्किंचित अंश जन-सेवामें खर्चकर अवशिष्ट धनके द्वारा सुख-चैनसे जीवन यापन करेंगे यही उनके आश्रम खोलनेका उद्देश्य था। कालिकानन्दजीकी कथा यहीं समाप्त कर देना संगत समझता।

मेरे जीवनका पट-परिवर्तन हो गया। मैं स्वर्गाश्रमका सुख त्याग कर फिर पिंजरेमें वंद होने चला, यह सोचते-सोचते श्रीश्रीठाकुरकी चरणधूलि शिरमें लगा कर अपने घरकी ओर चला। जय माँ, रक्षा करो।

———

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

मेरे जीवनमें राजनीतिका प्रभाव

सन् १९२६ ई० मई महीना। हरिद्वारसे करमाटाँड आते हुए रास्तेंमें लखनऊ स्टेशनपर कई एक सिक्ख युवक हमलोगोंके डब्बेमें चढ़े, वे कलकत्ते जा रहे थे। कलकत्तेमें तब हिन्दू मुसलमानोंका दंगा शुरू हो गया था वे सिक्ख, अपने चिर शत्रु मुसलमानोसे लड़ाई करने कलकत्ते जा रहे थे, ऐसा कहे। कलकत्तेके मैदानमें यही पहला हिन्दू मुसलमानका युद्ध था। खिलाफत खतम हो चुकनेपर मुसलमानगण महात्मा गांधीजीकी दल छोड़ अंग्रेज गवर्नमेन्टकी रायसे हिन्दूके विपक्षी हो गये। देशकी स्वाधीनता-आन्दोलनको दबा देना ही इस विपक्ष आचरणका मुख्य उद्देश्य था। गांधीजी राष्ट्रीय क्षेत्रमें दो ठो भूलनिति ग्रहण किये थे, जिसका प्रायश्चित भारतवासी गण अबतक भी कर पाये नहीं। एक तो उनकी कठोर अहिंसा नीति दूसरी उनकी मुसलमान प्रीति। खिलाफत आन्दोलनको काँग्रेस आन्दोलनके साथ मिलाकर वे हिन्दू एवं मुसलमान दोनोंके ही प्रतिनिधि थे यह बात उस धूर्त्त अंग्रेजके समक्ष साबित करने चाहते थे। किन्तु वैसाकर सके नहीं। महम्मद अली एवं शौकत अली नामके दो मुसलमान नेता गांधीजी के साथ कुछ दिन सहयोग दिये थे अपने स्वार्थ साधनके लिये, कुछ भारतकी स्वाधीनताके लिये नहीं। पीछे वे अली भ्राता युगल गांधीजी एवं काँग्रेसके प्रतिद्वन्दी हो गये। इसके बाद आये

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS
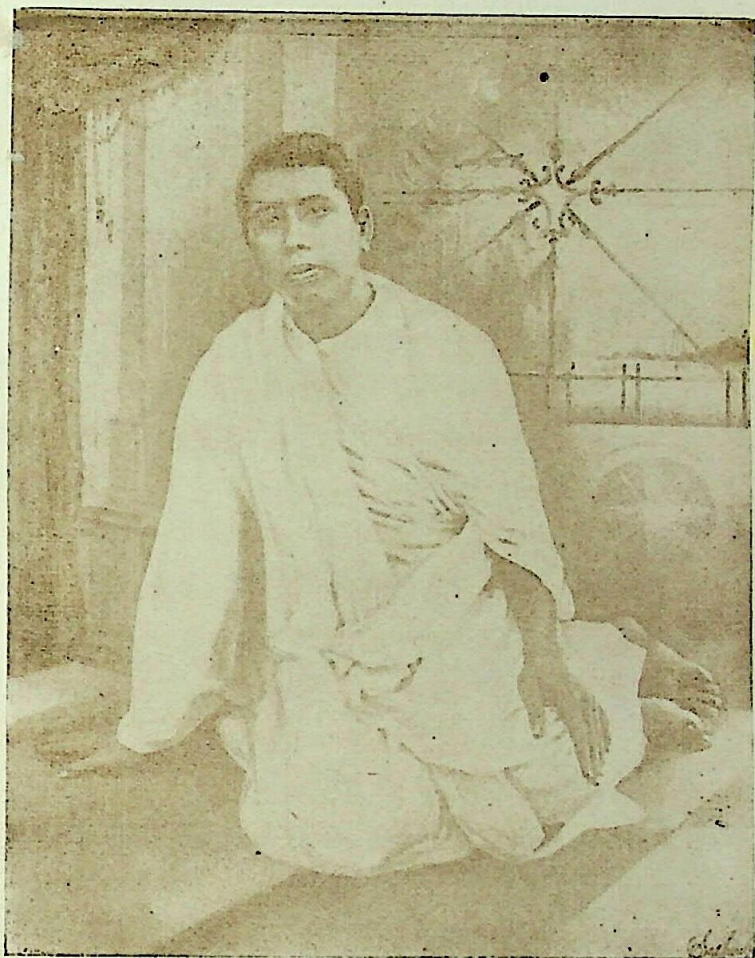
श्री श्री बाबा नरेन्द्रनाथजी ब्रह्मचारी

जन्म—बंगाब्द १३११ ज्येष्ठ—कृष्णा प्रतिपद

३२ वर्ष वयसका चित्र कलकत्ते में

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

मुस्लिमलीगके नेता मिस्टर जिन्ना। ये मिः जिन्ना अंग्रेजोंके वाहक, धारक तथा हिन्दुओंके घोर शत्रु थे। गांधीजी कभी अपने आध्यात्मिक बलसे, कभी अनशन, कभी नीति कथा सुनाकर वा कभी उनको प्रलोभन देकर भुलानेकी चेष्टा करते थे। किन्तु उनके सभी प्रयास बिफल हो गये। तब सात करोड़ मुसलमानको छोड़ देनेपर (प्राय तब सभी मुसलमान देशके द्रोही नहीं होते) २८ करोड़ हिन्दू, सिक्ख अर्थात् भारतबासी गण अवाध रूपसे देशकी स्वाधीनता प्राप्तकर सकते। काल भुजंग उस मुस्लिमलीगको संतुष्ट करने जानेपर गांधीजी हिन्दुओंके अधिकाधिक दूध एवं फलोंका विनाश किये। इससे तो उनका विष और भी बढ़ गया। गांधीजीके राष्ट्रीय क्षेत्रमें यह एक सांघातिक भूल थी। इतिहास लेखक गण यह लिख रखेंगे।

पीछे गांधीजीकी मृत्यु (मारे जाने) के बाद कॉंग्रेसकी उस भूलकी पुनरावृत्ति करनेसे भारतका अनिष्ट हो रहा है। भारत माताको खंड प्रखंडकर हिन्दू तथा मुसलमान दोनों जातियोंके अलग-अलग राज्य बन गये। गांधीजीकी इच्छाके विरुद्ध ही उनके सहकर्मी लोग द्वितीय महायुद्धके बाद पंगुवत् अंग्रेजोंके आधिपत्यमें देशका बँटवारा करा लिये। गद्दी दखल करनेके लालचसे वे उस बँटवारेमें सहमत हो गये। मिः जिन्नाने धन-जन दोनोंका विनिमय कर देश-विभागका प्रस्ताव किया था किन्तु भाव प्रवण कांग्रेस दल उसमें सहमत नहीं हुए। परिणाम स्वरूप अनेकोंकी हत्या होनेपर भी हिन्दू मुसलमानोंका विरोध रही गया। गांधीजीकी

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

अहिंसाका आदर्श केवल उनके जीवन ही में रहा पीछे तो देश पैशाचिक हिंसामें लिप्त हो गया। भारतकी सब जगहोंमें, विशेषकर बंगाल तथा पंजाबमें लोकक्षय, गृहदाह, नारीहरण वा नारियोंका अपमान अधिक हुआ। विहार, युक्त प्रदेश, बंबई तथा राजस्थानमें आग जल उठी। मनुष्य विवेक तथा नैतिक बलको खो दिया, जिसकी प्रतिक्रिया अभी भी देशमें विद्यमान हो रही है। विशेषतः श्रीनेहरूजी तथा उनके अनुयायी लोगोंकी अतिशय प्रीति मुसलमानों के प्रति होनेसे देशको टुकड़े-टुकड़े कर देनेपर भी भारतवर्षमें अनेकों मुसलमान रही गये, जो लोग अभी भी भारतका सर्वनाश करनेपर तुल हुए हैं। राजनीतिके साथ नाममात्र अहिंसा तथा मुहब्बतका मेल करने जानेपर कांग्रेसी नेतागण वर्णनातीत भूल किये जा रहे हैं। इस भूलकी परिसमाप्ति कब और कहाँ होगी सो भगवान ही जानते। नेताओंकी दूरदर्शिता वा ठीक दृष्टिकोणके अभावसे ही देश स्वाधीन होकर भी स्वाधीनताका रसास्वादनकर पाता नहीं है। कांग्रेसके अनेक नेताओंके साथ सद्भाव रहनेपर भी उनकी इसी भूलके कारण कार्य क्षेत्रमें उन्होंके साथ मेरा सहयोग रहा नहीं। अभी अब उसके जिक्रका दरकार नहीं।

मैं करमाँटाडसे बंडेल और नयाहाटी होते हुए ढाकाकी ओर चला। कलकत्ते में दंगा हो रहा था इससे उस रास्तेका त्याग करना पड़ा। देशबंधु सी० आर दास एवं श्री नेहरूजीके पिता श्री मोती-लाल नेहरूजीकी स्वराज्य पार्टीके बीच तब खट-पट हो चली थी। फिर महात्मा गांधीजीका कांग्रेस-सूर्य बादलकी ओटसे झांकी-झँकी

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

मार रहा था। ठीक उसी समयमें हिन्दू-मुसलमानोंका दंगा छिड़ गया था। कलकत्तेमें दंगा रुका सही लेकिन सारे भारतवर्षमें तथा पूर्वीय बंगाल (खासकर ढाकेमें) हिन्दू तथा मुसलमानके बीच असद्भाव संक्रामक होकर ही रह गया। देशकी इस प्रकार जटिल परिस्थितिमें मैं अपने जन्मस्थान ढाका पहुँचा। ग्रामीण मुसलमान-गण तब तक भी हिंसा विषसे विषाक्त नहीं हो पाये थे, किन्तु शहरोंमें हिंसाकी प्रचंड आग जलती हुई देख पायो।

मेरे पितृव्य (चाचा) तीर्थयात्राके लिये तैयारी करने लगे, उनके साथ पड़ोसके और भी कई आदमी जानेवाले थे। कलकत्तेमें तब दंगा रुक जानेसे रास्तेमें उतना भयकी कोई आशंका नहीं थी, किन्तु घटना ही दूसरी तरह घटित हो गई। सहयात्री पड़ोसीके एक गोतियेकी मृत्यु हो गई। अशौच लेकर देवतादर्शनमें जाना शास्त्र-विधानसे उचित नहीं। वे ब्राह्मण नहीं थे, उनका अशौच महीने भरका था। एक मासके बाद क्या घटना होगी उसकी कोई स्थिरता नहीं, इसीसे मैं अपने चाचाको उनके शुभ संकल्पकी रक्षा-के लिये अनुरोध किया। किन्तु वे राजी नहीं हुए। जब भी हो, किन्तु वे अपने मित्रको साथ लेकर ही तीर्थ जायँगे ऐसी इच्छा प्रगट की। मित्रका अशौच खतम होते वे स्वयं रक्तचाप रोगसे आक्रान्त हो पड़े, यहाँ तक कि एक दिन गिरकर वे पक्षाघात (लकवा) से आक्रान्त हो गये। अनेक दिन यावत् उनको रोग-शय्यापर रहना पड़ा था। फिर तीर्थयात्रा हो सकी नहीं।

मेरे प्रति उन लोगोंका इस बार बहुत ही सद्व्यवहार था।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

नचिकेताने अपने कुपित पिताके अभिशापसे यमालय जाकर यमसे प्रार्थना की थी—मेरे पिताका क्रोध जिससे प्रशमित हो जाय, वे जिससे मेरे प्रति दयाके परवश हो जायँ एवं जिससे वे प्रशान्त मन-से सो सकें ऐसा ही वर मैं चाहता। घरसे भागकर मेरी भी ऐसी प्रार्थना थी—हे करुणामयी जननी! इन्होंके अन्तरमें शान्ति दो, इनको अपनी भूल सुझा दो, मेरे प्रति प्रसन्न हो जानेकी प्रेरणा दो। मेरी उस प्रार्थनाको माँ सुन ली थीं।

तब तो चाचाकी बीमारीके कारण घर छोड़ना असंभव-सा हो गया। उनका कोमल करुणाभाव मुझे वशीभूत कर डारता था। दिनके अधिकांश समयमें ही उनकी रोग-शय्याकी बगलमें मुझे रहना पड़ता था। मेरे हाथका जल, मेरे हाथकी पंखीकी हवा, मेरे ही हाथसे उनकी सेवा-सुश्रूषा उनको सबसे अधिक प्रीतिकर मालूम होता था। यहाँ तक कि वे अनेक बार औषध भी दूसरेके हाथका ग्रहण नहीं करते थे। एक मायाके बंधनमें पड़ गया। मनको पूछा—यह क्या स्नेह है या माया? क्या यह मुक्तिका मार्ग है या नवीन बंधन? इस अवस्थामें उनको त्यागकर चला जाना वास्तव-में क्या दोषावह काम नहीं होगा? पुत्रहीन वे, अन्तरसे मुझे पूरा प्यार करते। यह प्यार या सिर्फ मायाकी छलना है? अनेक देश तो घूम आया, कहाँ, कहीं भी तो ऐसा हार्दिक प्यार किसीसे मिला नहीं वरं अधिकांश स्थानमें दुर्व्यवहार ही पाया है। मेरी फूफी जो मेरे पितासे भी उमरमें बड़ी थीं, उनके स्नेहकी तो सीमा ही नहीं। माँ और चाची तो पुत्र स्नेहसे अंधी। वहुतों—आत्मीयोंका आश्रय-

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

स्थान है यह घर। इसीसे उनको इस विपद्के समय उपेक्षा कर देनेसे अपराध ही होगा ऐसा मनमें आया। पुनः भय भी होने लगा कि कदाचित् मायाकी सीकरसे आबद्ध न हो जाऊँ।

घरसे बहुत दूर नहीं एक विस्तृत मैदान है। वह लड़काईमें मेरे खेलका प्रांगण था। पिछले पहर अवसर पानेसे ही उस मैदानमें चला जाया करता। अब किन्तु वह खेलका प्रांगण नहीं, तपस्याकी पुण्यभूमि हो गई। चारों ओर धानका खेत बीचमें एक चौरस कुछ ऊँची जमीन। (पीछे उसी मैदानमें मेरे आश्रमका निर्माण हुआ था)। पिछले पहर उस मैदानमें बैठकर ध्यान मग्न होनेकी चेष्टा करता था। कुछ ही दूरीपर शीतलाक्षी नदी है, जहाँसे शीतल बतास बहकर आती थी। स्वर्गाश्रमका वह प्रशान्त भाव यहाँ नहीं रहनेपर भी मैं अपने अन्तरकी निधिको यहाँ भी पा जाता था। किसी-किसी दिन ध्यानकी अवस्था खूब गहरी होती थी। मनके स्तरको अतिक्रम कर अतिमानस चेतनामें अनुभवकर पाता था उस विराट् सत्स्वरूप का। देख पाता था—विराट् सत्ताके वक्षपर नाना प्रकारके रंगीन चित्र। चाचा, चाची, माँ, फूफी उस परदे पर अंकित हैं, और भी अंकित हैं पड़ोसीगण। अंकित है कितने मित्र तथा शत्रु, जैसे बायस्कोपके चित्र। चित्र सब खोदे हुए नहीं, तूलीसे अंकित। अनुराग रंगसे रंगीन वे चित्र सब। अन्तरका अनुराग मिटा देने पर मैं देख पाऊँगा अपना विशुद्ध निर्मल स्वरूपको। तुलीकी रेखा धो-पोंछ देनेसे देख पाऊँगा अपना निष्पाप, उज्वल, चिर सुन्दर रूपको।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

जो कुछ हो कभी नरनारायण ज्ञानसे अपने रोगी चाचेकी सेवा करता, कभी निर्जन मैदानमें बैठकर चिन्मय नारायणका ध्यान करता था। मैं लक्ष्यच्युत हुआ नहीं, दिग्भ्रान्त हुआ नहीं, यह मेरी अन्तर निधि बार-बार मुझे अवगत करा रही थीं अपने वक्षपर खींच ले आकर। जन्मान्तरीय कर्मफल तो कुछ भोग करना ही पड़ेगा। शुभ कर्मका शुभ, मन्दका मन्द फल।

दीर्घ ३।४ वर्ष यावत् मैं राजनीति क्षेत्रसे दूर ही रहा। आन्दोलनकारियोंके साथ वास्तव क्षेत्रमें मेरा कोई सहयोग नहीं, पत्राचार भी कोई नहीं। देश लौटनेपर मित्रताके नाते कोई-कोई मुझसे मिलने आते थे, उनके साथ राजनीति विषयकी जितनी चर्चा होती उसकी अपेक्षा विशेष आलोचना होती थी अध्यात्मवाद लेकर। मेरी धारणा थी कि आध्यात्मिक शक्ति द्वारा भी देश एवं जातिका अधिकतर कल्याण साधन किया जा सकता। किन्तु सभी आध्यात्मिक शक्ति द्वारा ही देशका उद्धार करें ऐसी कोई प्रलाप-उक्ति मेरी नहीं थी। भारत माताकी सेवाके लिये विप्लववादी तथा कांग्रेसियोंका भी प्रयोजन है। किन्तु आध्यात्मिक शक्तिसम्पन्न व्यक्तियोंका भी प्रयोजन कम नहीं है। आध्यात्मिक जीवनमें ही बहुत बड़ी शक्तिका अनुसंधान पाता हूँ। वह शक्ति मनको समस्त निकृष्ट आकर्षणोंसे विमुक्त कर देती है। विप्लवाद तथा कांग्रेसवादमें उच्चतर शक्तिका कोई अनुसंधान मैं पाया नहीं। उनके अधिकांशोंमें ही देख पायी है कुटिलता एवं संकीर्णता, प्रतिष्ठा लाभकी प्रबल आकांक्षा वा भोगकी भी आकांक्षा।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

पुलिसपुंगव गण मुझे विप्लवी कहके ही समझते थे। भारतके स्वाधीन होनेके पूर्व पर्यन्त पुलिसकी तीक्ष्ण दृष्टि मेरे ऊपर थी। अब जन्मस्थानमें आनेके कुछ ही दिन बादसे ही पुलिसके छोटेसे बड़े तक कर्मचारी मुझे बार-बार थानामें बोलाया करते। मैं किन्तु थाना कभी गया नहीं। विरक्त होकर वे ही मेरे पास आने लगे। पहाड़ जंगलमें जाकर मैं कोई गुप्त दल का संघटन करता या नहीं, बम या रिवालवरका कारखाना निर्माण करता या नहीं यही उनका प्रधान जिज्ञास्य विषय रहता था। साथ-साथ यह भी कि मैं विवाह क्यों नहीं करता, निरामिष भोजन क्यों करता इत्यादि प्रश्न भी करते थे। उनके मुँहसे सुना कि बंगाल पुलिसकी रिपोर्ट पाकर यू० पी० की पुलिस भी हरिद्वार तथा हृषीकेशमें मेरी तलाश की थी। किन्तु कुछ पता नहीं मिला। इसीसे उनका संदेह और भी गहरा हो गया था। उन अहम्मकोंकी बातें सुनकर हँसी आती थी, खेद भी होता था। दो एक व्यक्तिको मजाकमें कहा था—हाँ हिमालयकी गोदमें बैठकर ऐसा बम तैयार करता कि चिद्व्योममें किसी भी शत्रुका अस्तित्व रह पायगा नहीं, यहाँ तक कि दुनियेंका निशान भी रह जाएगा नहीं। यह बात सुनकर वे और भी हैरान हो गये। एक अफसर तो चिद्व्योम शब्दका अर्थ नहीं समझ सकने पर जटिल समस्यामें पड़ गये थे। व्योम शब्द (प्रचलित बंगला भाषामें व्योमका उच्चारण बोमके जैसा होता है। जो बम् से मिलता-जुलता है जिसकी जिज्ञासा तो पुलिसवालोंकी थी ही, किन्तु उसके साथ चिद् शब्द, उपसर्ग रूपसे युक्त रहनेके कारण उसका अर्थ ठीकसे

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

समझमें नहीं आता था) का अर्थ एवं उसकी फरमूला (Formula) विधि-नुस्खा जाननेके लिये उन्हें 'योगवाशिष्ठ' पढ़नेको कहा था। जान सका नहीं कि आखिरमें वे चिद्व्योम शब्दकी क्या व्याख्या किये तथा व्योमकी फरमूला उन्हें मिली या नहीं।

पुलिस मेरी खोज बराबर करती रही, यह समाचार पाकर मेरे चाचा विशेष चिन्तित हो गये। पड़ोसवाले एवं बंधुवर्गके अनेकोंने मेरा संसर्ग त्यागकर दिया। इससे तो मेरे पढ़ने वा साधना करनेमें वरं सुविधा ही हुई। तीन चार महीने तक मैं अपने जन्मस्थानमें रहा। इसके बीच अधिकांश दिन ही पुलिसकी कड़ी नजरमें रहनी पड़ी थी। पुलिसकी ऐसी कड़ी नजर रहनेका एक रहस्यजनक कारण भी था। पड़ोसके किसी परिवारके साथ मेरे पूर्व पुरुषोंका धन-संपत्ति लेकर झगड़ा था। झगड़ेमें वे जीत सके नहीं। अनेकों मुकदमेमें वे पराजित हो चुके थे। अकालमें अर्थात् खूब कम उमरमें मेरे ताऊ एवं पिताकी मृत्युके बाद वे मेरे ऊपर अत्याचारकर प्रतिशोध (बदला) लेनेका मौका पाये। इसीसे वे झूठी रिपोर्ट पुलिसको दिया करते थे। उसी परिवारका एक व्यक्ति पुलिसका गुप्तचर भी हुआ था। इसीसे उसके उत्पातसे कोई भी शिक्षित युवक उस समय देशमें रह नहीं पाता था। कई एक व्यक्ति देउली एवं हिंजलीमें कैदी-जीवन यापन किये थे। उसका कोई रिश्तेदार वा दोस्त पुलिस कर्मचारी था। वही हमेशा मेरे विरुद्ध झूठी रिपोर्ट करता था। पीछे मेरे उस खेलनेके मैदानमे आश्रम तैयार हो जाने पर वही व्यक्ति मेरे आश्रममें एक पुराना तमंचा (रिवालवार)

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

रखके पुलिससे पकड़वानेकी चेष्टाकी थी, किन्तु सफलता हुई नहीं। उसका और भी कई प्रकारका इतिहास है। किन्तु मैं अब इसके आगे उसका क्रिया-कलाप लिखनेसे निरस्त होता हूँ। किन्तु तथापि मैं समय-समयमें विपद् ग्रस्त क्रान्तिकारियोंको अपने घर वा आश्रममें आश्रय दिया करता था।

तीन चार महीनेमें मेरे चाचाजी थोड़ा बहुत स्वस्थ हुए। मैं तब उनसे विदाई मांगी। वे छलछलाती आँखोंसे बोले—'तुम जहां कहीं भी रहो किन्तु मेरी मृत्युके समय मेरे पाश आ जाओ'। वे और भी बोले—जीवित रहनेपर जगत्के किसी स्थानमें तो रहना ही होगा, तो तुम जहाँ तहाँ भिखारी जैसे रहते इससे मैं कष्ट पाता हूँ—जो खेलनेका मैदान तुम्हें लड़काईसे अच्छा लगता आया है उसीमें तुम अपना आश्रम तैयारकर रहो न क्यों? तुमको भी अनेक जगहों में भटकनेका कष्ट उठाना नहीं पड़ेगा, हम लोग भी रोग शोक कष्ट एवं मृत्युकालमें तुमको अपने समीप पायंगे। वे और भी कहने लगे कि वे मुझे विवाह करने अथवा संसारी होनेके लिये अतः पर कोई आग्रह नहीं करेंगे। कारण यह कि वे मेरे जीवनका महान् उद्देश्य-को समझ पाये थे। कुल (वंश) में कोई एक साधक होनेसे उसके ऊपरके सातपुरुष एवं नीचेके सातपुरुष उसके पुण्यसे पुण्य-वान् हो जाते हैं—इत्यादि। उनकी बात मेरे हृदयमें रेखापात (लकीर) कर दिया, तो भी भय हुआ कि संसारके सान्निध्यमें रहनेसे दुनियावी कामोंको संभालना होगा, जिसमें शत्रु और मित्र दोनों आ पड़ेंगे।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

संसारका मार्ग काँटेसे भरा है, जहाँ सबको खुश रखना सर्वथा असंभव है। एक बार मोहगर्त्तमें गिर जानेपर सहसा उस अंधकार से दिव्य प्रकाशमें आना कठिन है। पीछे मेरे चाचाजीके कातर अनुरोधसे वहाँ आश्रम बनाकर मैं अपने जीवनमें भूल ही की थी। अवश्य, आश्रम करके भी मैं दो-तीन महीनेसे अधिक कभी भी वहाँ रहा नहीं। तो भी याद आती कि इतना भी संयोग रखनेके कारण बादमें उन लोगोंके अनेक सुख दुःखका भागी होना पड़ा था। जीवनके गंतव्यपथ एवं दृष्टिकोणसे उन्होंसे मुझे बहुत ही विभिन्नता थी। तब इतना तो अवश्य कहना होगा कि वहाँ आश्रम नहीं बनाने से हमारे पैतृक संपत्तियोंको दायित्वज्ञान विहीन मेरा छोटा सहोदर भाई नष्टकर देता एवं एक बड़ा परिवार निराश्रित होकर बाट-घाटमें भटकता फिरता। यह तो माँ की ही मानों इच्छा थी इसीसे संसारका त्यागकर फिर भी संसारके संस्रवमें आना पड़ा था। ये सब बातें द्वितीय खंडमें विस्तृत रूपसे लिखी जायँगी। जो कुछ हो सबोंकी पाँवकी धूली शिरपर रख, सबोंकी आँखोंके आँसू देखते-देखते फिर घर छोड़कर बाहर निकल पड़ा।

दुर्गापूजा आगतप्राय। श्री श्रीठाकुर तब कलकत्ता (वराह नगर) पहुँच चुके थे। दुर्गतिहरा दुर्गा भीतरसे पेंग देने लगी। सारी अन्तर-प्रकृति माँ-माँ बोलकर रो पड़ी। संसार व्यामोह तथा राज-नीति तो बहुत दूर पीछे पड़ी रह गयी। जीवनवीणामें बजने लगा दिव्य जगत्का सुर। वराह नगरमें इस बार अनेक भक्तोंका समा-गम हुआ। साधन-समर ग्रन्थका डंका बंगालकी चहुँ ओर बज गया

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

इसीसे मधुलुब्ध भ्रमरके जैसे भक्तगण श्रीगुरुके समीप जुट गये थे। मधुमय माताको पायँगे, अपने जीवनको मधुमय करेंगे यही उनकी अभिलाषा। किसीके मुख (चेहरे) पर आशाका चिह्न, किसीके मुखपर आशंका (संदेह) का चिह्न। कोई तो जीवनकी थोड़ी-सी दुर्बलता देखकर ही त्रस्त और कोई जीवनके असंख्य पापोंके चित्रको भी तुच्छ गणना करता। आत्मज्ञानी गुरुके निकट बैठकर ब्रह्ममयीको देखनेकी ब्रह्ममयीको प्राप्त करनेकी ही उनकी आन्तरिक अभिलाषा थी। वर्द्धमानसे कवि एवं गायक गोविन्दलाल भैया इस बार भी पधारे हैं। वे अपने मीठे तीव्र स्वरसे गाये—

सजादे माँ आनन्दमयी,
आनन्दधाम जाने जोग।
(अरी माँ) देख तो कैसा हो गया हूँ,
मायाके अंधकूपमें पड़।

सबोंके हृदय-वीणामें उस गानका भाव और सुर झंकार दी। आँसू भरी आँखोंसे कोई रो दिया और कोई वा आर्तनाद किया। समवेत गलेसे भक्तगण भी गाये—

(अरी माँ) देख तो कैसा हो गया हूँ,
मायाके अंधकूप में पड़।

प्रत्येक ही अपने-अपने जीवनके अतीत चित्रोंको देखने लगे। कवि फिर गाने लगे—

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

कोई संबल नहीं माँ हाथमें,
न कोई साथी माँ जाने साथ में।

पूजा क्षेत्रके एक प्रान्तसे दूसरे प्रान्त तक रोनेकी रोल उठी। मनमें हुआ कि इस कड़ुए विश्वको त्याककर मानो सभी चले किसी नवीन दिव्य राज्यको। जहाँ फूल खिलता लेकिन झड़कर गिरता नहीं, जहाँ हवा बहती किन्तु झंझावात बहता नहीं, जहाँ आकाश निर्मल, उज्ज्वल, स्वच्छ है। जहाँ मनुष्य केवल हँसता ही रहता है रोता नहीं, जहाँ एक मनुष्य दूसरेको प्यार करता, द्वेष करता नहीं, मालूम उसी दिव्यराज्यमें सब कोई चले। इस बार पूजामें गोविन्द-लाल भैयाका गान ही मंत्रका स्थान दखल कर लिया। वे फिर नॅवमी पूजामें गाये—

तू जो मेरी मैं जो तोर,
क्या सुख बढ़के इससे और।

वास्तवमें मालूम होता जैसे सभी एक दिव्य राज्यमें आकर पहुँचे हों। इसीसे माँ की गोदमें बैठकर माँ का गला जकड़के सभी बोलने लगे—तू जो मेरी मैं जो तोर। विरहके पश्चात् यह मिलनकी पुण्य-स्मृति बहुत ही तृप्तिदायक बोध हुई। ऋषिके चरण तले बैठकर सभी नया जीवन लाभ किये।

पूजा समाप्त हो गई। सबोंके अन्तर भावसे परिपूर्ण किन्तु यह भाव ही तो जीवनका सब कुछ है नहीं। सामयिक उच्छ्वास जो

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

कुछ प्राप्त होता वही तो जीवनका मूलधन नहीं हो सकता है। समाहित होकर दीर्घकाल तक उस माताके साथ जुड़कर रहना होगा। सिर्फ जुड़ना ही नहीं मग्न होना होगा, डूबना होगा।

पूजाके बाद मेरा पहलेका संकल्पके अनुसार मैं अब विंध्याचल (चुनार) चला। सब कुछ पीछे पड़ा रह गया। कुटिल राजनीति भूल गया। कुटिल राजनीति एवं भारत माताकी सेवा तथा नरनारायणकी सेवा वास्तवमें एक बात नहीं है। राजनीतिको भूल गया, राजनीतिके पथका भी त्याग किया किन्तु पराधीन इस देश माताकी शृंखला भारको छिन्न करना होगा इस बातको भूल सका नहीं। मैं अपनी तपस्याके द्वारा केवल अपनी ही मुक्तिका साधन करूँगा नहीं, देश माताकी सिकड़ भी खोल फेकूँगा। देश तो माँ की ही प्रतिमूर्त्ति है। देश मेरे अन्तरका प्रतिबिम्ब है। अतएव देशकी पराधीनता, माँ की ही पराधीनता वा मेरे अन्तरकी ही पराधीनता है। मैं माँ ी सीकरको तोड़कर माँ को उन्मुक्त करनेका भी कृतसंकल्प हो गया। मैं स्वयं मुक्त होऊँगा, माँ की जंजीर काट दूंगा, जिससे अन्तर तथा बाहर दोनों की ही मुक्ति हो जायगी। मैं अपने मुक्ति मंदिरके सिद्धपीठ विंध्याचलमें तपस्या करनेको चला, जहाँ राजा सुरथ एवं समाधि वैश्य तपस्याकर एकने नष्ट राज्यको लाभ किया था दूसरेने विदेह कैवल्य लाभकर कृत कृत्य हो गया था। मैं एक साथ ही दोनों प्राप्त करूँगा। पराधीन भारत माताको सीकरसे छोड़ाऊँगा, स्वयं कैवल्य लाभकर कृतार्थ हो जाऊँगा।

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

माऽहं ब्रह्मनिराकुर्यां, मा मा ब्रह्मनिराकरोत्
अनिराकरणमस्तु, अनिराकरणं मेऽस्तु ।
तदात्मनि निरते य उपनिषत्सु धर्माः
ते मयि सन्तु, ते मयि सन्तु ।

ॐ शान्तिः हरिः ॐ

❈ प्रथम खण्ड समाप्त ❈

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi

Digitization by eGangotri and Sarayu Trust. Funding by MoE-IKS

देवसंघ मन्दिरसे प्रकाशित धर्मपुस्तक

श्री श्रीबाबा नरेन्द्रनाथ ब्रह्मचारीजी प्रणीत

१—**हैमवती दर्शन** (बंगला तथा हिन्दी)—इसमें उपनिषद्की कथा-पर ब्रह्मका इन्द्रको हैमवती देवी रूपसे दर्शन देनेकी है। साधनाका अपूर्व ग्रन्थ है। मूल्य १)

२—**मंत्र और पूजा रहस्य**—मंत्र चैतन्य होकर देवता किस प्रकार जाग्रत होते एवं प्रसन्न होकर किस प्रकार अभीष्ट फल प्राप्त होता है उसीकी विधि लिखी है। मूल्य २)

३—**सत्यका पथ**—वा मैं कौन हूँ इसका अनुसंधान, अपनी आत्माकी उपलब्धि कैसे हो। आत्मासे परमात्माका कैसा संबंध है। मूल्य १)

४—**ब्रह्मर्षि श्री सत्यदेव** (बंगला)—साधन-समर ग्रन्थके प्रणेता की अपूर्व जीवन कथा। मूल्य १।।)

५—**प्रतिमामें प्राण प्रतिष्ठा**—प्रतिमामें किस विधिसे प्राण प्रतिष्ठा करनेसे प्रतिमामें चेतना होती है जिससे साधकको अभीष्ट सिद्धि होती है। मूल्य १)

६—**दश महाविद्या कौन ?** मूल्य ।।)

७—**नव दुर्गा कौन ?** मूल्य ।।)

८—**आशाकी वाणी**—प्रवेशार्थीके लिये मूल्य ⁻)

प्राप्तिस्थान

देवसंघ मंदिर। बोमपास टाउन

पो० देवसंघ। भाया वैद्यनाथ-देवघर

(एस० पी० बिहार)

सरला प्रेस, वाराणसी। फोन : ३१९२०

CC0. In Public Domain. Sri Sri Anandamayee Ashram Collection, Varanasi